दादू दयाल की बानी

[जीवन चरित्र सहित]

पहिला भाग

मुद्रक व प्रकाशक
विडियर प्रिंटिंग वर्क्स, इलाहाबाद।
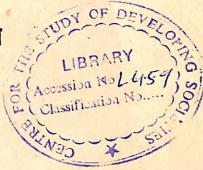
सन् १६६२]

दादू दयाल की बानी

[जीवन चरित्र सहित]

पहिला भाग

मुद्रक व प्रकाशक
बेलविडियर प्रिंटिंग वर्क्स, इलाहाबाद।

सन् १९६३]

[मूल्य ३)]

दादू दयाल का जीवन-चरित्र

॥ जन्म समय ॥

दादू दयाल का जन्म फागुन सुदी अष्टमी बृहस्पतिवार बिक्रमी सम्बत १६०१ को मुताबिक ईसवी सन् १५४४ के हुआ था अर्थात कबीर साहिब के गुप्त होने के छब्बीस बरस पीछे। इसमें सब की सम्मति है।

॥ जन्म स्थान ॥

उनका जन्म स्थान दादू-पंथी गुजरात देश के अहमदाबाद नगर को बतलाते हैं और यही पंडित चन्द्रिका प्रसाद त्रिपाठी और पादरी जॉन टॉमस ने निर्णय किया है यद्यपि महामहोपाध्याय पंडित सुधाकर द्विवेदी ने उसे जौनपुर ठहराया है जो बनारस के विभाग का एक पुराना नगर है। कितनी ही बातें ऐसी हैं जिनसे जान पड़ता है कि पं० सुधाकर जी का अनुमान ठीक नहीं है और दादू साहिब अवश्य गुजरात देश के थे—जैसे उनकी साखी और पदों की बोल चाल और मुहावरे जिनमें गुजराती ढंग और लफ़्ज़ दरसते हैं, और अनेक सच्ची या खिचड़ी गुजराती भाषा के पद और यह बात कि पूरबी बोली जैसी कि कबीर साहिब, रैदासजी, भीखाजी वगैरह की बाणी में पाई जाती है दादू जी की बाणी में नहीं है।

॥ जाति ॥

दूसरा विषय झगड़े का दादू दयाल की जाति है। दादू-पंथी उनको गुजराती ब्राह्मण बतलाते हैं। पं० सुधाकरजी ने इनको मोची लिखा है जो मोठ बनाने का काम करते थे और संसारी नाम इनका महाबली बतला कर प्रमाण में यह साखी गुरुदेव के अंग के ३३ नम्बर की दी है—

साचा समरथ गुर मिल्या, तिन तत दिया बताय।
दादू मोट महाबली, सब घृत मथि कर खाय॥

[गुजराती भाषा में मोट वा मोटा बड़े और श्रेष्ठ को कहते हैं और महाबली का अर्थ संस्कृत में अति बलवान या पोढ़ा है] पादरी जॉन टॉमस ने इन की जाति धुनिया लिखी है और ऐसा ही सर्व-साधारण में प्रसिद्ध है। हम को इस बात के निश्चय करने का न तो अवसर है और न उसकी आवश्यकता जान पड़ती, क्योंकि पहिले तो दादू जी सरीखे भारी गति के महात्मा और भक्त की महिमा न तो ऊँची जाति के ब्राह्मण होने से बढ़ती है और न नीची जाति के मोची या मुसलमान बेहना होने से घटती है जैसा कि कहा है–जाति पाँति

पूछे नहि कोइ। हरि को भजे सो हरि का होइ।—आँख खोलकर देखा जावे तो विशेष कर पिछले सन्त और साध जैसे कबीर साहिब, रैदास जी इत्यादि; और भक्त जैसे बाल्मीक (डोमड़ा, श्री कृष्णावतार के समय में) और दूसरे वाल्मीक (बहेलिया, संस्कृत रामायण के ग्रंथ करता) और सदना (कसाई); और जोगेश्वर ज्ञानी जैसे नारद और व्यास आदि ने नीची ही जाति में जन्म लिया जिनकी कीर्त्ति का झंडा आज तक संसार में फहरा रहा है और सदा फहराता रहेगा।

दादू पंथी दादू दयाल के प्रगट होने का भेद इस तरह बतलाते हैं कि एक टापू में कुछ योगी भगवत भजन करते थे, उन में से एक योगी को आकाश-वाणी द्वारा आज्ञा हुई कि तुम भारतवर्ष में जाकर जीवों को चिताओ। इस आज्ञा के अनुसार वह योगिराज बिचरते हुए जब अहमदाबाद में पहुँचे तो वहाँ लोदीराम नागर ब्राह्मण से भेंट हुई जिसको बेटे की बड़ी अभिलाषा थी, उसने योगी से बर माँगा कि हम को लड़का हो। योगी ने कहा कि बड़े तड़के साबरमती नदी के तट पर जाओ वहाँ तुम्हारी इच्छा पूरण होगी। जब लोदीराम जी दूसरे दिन सवेरे वहाँ पहुँचे तो एक बच्चा नदी में बहता हुआ मिला जिसे लोदीराम निकाल कर घर लाये और पाला। (यह कथा कबीर साहिब की उत्पत्ति की कथा से पूरी भाँति से मिलती है जिन्हें काशी के लहरतारा नामक तालाब में बहते हुए नीरू जुलाहे ने पाया था और अपना बेटा बनाया) दादू पंथियों का निश्चय है कि उन्हीं योगी जी ने योग बल से अपनी काया बदल कर बच्चे का रूप धारण कर लिया और दादू दयाल बने, इसके प्रमाण में यह साखी दादू जी की बतलाते हैं—

सबद बँधाना साह के, तार्थें दादू आया।
दुनियाँ जीवी बापुड़ी, सुख दरसन पाया॥

जो कहावत आमतौर पर दादू साहिब के धुनिया होने की मशहूर है वह भी बेबुनियाद नहीं मालूम होती। हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने लिखा है कि यह बात जो प्रसिद्ध है कि दादू साहिब धुनिया थे उसका कहीं कहीं लेख भी पाया जाता है और दादू पंथी स्वीकार करते हैं कि कुछ दिन दादू जी ने साँभर या आमेर में लोक दिखावे के लिये धुना का उद्यम किया था जिसमें लोग उन को घृणा से देखें और पास न आवैं।

॥ गुरु ॥

पंडित सुधाकर द्विवेदी जी ने लिखा है कि दादू जी के गुरू कमाल थे जो

कबीर साहिब के मुख्य चेलों में से थे और जिनको कितने लोग कबीर साहिब का बेटा बतलाते हैं। दादू साहिब की बाणी में कहीं से उनके गुरू का नाम नहीं खुलता परन्तु कबीर साहिब की उन्होंने जगह जगह महिमा की है और कहीं कहीं साखियाँ भी कबीर साहिब की दी हैं जिन्हें क्षेपक न कहना चाहिये, पर उन के कमाल के शिष्य होने का प्रमाण कहीं नहीं मिलता। पं० सुधाकर जी के अनुसार दादू नाम कमाल का ही धरा हुआ है क्योंकि दादू जी छोटे बड़े सब को "दादा" पुकारा करते थे इसलिए कमाल ने उनका नाम दादू रक्खा।

जनगोपाल ने लिखा है कि दादू जी की अवस्था ग्यारह बरस की होने पर परम पुरुष ने एक बूढ़े साधू के भेष में उनको दर्शन दिया जब कि दादू जी लड़कों में खेल रहे थे और उनको पान का एक बीड़ा खिलाकर मस्तक पर हाथ धरा और परमार्थ का गुप्त भेद देना चाहा जिसे बाल बुद्धि से दादू जी ने न लिया। सात बरस पीछे वही बूढ़े बाबा फिर मिले और दादू जी की बहिर्मुख वृत्ति को दया दृष्टि से अंतरमुख करके उपदेश दिया। उसी दिन से दादू जी भगवत भजन में तत्पर हो गये और इसीलिये जनगोपाल ने दादू साहिब के गुरू का नाम "वृद्ध बाबा" लिखा है जो सुंदरदास जी के लिखे हुए नाम "वृद्धानन्द" से मिलता है। पं० जगजीवन जी के लेख के अनुसार भी साक्षात परमेश्वर ही दादू साहिब के गुरू थे और इसके प्रमाण में उन्होंने यह साखी दादू साहिब की दी है

[दादू] गैब माँहि गुरुदेव मिल्या। पाया हम परसाद।
मस्तकि मेरे कर धर्‌या। दृष्या अगम अगाध ॥

॥ दयाल का बिशेषण ॥

दादू जी का क्षमा और दया का अंग इतना बड़ा था कि दादू "दयाल" के नाम से लोग उनको पुकारने लगे। इसके दृष्टान्त में कहा जाता है कि एक बार एक क़ाज़ी जिसकी गोष्ठी दादू जी के साथ हो रही थी ऐसा झुँझला उठा कि उन के मुँह पर एक घूँसा मारा परन्तु दादू जी क्रोध करने के बदले बड़ी शांति से मुँह आगे करके बोले कि भाई एक और मार ले जिस पर काजी बहुत लज्जित हुआ। ऐसे ही किसी समय में वह समाधि में बैठे थे, कुछ ब्राह्मणों ने जो उनसे बिरोध रखते थे उनको ईंटों से घेर कर बंद कर दिया। जब उनकी आँख खुली तो निकलने का रास्ता न पाकर फिर ध्यान में बैठ

गये और इस अवस्था में कई दिन तक रहे। अंत को आस पास के सभ्य जनों को यह हाल मिला तो उन्होंने आकर ईंटों को हटाया और बदमाशों को दंड देना चाहा परंतु दयाल जी ने यह कह कर बरजा कि ऐसे लोग जिनकी करतूत से हमारा भगवंत के चरणों से अधिक काल तक मेला रहा वह धन्यवाद पाने के योग्य हैं न कि दंड के!

॥ अकबर शाह सहकाली ॥

दादू साहिब का जीवन पूरा पूरा अकबर बादशाह के राज्य समय में था। अकबर के पैदा होने के एक बरस पीछे अर्थात विक्रमी सम्बत १६०१ में इन्होंने जन्म लिया और उसके मरने के दो बरस पहिले अर्थात १६६० के जेठ बदी अष्टमी शनिवार को अट्ठावन बरस ढाई महीने की अवस्था में चोला छोड़ा। कहते हैं कि सम्बत १६४२ में दादू दयाल की मुलाकात फतेहपुर सीकरी में अकबर शाह के साथ पहिले पहिल हुई जिस में अकबर ने उनसे सवाल किया कि खुदा की जात, अंग, वजूद और रंग क्या है, इस पर दादू जी ने यह जवाब दिया—

[दादू] इसक अलह की जाति है, इसक अलह का अंग।
इसक अलह औजूद है, इसक अलह का रंग॥

(देखो बिरह अंग की साखी न० १५२ पृष्ठ ४०)

॥ रामत (देशाटन) ॥

दादू साहिब के पहिले २६ बरस का हाल नहीं मिलता पर सम्बत १६३० में वह साँभर आये और वहाँ अनुमान छः बरस रहे। फिर आँबेर को गये जो जैपुर राज्य की पुरानी राजधानी थी और वहाँ चौदह बरस के लगभग रहे। सम्बत १६५० से १६५६ तक जैपुर, मारवाड़, बीकानेर आदि राज्यों के अनेक स्थानों में बिचरते रहे और फिर सं० १६५६ में नराना में जो जैपुर से २० कोस पर है आकर ठहर गये। वहाँ से तीन चार कोस भराने की पहाड़ी है—यहाँ भी दादू दयाल कुछ काल तक रहे और यहीं से सं० १६६० में चोला छोड़ा इसलिये यह स्थान बहुत पुनीत समझा जाता है, बहुधा साधू वहाँ यात्रा को जाते हैं और कितने साधुओं के फूल भी वहाँ गाड़े जाते हैं।

॥ अखाड़े ॥

इस सम्प्रदाय के बावन प्रसिद्ध अखाड़े हैं और हर एक का महन्त अलग है। यह अखाड़े विशेष कर जैपुर राज्य में हैं और कुछ अलवर, मारवाड़,

मेवाड़, बीकानेर आदि राज्यों में और पंजाब व गुजरात आदि देशों में हैं। काशी में भी दादू-पंथियों का एक अखाड़ा है। सब महन्तों के मुखिया नराना में रहते हैं जहाँ दादू दयाल ने अपने पिछले दिनों में निवास किया था।

॥ भेषों के चिन्ह और रीति और रहनी ॥

इस पंथ में दो प्रकार के साधू पाये जाते हैं एक भेषधारी बिरक्त जो गेरुआ वस्त्र पहिनते हैं और पठन पाठन कथा कीर्तन जप भजन में अपना पूरा समय लगाते हैं; दूसरे नागा जो सफेद सादे कपड़े पहिनते हैं और लेन देन खेती फौज की नौकरी वैद्यक आदि व्यौहार रुपया कमाने के लिये करते हैं। नागों की फौज जैपुर राज्य की मशहूर है जिसमें दस हजार नागा से कम न होंगे।

दोनों प्रकार के साधू ब्याह नहीं करते, गृहस्थी के लड़कों को चेला मूड़ कर अपना बंस और पंथ चलाते हैं।

दादू पंथी साधू कबीर-पंथियों की तरह न तो माथे पर तिलक लगाते और न गले में कंठी पहिनते पर प्रायः हाथ में सुमिरनी रखते हैं। यह लोग सिर पर टोपा या मुरायठ पहिनते हैं और आते जाते समय एक दूसरे से "सत्त राम" कहते हैं। मुरदे को यह लोग चिता लगा कर जला देते हैं पर यह चाल नई निकली है; प्राचीन रीति के अनुसार मुरदे को अरथी या बिमान पर रख कर जंगल में छोड़ आते थे जिसमें पशु पंछी उसका अहार करें। दादू दयाल ने इसी चाल को अपने उपदेश में उत्तम कहा है—

हरि भज साफल जीवना, पर उपगार समाइ।
दादू मरणा तहँ भला, जहँ पशु पंछी खाइ॥
साध सूर सोहैं मैदाना।
उनका नाहीं गोर मसाना॥

मुख्य तीर्थ

नराना में जहाँ दादू-पंथियों की मुख्य गद्दी है एक दर्शनीय मंदिर दादू द्वारा के नाम का है। यहाँ दादू दयाल के रहने और बैठने के निशान अब तक मौजूद हैं और उनके पहिरने के कपड़े हैं और पोथियाँ जिनकी पूजा होती है।

॥ मेला ॥

नराना में फागुन सुदी चौथ से (जिस दिन दादू दयाल वहाँ पहिली बार आये थे) द्वादशी तक नौ दिन भारी मेला हर साल होता है।

॥ इष्ट और मत शिक्षा ॥

दादू साहिब कबीर साहिब की तरह निर्गुण के उपासक थे पर इनका इष्ट ब्रह्मांड का धनी निरंजन निराकार परमेश्वर था उसी को सब में रमने वाला राम कह कर सुमिरन भजन कराते थे। उनके मति की शिक्षा नीचे लिखे हुए बिषयों पर थी—

(१) परमेश्वर की महिमा और उसका सच्चिादनन्द स्वरूप।
(२) उसकी निर्गुण आराधना और अनन्य भक्ति।
(३) उसकी परम उपासना और उसका अजपा जाप।
(४) मन को परम रूप में स्थिर करने के साधन।
(५) परम रूप का ध्यान और धारणा और समाधि।
(६) अनहद बाजे का श्रवण और उसमें मग्न होना।
(७) अमृत बिंदु का पान और परमानंद की प्रीति।
(८) परमेश्वर से अरस परस मिलाप—ब्रह्म का साक्षातकार।

॥ समाज संशोधन ॥

दादू दयाल केवल परमार्थी शिक्षक न थे बरन संसारी चाल व्यवहार और जाति भेद में भी उन्होंने बहुत सुधार किया।

॥ चमत्कार ॥

लिखा है कि एक साल दादू दयाल आँधी नामक गाँव में चौमासे की ऋतु में थे जहाँ वर्षा न होने के कारण जीवों को अति बिकल देखकर उनकी माँग पर भगवंत से प्रार्थना करके दादू जी ने जल बरसाया और अकाल को दूर किया, इसके प्रमाण में यह साखी बतलाते हैं [देखो पृष्ठ ४१, बिरह अंग की १५७ वीं साखी]

आज्ञा अपरंपार की, बसि अंबर भरतार।
हरे पटम्बर पहिरि करि, धरती करै सिंगार॥

॥ बहु भाषा बोध ॥

दादू दयाल कुछ विशेष पढ़े लिखे न थे यद्यपि उनकी साखियों और पदों में अनेक भाषाओं के शब्द मिलते हैं और कितनी ही साखी और पद ठेठ फ़ारसी में हैं। गुजराती तो उनको मातृ भाषा थी ही और मारवाड़ में भी बहुत काल तक रहे थे सो वहाँ की भाषाओं का जानना अचरज नहीं है परंतु उनकी बाणी से पंजाबी, सिंधी, मरहठी और बृज भाषा की भी अच्छी

जानकारी पाई जाती है। जहाँ जहाँ ऐसे शब्द आये हैं उनके अर्थ भर मक़दूर तहक़ीक़ात करके नोट में दिये गये हैं। दादू साहिब ने अपनी बाणी कभी अपने हाथ से नहीं लिखी, उनके पास रहने वाले शिष्य जो कुछ उनके मुख से निकलता था लिख लिया करते थे।

॥ सम्पादक की सूचना ॥

इस पुस्तक को हम ने दो प्राचीन लिपियों से छापा है—एक तो हमको बाबू सत्यनारायण प्रसाद जी स्वर्गवासी काशी राज के तहसीलदार ने अनुमान दस बरस हुए दी थी और दूसरी मास्टर बनवारीलाल जी प्रयाग निवासी से मिली इसलिये हम इन दोनों महाशयों को अनेक धन्यवाद देते हैं। इनके सिवाय तीन पुस्तकें काशी, लाहौर और अजमेर के छापे की हम को मिलीं जिन में से पहिली दो तो बहुत ही अशुद्ध थीं परंतु तीसरी पंडित चंद्रिका प्रसाद की छापी हुई पुस्तक से (यद्यपि कितने एक स्थान में उस के पाठ और टीका से हमने सम्पति नहीं की है) अधिक सहायता मिली जिसके लिये उन को भी धन्यवाद देते हैं। जीवन-चरित्र के लिखने में हम को उन के एक लेख से जो 'प्रथम हिन्दी साहित्य सम्मेलन'' पत्रिका में छपा था बहुत मदद मिली।

हम दादू दयाल की बाणी को दो भाग में छाप रहे हैं क्योंकि पहिले तो साखियों का पदों से अलग रखना जब कि हर एक की संख्या बड़ी है उचित जान पड़ता है, दूसरे इस रीति से पढ़ने वालों को भी हर तरह का सुबोता होगा।

थोड़ी सी साखियाँ ऐसी हैं जो दूसरे अंग में दुहराई हुई हैं परंतु जो कि यह ढंग सर्व हस्तलिखित और छपी पुस्तकों में पाया गया इसलिये हमने भी उसी अनुसार इस पुस्तक में रक्खा है अर्थात जहाँ किसी एक अंग में आई हुई साखी फिर दूसरे अंग में दी है वहाँ पहिले में अंग का और उस साखी का नम्बर (ब्राकट) में दे दिया है- जैसे ''परचा'' के अंग नं० ४ की साखियाँ १४५ व १४६ वही हैं जो बिरह अंग नं० ३ के नं० ७० और ६६ में आ चुकी थीं इसलिये जहाँ वह कड़ियाँ दोहराई गई हैं अर्थात चौथे अंग को १४५ वीं साखी के सामने (३-७०) और १४६ वीं के आगे (३-६६) छाप दिया गया है—देखो पृष्ठ ५५ ॥

सूची अंगों की

दृश्य काँकरिया तालाब (अहमदाबाद)

बाल समय दर्शन दियो, भगवत् वृद्ध होय। नगर अहमदाबाद में, दादू भज तू मोय ॥२

बालक खेलत देख चौगान में वृद्ध रुप प्रभु न बनायो। बाल सफेद कियो तन दीरघ, बाला सें ज्ञान बचन सुनायो ॥

पान पाकसा के हाथ दयो कर होय मुदित तमोल कि खायो। ब्रह्म प्रकाश उदय भयो भाल ज्यूं दादू औतार दुतिमय भायो ॥

और भैभीत ह्वै भाज गये जब, दादू जी दौड़न जी कछु आयो ॥

श्री दादू दयाल जो तथा उपदेष्टा गुरू बृद्धरूप भगवान।

बेलवेडियर प्रेस प्रयाग।

दादू दयाल की बानी

भाग १—साखी

१—गुरुदेव को अंग

॥ बंदना ॥

दादू नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः[1] ॥ १ ॥
परब्रह्म परापरं[2] , सो मम देव निरंजनं ।
निराकारं निर्मलं, तस्य दादू बन्दनं ॥ २ ॥

॥ गुरु महिमा ॥

(दादू) गैब माहिं गुरदेव मिल्या, पाया हम परसाद ।
मस्तक मेरे कर धर्‌या, देख्या अगम अगाध ॥ ३ ॥
दादू सतगुर सहज में, कीया बहु उपगार[3] ।
निरधन धनवँत करि लिया, गुर मिलिया दातार ॥ ४ ॥
(दादू) सतगुर सूँ सहजैं मिल्या, लीया कंठ लगाइ ।
दाया भई दयाल की, तब दीपक दिया जगाइ ॥ ५ ॥
दादू देव दयाल की, गुरू दिखाई बाट ।
ताला कूँची लाइ करि, खोले सबै कपाट ॥ ६ ॥
(दादू) सतगुर अंजन बाहि करि, नैन पटल सब खोले ।
बहरे कानौं सुणने लागे, गूँगे मुख सूँ बोले ॥ ७ ॥
सतगुर दाता जीव का, स्रवन सीस कर नैन ।
तन मन सौंज सँवारि सब, मुख रसना अरु बैन ॥ ८ ॥

---

(१) माया देश के पार पहुँचे हुए । (२) कारण भाव से परे । (३) उपकार ।

राम नाम उपदेस करि, अगम गवन यहु सैन ।
दादू सतगुर सब दिया, आप मिलाये ऐन ॥ ९ ॥
सतगुर कीया फेरि करि, मन का औरै रूप ।
दादू पंचौं पलटि करि, कैसे भये अनूप ॥ १० ॥
साचा सतगुर जे मिलै, सब साज सँवारै ।
दादू नाव चढ़ाइ करि, ले पार उतारै ॥ ११ ॥
(दादू) सतगुर पसु माणस[1] करै, माणस थ[2] सिध सोइ ।
दादू सिध थैं देवता, देव निरंजन होइ ॥ १२ ॥
दादू काढ़े काल मुख, अंधे लोचन देइ ।
दादू ऐसा गुर मिल्या, जीव ब्रह्म करि लेइ ॥ १३ ॥
दादू काढ़े काल मुख, स्रवनहुँ सब्द सुनाइ ।
दादू ऐसा गुर मिल्या, मिरतक लिये जिलाइ ॥ १४ ॥
दादू काढ़े काल मुख, गूँगे लिये बोलाइ ।
दादू ऐसा गुर मिल्या, सुख में रहे समाइ ॥ १५ ॥
दादू काढ़े काल मुख, मिहर दया करि आइ ।
दादू ऐसा गुर मिल्या, महिमा कही न जाइ ॥ १६ ॥
सतगुर काढ़े केस गहि, डूबत इहि संसार ।
दादू नाव चढ़ाइ करि, कीये पैली पार[3] ॥ १७ ॥
भवसागर में डूबताँ, सतगुर काढ़े आइ ।
दादू खेवट गुर मिल्या, लीये नाव चढ़ाइ ॥ १८ ॥
दादू उस गुरदेव की, मैं बलिहारी जाउँ ।
जहँ आसण अमर अलेख था, ले राखे उस ठाउँ ॥ १९ ॥

॥ आतम बोध ॥

आतम माहैं ऊपजै, दादू पंगुल ज्ञान ।
किरतिम[4] जाइ उलंघि करि, जहाँ निरंजन थान ॥ २० ॥

(१) मनुष्य । (२) से । (३) पल्ली पार । (४) कृत्रिम ।

आतम बोध बंझ[1] का बेटा, गुरमुख उपजै आइ ।
दादू पंगुल पंच बिन, जहाँ राम तहँ ज़ाइ ॥ २१ ॥

॥ अनहद शब्द ॥

साचा सहजैं ले मिलै, सबद गुरू का ज्ञान ।
दादू हम कूँ ले चल्या, जहँ प्रीतम (का) अस्थान ॥ २२ ॥
दादू सबद बिचारि करि, लागि रहै मन लाइ ।
ज्ञान गहै गुरदेव का, दादू सहजि समाइ ॥ २३ ॥
(दादू कहै) सतगुर सबद सुणाइ करि, भावै जीव जगाइ ।
भावै अंतर आप कहि, अपने अंग लगाइ ॥ २४ ॥
(दादू) बाहर सारा देखिये, भीतर कीया चूर ।
सतगुर सबदौं मारिया, जाण न पावै दूर ॥ २५ ॥
(दादू) सतगुर मारे सबद सों, निरखि निरखि निज ठौर ।
राम अकेला रहि गया, चीत[2] न आवै और ॥ २६ ॥
दादू हम कूँ सुख भया, साध सबद गुर ज्ञाण ।
सुधि बुधि सोधो समझि करि, पाया पद निरबाण ॥२७॥
(दादू) सबद बान गुर साधि के, दूरि दिसंतरि जाइ ।
जेहि लागे सो ऊबरे, सूते लिये जगाइ ॥ २८ ॥
सतगुर सबद मुख सों कह्या, क्या नेड़े क्या दूर ।
दादू सिष स्रवनहुँ सुणया, सुमिरण लागा सूर ॥ २९ ॥

॥ करनी ॥

सबद दूध घृत राम रस, मथि करि काढ़े कोइ ।
दादू गुर गोबिंद बिन, घट घट समझि न होइ ॥ ३० ॥
सबद दूध घृत राम रस, कोइ साध बिलोवणहार ।
दादू अमृत काढ़ि ले, गुरमुखि गहै बिचार ॥ ३१ ॥

---

(१) बाँझ । (२) चित्त

घीव दूध में रमि रह्या, ब्यापक सबही ठौर ।
दादू बकता बहुत हैं, मथि काढ़ैं ते और ॥ ३२ ॥
कामधेनु घट घीव है, दिन दिन दुरबल होइ ।
गोरू[1] ज्ञान न ऊपजै, मथि नहिं खाया सोइ ॥ ३३ ॥
साचा समरथ गुर मिल्या, तिन तत दिया बताइ ।
दादू मोट[2] महा बली, घट घृत मथि करि खाइ ॥ ३४ ॥
मथि करि दीपक कीजिये, सब घट भया प्रकास ।
दादू दीया[3] हाथ करि, गया निरंजन पास ॥ ३५ ॥
दीयै[3] दीया कीजिये, गुरमुख मारग जाइ ।
दादू अपणे पीव का, दरसण देखै आइ ॥ ३६ ॥
दादू दीया[3] है भला, दिया करो सब कोइ ।
घर में धर्‌या न पाइये, जे कर दिया न होइ ॥ ३७ ॥
(दादू) दीये का गुण ते लहैं[4], दीया मोटी[5] बात ।
दीया जग में चाँदना, दीया चालै साथ ॥ ३८ ॥
निर्मल गुर का ज्ञान गहि, निर्मल भगति बिचार ।
निर्मल पाया प्रेम रस, छूटे सकल बिकार ॥ ३९ ॥
निर्मल तन मन आतमा, निर्मल मनसा सार ।
निर्मल प्राणी पंच करि, दादू लंघे पार ॥ ४० ॥
परा परी पासैं रहै, कोई न जाणै ताहि ।
सतगुर दिया दिखाइ करि, दादू रह्या ल्यौ[6] लाइ ॥ ४१ ॥

॥ जिज्ञासा ॥

प्रश्न—जिन हम सिरजे[7] सो कहाँ, सतगुर देहु दिखाइ ।
उत्तर—दादू दिल अरवाह[8] का, कहँ मालिक ल्यौ[6] लाइ ॥ ४२ ॥

---

(१) गाय । (२) बड़ा । (३) "दीया" या दीवा चिराग़ को कहते हैं जिस का अभिप्राय "ज्ञान" है, और साखी ३७ व ३८ में "दान" का भी अलंकार है । (४) लखैं । (५) बड़ी । (६) लौ । (७) पैदा किया । (८) "अरवाह" बहुबचन अरबी शब्द "रूह" का है जिस का अर्थ जीवात्मा है—आलमे-अरवाह-ब्रह्मांड को कहते हैं ।

मुझ ही में मेरा धणी, पड़दा खोलि दिखाइ ।
आतम सों परआत्मा[1], परगट आणि मिलाइ ॥४३॥
भरि भरि प्याला प्रेम रस, अपणे हाथ पिलाइ ।
सतगुर के सदिकै[2] किया, दादू बलि बलि जाइ ॥४४॥
सरवर भरिया दह दिसा, पंखी[3] प्यासा जाइ ।
दादू गुर परसाद बिन, क्यों जल पीवै आइ ॥४५॥
मानसरोवर माहिं जल, प्यासा पीवै आइ ।
दादू दोस न दीजिये, घर घर कहण न जाइ ॥४६॥

॥ गुरु लक्षण ॥

दादू गुर गरुवा[4] मिलै, ता थैं सब गमि होइ ।
लोहा पारस परसताँ, सहज समाना सोइ ॥४७॥
दीन गरीबी गहि रह्या, गरुवा गुर गंभीर ।
सूषिम[5] सीतल सुरति मति, सहज दया गुर धीर ॥४८॥
सोधी दाता पलक में, तिरै[6] तिरावन जोग ।
दादू ऐसा परम गुर, पाया केहिं संजोग ॥४९॥
(दादू) सतगुर ऐसा कीजिये, राम रस्स माता ।
पार उतारै पलक में, दरसन का दाता ॥५०॥
देवै किरका[7] दरद का, टूटा जोड़ै तार ।
दादू साधै सुरति को, सो गुर पीर हमार ॥५१॥
दादू घाइल ह्वै रहे, सतगुर के मारे ।
दादू अंग लगाइ करि, भवसागर तारे ॥५२॥
दादू साचा गुर मिल्या, साचा दिया दिखाइ ।
साचे कूँ साचा मिल्या, साचा रह्या समाइ ॥५३॥
साचा सतगुर सोधि ले साचे लीजै साध ।
साचा साहिब सोधि करि, दादू भगति अगाध ॥५४॥

(१) परमात्मा । (२) निछावर । (३) पक्षी । (४) भारी, पूरा । (५) सूक्ष्म । (६) तारै । (७) किनका ।

सनमुख सतगुर साध सूँ, साईं सूँ राता ।
दादू प्याला प्रेम का, महा रस्सि माता ॥५५॥
साईं सूँ साचा रहै, सतगुर सूँ सूरा ।
साधू सूँ सनमुख रहै, सो दादू पूरा ॥५६॥
सतगुर मिलै तो पाइये, भगति मुकति भंडार ।
दादू सहजैं देखिये, साहिब का दीदार ॥५७॥
(दादू) साईं सतगुर सेविये, भगति मुकति फल होइ ।
अमर अभय पद पाइये, काल न लागै कोइ ॥५८॥

॥ गुरू बिन ज्ञान नहीं ॥

इक लख चंदा आणि घर, सूरज कोटि मिलाइ ।
दादू गुर गोबिंद बिन, तौ भी तिमर न जाइ ॥५९॥
अनेक चंद उदय करै, असंख सूर परकास ।
एक निरंजन नाँव बिन, दादू नहीं उजास ॥६०॥
(दादू) कदि यहु आपा जाइगा, कदि यहु बिसरै और ।
कदि यहु सूषिम होइगा, कदि यहु पावै ठौर ॥६१॥
(दादू) बिषम दुहेला जीव कूँ, सतगुर थैं आसान ।
जब दरवै तब पाइये, नेड़ा ही अस्थान ॥६२॥

॥ गुरु ज्ञान ॥

(दादू) नैन न देखैं नैन कूँ, अंतर भी कुछ नाहिं ।
सतगुर दरपन करि दिया, अरस परस मिलि माहिं ॥६३॥
घट घट रामहिं रतन है, दादू लखै न कोइ ।
सतगुर सबदों पाइये, सहजैं ही गम होइ ॥६४॥
जबहीं कर दीपक दिया, तब सब सूझन लाग ।
यूँ दादू गुर ज्ञान थैं, राम कहत जन जाग ॥६५॥

॥ अजपा जाप ॥

(दादू) मन माला तहँ फेरिये, जहँ दिवस न परसै रात ।
तहाँ गुरू बाना दिया, सहजैं जपिये तात ॥६६॥

(दादू) मन माला तहँ फेरिये, जहँ प्रीतम बैठे पास ।
अगम गुरू थैं गम भया, पाया नूर निवास ॥६७॥
(दादू) मन माला तहँ फेरिये, जहँ आपै एक अनंत ।
सहजैं सो सतगुर मिल्या, जुग जुग फाग बसंत ॥६८॥
(दादू) सतगुर माला मन दिया, पवन सुरति सूँ पोइ ।
बिन हाथों निस दिन जपै, परम जाप यूँ होइ ॥६९॥
(दादू) मन फकीर माहैं हुआ, भीतर लीया भेख ।
सबद गहै गुरदेव का, माँगै भीख अलेख ॥७०॥
(दादू) मन फकीर सतगुर किया, कहि समझाया ज्ञान ।
निहचल आसणि बैसि करि, अकल[1] पुरुस का ध्यान ॥७१॥
(दादू) मन फकीर जग थैं रह्या, सतगुर लीया लाइ ।
अहि निसि लागा एक सूँ, सहज सुन्न रस खाइ ॥७२॥
(दादू) मन फकीर ऐसे भया, सतगुर के परसाद ।
जहँ का था लागा तहाँ, छूटे बाद बिबाद ॥७३॥
ना घरि रहा न बन गया, ना कुछ किया कलेस ।
दादू मन हीं मन मिल्या, सतगुर के उपदेस ॥७४॥
(दादू) यहु मसीत[2] यहु देहुरा[3], सतगुर दिया दिखाइ ।
भीतरि सेवा बंदगी, बाहरि काहे जाइ ॥७५॥
(दादू) मंझे चेला मंझि गुर, मंझे ही उपदेस ।
बाहरि ढूँढै बावरे, जटा बँधाये केस ॥७६॥

॥ भरमी मन का दमन ॥

मन का मस्तक मूँडिये, काम क्रोध के केस ।
दादू बिषै बिकार सब, सतगुर के उपदेस ॥७७॥
दादू पड़दा भरम का, रहा सकल घटि छाइ ।
गुरु गोबिंद किरपा करैं, तौ सहजैं हीं मिटि जाइ ॥७८॥

---

(१) अमर । (२) मसजिद । (३) मंदिर ।

॥ सूक्ष्म मार्ग ॥

(दादू) जेहि मति साधू ऊधरै, सो मति लीया सोध ।
मन लै मारग मूल गहि, यहु सतगुर का परमोध ॥७९॥
(दादू) सोई मारग मन गह्या, जेहिं मारग मिलिये जाइ ।
बेद कुरानूँ ना कह्या, सो गुर दिया दिखाइ ॥८०॥

॥ जीव की बेबसी—मन के रोकने का जतन गुरु-सरन ॥

मन भुवंग यहु बिष भरया, निरबिष क्योंहि न होइ ।
दादू मिल्या गुर गारुड़ी[1], निरबिष कीया सोइ ॥८१॥
एता कीजै आप थैं, तन मन उनमुनि लाइ ।
पंच समाधी राखिये, दूजा सहज सुभाइ ॥८२॥
(दादू) जीव जँजालों पड़ि गया, उलझ्या नौ मण सूत ।
कोइ इक सुलझै सावधान, गुर बायक[2] अवधूत[3] ॥८३॥
चंचल चहुँ दिसि जात है, गुर बायक[2] सूँ बंधि ।
दादू संगति साध की, पारब्रह्म सूँ संधि[4] ॥८४॥
गुर अंकुस माणै नहीं, उद्मत[5] माता[6] अंध ।
दादू मन चेतै नहीं, काल न देखै फंध ॥८५॥
(दादू) मारयाँ बिन मानै नहीं, यह मन हरि को आन ।
ज्ञान खड़ग गुरदेव का, ता सँग सदा सुजान ॥८६॥
जहाँ थैं मन उठि चलै, फेरि तहाँ ही राखि ।
तहँ दादू लय लीन करि, साध कहैं गुर साखि ॥८७॥
(दादू) मनहीं सूँ मल ऊपजै, मनहीं सूँ मल धोइ ।
सीख चलै गुर साध की, तौ तूँ निर्मल होइ ॥८८॥
(दादू) कच्छिब[7] अपने करि लिये, मन इन्द्री निज ठौर ।
नाँइ[8] निरंजन लागि रहु, प्राणी परिहरि[9] और ॥८९॥

(१) साँप का जहर झाड़ने वाला, गुनी । (२) बायक=वाक्य । (३) त्यागी, नागा । (४) मेला । (५) क्रोधी । (६) मतवाला । (७) कछुवा । (८) नाम । (९) त्याग कर ।

मन के मते सब कोइ खेलै, गुरमुख बिरला कोइ ।
दादू मन की मानै नहीं, सतगुर का सिष सोइ ॥ ९० ॥

सब जीवन कूँ मन ठगै, मन कूँ बिरला कोइ ।
दादू गुर के ज्ञान सूँ, साईं सनमुख होइ ॥९१॥

(दादू) एक सूँ, लयलीन हूणाँ, सबै सयानप येह ।
सतगुर साधू कहत हैं, परम तत्त जपि लेह ॥ ९२ ॥

सतगुर सबद बिबेक बिन, संजम रह्या न जाइ ।
दादू ज्ञान बिचार बिन, बिषै हलाहल खाइ ॥९३॥

घर घर घट कोल्हू चलै, अमी महा रस जाइ ।
दादू गुर के ज्ञान बिन, बिषै हलाहल खाइ ॥ ९४ ॥

॥ मनमुख अंग का निषेध ॥

सतगुर सबद उलंघि करि, जिनि कोई सिष जाइ ।
दादू पग पग काल है, जहाँ जाइ तहँ खाइ ॥९५ ॥

सतगुर बरजै सिष करै, क्यों करि बंचै काल ।
दह दिसि देखत बहि गया, पानी फोड़ी पाल ॥ ९६ ॥

(दादू) सतगुर कहै सो सिष करै, सब सिधि कारज होइ ।
अमर अभय पद पाइये, काल न लागै कोइ ॥ ९७ ॥

(दादू) जे साहब कूँ भावै नहीं, सो हम थैं जिनि होइ ।
सतगुर लाजै आपणा, साध न मानै कोइ ॥ ९८ ॥

(दादू) हूँ की ठाहर है कहौ, तन की ठाहर तूँ ।
री की ठाहर जी कहौ, ज्ञान गुरू का यूँ ॥ ९९ ॥[1]

(दादू) पंच सवादी[2] पंच दिसि, पंचे पंचौं बाट ।
तब लग कहा न कीजिये, गहि गुरू दिखाया घाट ॥१००॥

---

(१) किसी गवैये को समझौती देने के लिये यह साखी कही गई थी । (२) रस लेने वाली अर्थात् ज्ञान इंद्रियाँ ।

दादू पंचौं एक मति, पंचौं पूर्‌या साथ ।
पंचौं मिलि सनमुख भये, तब पंचौं गुर की बात ॥१०१॥
(दादू) ताता लोहा तिणे[1] सौं, क्यों करि पकड्या जाइ ।
गहन गती सूझै नहीं, गुर नहिं बूझै आइ ॥१०२॥

॥ गुरुमुख अंग की महिमा ॥

(दादू) औगुण गुण करि मानै गुर के, सोई सिष्य सुजाण ।
सतगुर औगुण क्यों करै, समझै सोई सयाण ॥१०३॥
सोने सेती बैर क्या, मारै घन के घाइ[2] ।
दादू काटि कलंक सब, राखै कंठि लगाइ ॥१०४॥
पाणी माहीं राखिये, कनक कलंक न जाइ ।
दादू गुर के ज्ञान सौं, ताइ अगनि में वाहि ॥१०५॥
(दादू) माहैं मीठा हेत करि, ऊपर कड़वा राखि ।
सतगुर सिष कूँ सीख दे, सब साधौं की साखि ॥१०६॥
(दादू कहै) सिष्य भरोसै आपणे, ह्वै बोली हुसियार ।
कहैगा सो बहैगा, हम पहली करैं पुकार ॥१०७॥
(दादू) सतगुर कहै सो कीजिये, जे तूँ सिष्य सुजाण ।
जहँ लाया तहँ लागि रहु, बूझै कहा अजाण ॥१०८॥
गुर पहली मन सों कहै, पीछे नैन की सैन ।
दादू सिष समझै नहीं, कहि समझावै बैन ॥१०९॥
कहे लखै सो मानवी[3] , सैन लखै सो साध ।
मन की लखै सो देवता, दादू अगम अगाध ॥११०॥

॥ साकट निकृष्ट जीव ॥

(दादू) कहि कहि मेरी जीभ रही, सुणि सुणि तेरे कान ।
सतगुर बपुरा क्या करै, जो चेला मूढ़ अजान ॥१११॥
एक सबद सब कुछ कह्या, सतगुर सिष समझाइ ।
जहँ लाया तहँ लागै नहीं, फिरि फिरि बूझै आइ ॥११२॥

---

(१) तिनका सा नन्हा । (२) घाव, चोट । (३) जीव या साधारण मनुष्य ।

ज्ञान लिया सब सीखि सुणि, मन का मैल न जाइ।
गुरू बिचारा क्या करै, सिष बिषै हलाहल खाइ ॥११३॥
सतगुर की समझै नहीं, अपणै उपजै नाहिं।
तौ दादू क्या कीजिये, बुरी बिथा मन माहिं ॥११४॥

॥ अनाड़ी और पाखंडी गुरू ॥

गुर अपंग पग पंख बिन, सिष साखा का भार।
दादू खेवट नाव बिन, क्यूँ उतरैंगे पार ॥११५॥
दादू संसा जीव का, सिष साखा का साल।
दोनों कूँ भारी पड़ी, ह्वैगा कौण हवाल ॥११६॥
अंधे अंधा मिलि चले, दादू बंधि कतार।
कूप पड़े हम देखताँ, अंधे अंधा लार ॥११७॥
सोधी नहीं सरीर को, औरौं कूँ उपदेस।
दादू अचरज देखिया, ये जाहिंगे किस देस ॥११८॥
(दादू) सोधी नहीं सरीर की, कहैं अगम की बात।
जान[१] कहावें बापुड़े, आवध लीये हाथ[१] ॥११९॥
(दादू) माया माहैं काढ़ि करि, फिरि माया में दीन्ह।
दोऊ जन समझैं नहीं, एकौ काज न कीन्ह ॥१२०॥
(दादू) कहै सो गुर किस काम का, गहि भरमावै आन।
तत्त बतावै निर्मला, सो गुर साध सुजान ॥१२१॥
तू मेरा हूँ तेरा, गर सिष किया मंत।
दोनों भूले जात हैं, दादू बिसर्या कंत ॥२२॥
दुहि दुहि पीवै ग्वाल गुर, सिष है छेली[२] गाइ।
यहु अवसर यौं ही गया, दादू कहि समझाइ ॥१२३॥
सिष गोरू गुर ग्वाल है, रच्छा करि करि लेइ।
दादू राखै जतन करि, आणि धणी कूँ देइ ॥१२४॥

(१) बेचारे अपने को सुजान कहते हैं पर मौत की ख़बर नहीं। (२) छेरी, बकरी।

झूठे अंधे गुर घने, भरम दिढ़ावैं आइ।
दादू साचा गुर मिलै, जीव ब्रह्म ह्वै जाइ ॥१२५॥
झूठे अंधे गुर घणे, बंधे बिषय बिकार।
दादू साचा गुरु मिलै, सनमुख सिरजनहार ॥१२६॥
झूठे अंधे गुर घणे, भरम दिढ़ावैं काम।
बंधे माया मोह सौं, दादू मुख सौं राम ॥१२७॥
झूठे अंधे गुर घणे, भटकैं घर घर बारि।
कारज को सीझै नहीं, दादू माथै मारि ॥१२८॥
(दादू) भगत कहावैं आप कूँ, भगति न जाणैं भेव।
सुपने हीं समझैं नहीं, कहाँ बसै गुरदेव ॥१२९॥

॥ कर्म भर्म का निषेध ॥

भरम करम जग बंधिया, पंडित दिया भुलाइ।
दादू सतगुर ना मिलै, मारग देइ दिखाइ ॥१३०॥
(दादू) पंथ बतावैं पाप का, भरम करम बेसास[1]।
निकट निरंजन जे रहै, क्यों न बतावै तास ॥१३१॥
दादू आपा उरझै उरझिया, दीसै सब संसार।
आपा सुरझै सुरझिया, यहु गुर ज्ञान बिचार ॥१३२॥

॥ गुरुमुख कसौटी ॥

साधू का अंग निर्मला, ता में मल न समाइ।
परम गुरू परगट कहै, ता थैं दादू ताइ ॥१३३॥

॥ सुमिरन ॥

राम नाम गुर सबद सौं, रे मन पेल भरम।
निहकरमी सौं मन मिल्या, दादू काटि करम ॥१३४॥

॥ सूक्ष्म मार्ग ॥

(दादू) बिन पाइन का पंथ है, क्यौं करि पहुँचै प्राण।
बिकट घाट औघट खरे, माहिं सिखर असमान ॥१३५॥

---

(१) बिश्वास।

मन ताजी[1] चेतन चढ़ै, ल्यौ[2] की करै लगाम ।
सबद गुरू का ताजणाँ,[3] कोइ पहुँचे साध सुजान ॥१३६॥

॥ स्वार्थी परमार्थी ॥

साधौं सुमिरण सो कह्या, (जेहि) सुमिरण आपा भूल[4] ।
दादू गहि गम्भीर गुर, चेतन आनँद मूल ॥१३७॥
(दादू) आप सुवारथ सब सगे, प्राण सनेही नाहिं ।
प्राण सनेही राम है, कै साधू कलि माहिं ॥१३८॥
सुख का साथी जगत सब, दुख का नाहीं कोइ ।
दुख का साथी साइयाँ, दादू सतगुर होइ ॥१३९॥
सगे हमारे साध हैं, सिर पर सिरजनहार ।
दादू सतगुर सो सगा, दूजा धुंध बिकार ॥१४०॥
दादू के दूजा नहीं, एकै आतम राम ।
सतगुर सिर पर साध सब, प्रेम भगति बिसराम ॥१४१॥

॥ गुरु भृंगी ॥

दादू सुधि बुधि आतमा, सतगुर परसै आइ ।
दादू भृंगी कीट ज्यौं, देखत ही है जाइ ॥१४२॥
दादू भृंगी कीट ज्यौं, सतगुर सेती होइ ।
आप सरीखे करि लिये, दूजा नाहीं कोइ ॥१४३॥
(दादू) कच्छिब राखै दृष्टि में, कुंजों के मन माहिं[5] ।
सतगुर राखै आपणाँ, दूजा कोई नाहिं ॥१४४॥
बच्चों के माता पिता, दूजा नाहीं कोइ ।
दादू निपजै भाव सों, सतगुर के घट होइ ॥१४५॥

॥ भरोसा ॥

एकै सबद अनंत सिष, जब सतगुर बोलै ।
दादू जड़े कपाट सब, दे कूँची खोलै ॥१४६॥

---

(१) घोड़ा। (२) लौ। (३) कोड़ा। (४) सुमिरन उस का नाम है जिससे आपा का नाश हो। (५) कछुवा अपने बच्चों को दृष्टि से और कुंज चिड़िया सुरति से पालती है।

बिनही कीया होइ सब, सनमुख सिरजनहार ।
दादू करि करि को मरै, सिष साखा सिर भार ॥१४७॥

सूरज सनमुख आरसी, पावक किया प्रकास ।
दादू साईं साध बिच, सहजें निपजै दास ॥१४८॥

॥ मन इन्द्री निग्रह ॥

(दादू) पंचौं ये परमोधि ले, इन हीं कूँ उपदेस ।
यहु मन अपणा हाथ करि, तौ चेला सब देस ॥१४९॥

अमर भये गुर ज्ञान सौं, केते यहि कलि माहिं ।
दादू गुर के ज्ञान बिन, केते मरि मरि जाहिं ॥१५०॥

औषधि खाइ न पछि[1] रहै, बिषम ब्याधि[2] क्यौं जाइ ।
दादू रोगी बावरा, दोस बैद कूँ लाइ ॥१५१॥

बैद बिथा कहै देखि करि, रोगी रहै रिसाइ ।
मन माहीं लीये रहै, दादू ब्याधि न जाइ ॥१५२॥

(दादू) बैद बिचारा क्या करै, रोगी रहै न साच ।
खाटा मीठा चरपरा, माँगै मेरा बाच[3] ॥१५३॥

॥ गुरु उपदेश ॥

दुर्लभ दरसन साध का, दुर्लभ गुर उपदेस ।
दुर्लभ करिबा कठिन है, दुर्लभ परस अलेख ॥१५४॥

(दादू) अविचल मंत्र अमर मंत्र अछय मंत्र,
अभय मंत्र राम मंत्र निज सार ।
सजीवन मंत्र सबीरज मंत्र सुंदर मंत्र,
सिरोमणि मंत्र निरमल मंत्र निराकार ॥
अलख मंत्र अकल मंत्र अगाध मंत्र अपार मंत्र,
अनंत मंत्र राया ।

---

(१) पथ से, परहेज के साथ । (२) भारी रोग । (३) बचा ।

नूर मंत्र तेज मंत्र जोति मंत्र प्रकास मंत्र,
परम मंत्र पाया ।
उपदेस दष्या[1] दादू गुर राया ॥१५५॥
दादू सब ही गुर किये, पसु पंखी बनराय ।
तीन लोक गुण पंच सूँ, सब ही माहिं खुदाइ ॥१५६॥
जे पहली सतगुर कह्या, सो नैनहुँ देख्या आइ ।
अरस परस मिलि एक रस, दादू रहे समाइ ॥१५७॥

॥ इति गुरुदेव को अंग समाप्त ॥

२—सुमिरन को अंग

॥ बंदना ॥

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुरदेवतः ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
एकै अच्छर पीव का, सोई सत करि जाणि ।
राम नाम सतगुर कह्या, दादू सो परवाणि[2] ॥ २ ॥
पहली स्रवन दुती रसन, तृतिये हिरदे गाइ ।
चतुर्दसी चिंतन[3] भया, तब रोम रोम ल्यौ लाइ ॥ ३ ॥

॥ नाम महिमा ॥

दादू नीका नाँव है, तीन लोक तत सार ।
राति दिवस रटिबो करी, रे मन इहै बिचार ॥ ४ ॥
दादू नीका नाँव है, हरि हिरदै न बिसारि ।
मूरति मन माहैं बसै, साँसै साँस सँभारि ॥ ५ ॥
साँसै साँस सँभालताँ, इक दिन मिलिहै आइ ।
सुमिरण पैंड़ा सहज का, सतगुर दिया बताइ ॥ ६ ॥

---

(१) गुर दीक्षा । साखी १५५ में जो मंत्रों के नाम लिखे हैं वह भगवंत के गुण-वाचक हैं । (२) प्रमाण । (३) ब्र० वि० प्र० पुस्तक में "चेतनि" है । (४) नया काम ।

दादू नीका नाँव है, सो तूँ हिरदै राखि ।
पाखँड परपँच दूर करि, सुनि साधू जन की साखि ॥७॥

दादू नीका नाँव है, आप कहै समझाइ ।
और आरँभ[1] सब छाड़ि दे, राम नाम ल्यौ लाइ ॥ ८ ॥

राम भजन का सोच क्या, करताँ होइ सो होइ ।
दादू राम सँभालिये, फिरि बूझिये न कोइ ॥ ९ ॥

राम तुम्हारे नाँव बिन, जे मुख निकसै और ।
तौ इस अपराधी जीव कौं, तीन लोक कत ठौर ॥१०॥

छिन छिन राम सँभालताँ, जे जिव जाइ त जाउ ।
आतम के आधार कौं, नाहीं आन उपाउ ॥११॥

एक महूरत मन रहै, नाँव निरंजन पास ।
दादू तब हीं देखताँ, सकल करम का नास ॥१२॥

सहजै हीं सब होइगा, गुण इन्द्री का नास ।
दादू राम सँभालताँ, कटैं करम के पास[2] ॥१३॥

राम नाम गुर सबद सौं, रे मन पेलि भरम ।
निहकरमी सौं मन मिल्या, दादू काटि करम ॥१४॥

एक राम के नाँव बिन, जिव की जरनि न जाइ ।
दादू केते पचि मुए, करि करि बहुत उपाइ ॥१५॥

एक राम की टेक गहि, दूजा सहज सुभाइ ।
राम नाम छाड़ै नहीं, दूजा आवै जाइ ॥१६॥

दादू राम अगाध है, परिमित नाहीं पार ।
अबरण बरण न जाणिये, दादू नाँइ[3] अधार ॥१७॥

दादू राम अगाध है, अबिगति लखै न कोइ ।
निर्गुण सर्गुण का कहै, नाँइ[3] बिलंबन[4] होइ ॥१८॥

(१) नया काम । (२) फाँस । (३) नाम । (४) मोहित होना, लीन होना ।

दादू राम अगाध है, बेहद लख्या न जाइ।
आदि अंत नहिं जाणिये, नाँव निरंतर गाइ ॥१६॥
दादू राम अगाध है, अकल अगोचर एक।
दादू नाँइ[1] बिलंबिये,[2] साधू कहैं अनेक ॥२०॥
(दादू) एकै अल्लह राम है, समरथ साईं सोइ।
मैदे के पकवान सब, खाताँ होइ सो होइ ॥२१॥
सर्गुण निर्गुण ह्वै रहे, जैसा तैसा लीन।
हरि सुमिरण ल्यौ लाइये, का जाणौं का कीन्ह ॥२२॥
दादू सिरजनहार के, केते नाँव अनंत।
चित आवै सो लीजिये, यौं साधू सुमिरैं संत ॥२३॥
(दादू) जिन प्रान पिंड हम कौं दिया, अंतरि सेवैं ताहि।
जे आवै औसान सिरि, सोई नाँव सँबाहि[3] ॥२४॥

॥ चितावनी ॥

(दादू) ऐसा कौण अभागिया, कछू दिढ़ावै और।
नाँव बिना पग धरन कूँ, कहौ कहाँ है ठौर ॥२५॥
(दादू) निमिष न न्यारा कीजिये, अंतर थैं उरि नाम।
कोटि पतित पावन भये, केवल कहताँ राम ॥२६॥
(दादू) जे तैं अब जाण्या नहीं, राम नाम निज सार।
फिरि पीछैं पछिताहिगा, रे मन मूढ़ गँवार ॥२७॥
दादू राम सँभालि ले, जब लग सुखी सरीर।
फिरि पीछैं पछिताहिगा, जब तन मन धरै न धीर ॥२८॥
दुख दरिया संसार है, सुख का सागर राम।
सुख सागर चलि जाइये, दादू तजि बेकाम ॥२९॥
(दादू) दरिया यहु संसार है, राम नाम निज नाव।
दादू ढील न कीजिये, यहु अवसर यहु डाव[4] ॥३०॥

(१) नाम। (२) मोहित होना, लीन होना। (३) समाय। (४) दाव।

मेरे संसा को नहीं, जीवन मरन का राम ।
सुपिनैं हीं जिनि बीसरै, मुख हिरदै हरि नाम ॥३१॥
दादू दुखिया तब लगै, जब लग नाँव न लेहि ।
तब ही पावन परम सुख, मेरी जीवन येहि ॥३२॥
कछु न कहावै आप कूँ[१] , साईं कूँ सेवै ।
दादू दूजा छाड़ि सब, नाँव निज लेवै ॥३३॥
जे चित चिहुटै राम सूँ, सुमिरण मन लागै ।
दादू आतम जीव का, संसा सब भागै ॥३४॥
दादू पिव का नाँव ले, तौ मेटै सिर साल ।
घड़ी महूरत चालना, कैसी आवै काल्ह ॥३५॥
दादू औसर जीवतैं, कह्या न केवल राम ।
अंत काल हम कहैंगे, जम बैरी सूँ काम ॥३६॥
(दादू) ऐसे महँगे मोल का, एक साँस जे जाइ ।
चौदह लोक समान सो, काहे रेत मिलाइ ॥३७॥
सोई साँस सुजान नर, साईं सेती लाइ ।
करि साटा[२] सिरजनहार सूँ, महँगे मोल बिकाइ ॥३८॥
जतन करै नहिं जीव का, तन मन पवना फेर ।
दादू महँगे मोल का, द्वै दो बटी इक सेर[३] ॥३९॥
(दादू) रावत राजा राम का, कदे[४] न बिसारी नाँव ।
आतम राम सँभालिये, तौ सूबस[५] काया गाँव ॥४०॥
(दादू) अहनिसि सदा सरीर में, हरि चिंतत दिन जाइ ।
प्रेम मगन लय लीन मन, अंतर गति ल्यौ लाइ ॥४१॥

---

(१) अपनी प्रशंसा की चाह न रक्खै। (२) सट्टा; एक वस्तु के दाम के बदले दूसरी वस्तु देना। (३) तन मन और साँस को फेर कर अभ्यास न करना गोया इस अनमोल जीवन को दो धोती और सेर भर अन्न के लिये बेच देना है। (४) कधी, कभी। (५) अच्छा बासा।

निमिष एक न्यारा नहीं, तन मन मंझि समाइ ।
एक अंग लागा रहै, ता कूँ काल न खाइ ॥४२॥
(दादू) पिंजर पिंड सरीर का, सुवटा[1] सहजि समाइ ।
रमिता सेती रमि रहै, बिमल बिमल जस गाइ ॥४३॥
अबिनासी सों एक ह्वै, निमिष न इत उत जाइ ।
बहुत बिलाई क्या करे, जे हरि हरि सबद सुणाइ ॥४४॥
(दादू) जहाँ रहूँ तहँ राम सूँ, भावै कंदलि[2] जाइ ।
भावै गिर परबत रहूँ, भावै गेह बसाइ ॥४५॥
भावै जाइ जलहरि[3] रहूँ, भावै सीस नवाइ[4] ।
जहाँ तहाँ हरि नाँव सूँ, हिरदै हेत लगाइ ॥४६॥

॥ चेतावनी ॥

(दादू) राम कहे सब रहत है, नख सिख सकल सरीर ।
राम कहे बिन जात है, समझी मनवाँ बीर ॥४७॥
(दादू) राम कहे सब रहत है, लाहा[5] मूल सहेत ।
राम कहे बिन जात है, मूरख मनवाँ चेत ॥४८॥
(दादू) राम कहे सब रहत है, आदि अंत लौं सोइ ।
राम कहे बिन जात है, यहु मन बहुरि न होइ ॥४९॥
(दादू) राम कहे सब रहत है, जीव ब्रह्म की लार ।
राम कहे बिन जात है, रे मन हो हुसियार ॥५०॥
हरि भजि साफिल[6] जीवना, पर उपगार समाइ ।
दादू मरणा तहँ भला, जहँ पसु पंखी[7] खाइ ॥५१॥
(दादू) राम सबद मुख ले रहै, पीछे लागा जाइ ।
मनसा बाचा कर्मना, तेहि तत[8] सहज समाइ ॥५२॥

---

(१) तोता । (२) गुफा । (३) जल बास करूँ । (४) उलटा लटकूँ । (५) लाभ ।
(६) साफल्य=सुफल । (७) पच्छी । (८) तत्व ।

(दादू) रचि मचि लागे नाँव सूँ, राते माते होइ ।
देखेंगे दीदार कूँ, सुख पावेंगे सोइ ॥५३॥
(दादू) साईं सेवैं सब भले, बुरा न कहिये कोइ ।
सारौं माहैं[1] सो बुरा, जिस घट नाँव न होइ ॥५४॥
दादू जियरा राम बिन, दुखिया येहि संसार ।
उपजै बिनसै खपि मरै, सुख दुख बारम्बार ॥५५॥
राम नाम रुचि ऊपजै, लेवै हित चित लाइ ।
दादू सोई जीयरा, काहे जमपुर जाइ ॥५६॥
(दादू) नीकी बरियाँ[2] आइ करि, राम जपि लीन्हा ।
आतम साधन सोधि करि, कारज भल कीन्हा ॥५७॥
(दादू) अगम बस्त पानैं पड़ी,[3] राखी मंझि छिपाइ ।
छिन छिन सोई सँभालिये, मति वै बीसरि जाइ ॥५८॥

॥ नाम महिमा ॥

दादू उज्जल निर्मला, हरि रँग राता होइ ।
काहे दादू पचि मरै, पानी सेती धोइ ॥५९॥
सरीर सरोवर राम जल, माहैं संजम सार ।
दादू सहजैं सब गये, मन के मैल बिकार ॥६०॥
(दादू) राम नामं जलं कृत्वा, स्नानं सदा जितः[4] ।
तन मन आत्म निर्मलं, पंच भूपापंगतः[5] ॥६१॥
(दादू) उत्तम इंद्री निग्रहं, मुच्यते[6] माया मनः ।
परम पुरुष पुरातनं, चिंतते सदातनः[7] ॥६२॥
दादू सब जग बिष भर्या, निर्बिष बिरला कोइ ।
सोई निर्बिष होइगा, (जा के) नाँव निरंजन होइ ॥६३॥

---

(१) सभों में। (२) बिरियाँ=समय। (३) हाथ लगी। (४) नागरी प्रचारनी सभा की पुस्तक में "मतिः" है। (५) पंच भूप अपंगतः अर्थात पाँचो इंद्रियाँ जो राजा के समान बलवान हैं अपंग या पंगुल यानी निर्बिल हो गईं। (६) छूट जाना! (७) नित्य प्रति।

दादू निर्बिष नाँव सौं, तन मन सहजैं होइ ।
राम निरोगा करैगा, दूजा नाहीं कोइ ॥६४॥
ब्रह्म भगति जब ऊपजे, तब माया भगति बिलाइ ।
दादू निर्मल मल गया, ज्यूँ रबि तिमिर नसाइ ॥६५॥
दादू बिषै बिकार सौं, जब लग मन राता ।
तब लग चीत न आवई, त्रिभवन-पति दाता ॥६६॥
(दादू) का जाणौं कब होइगा, हरि सुमिरन इक-तार ।
का जाणौं कब छाड़ि है, यहु मन बिषैबिकार ॥६७॥
है सो सुमिरण होता नहीं, नहीं सु कीजे काम ।
दादू यहु तन यौं गया, क्यूँ करि पइये राम ॥६८॥
दादू राम नाम निज मोहनी, जिन मोहे करतार ।
सुर नर संकर मुनि जना, ब्रह्मा सृष्टि बिचार ॥६९॥
(दादू) राम नाम निज औषधी, काटै कोटि बिकार ।
विषम ब्याधि थैं ऊबरै, काया कंचन सार ॥७०॥
(दादू) निर्बिकार निज नाँव ले, जीवन इहै उपाइ ।
दादू कृत्रिम काल है, ता के निकट न जाइ ॥७१॥

॥ सुमिरन बिधि ॥

मन पवना गहि सुरति सौं, दादू पावै स्वाद ।
सुमिरण माहैं सुख घणा, छाड़ि देहु बकबाद ॥७२॥
नाँव सपीड़ा[1] लीजिये, प्रेम भगति गुन गाइ ।
दादू सुमिरण प्रीति सौं, हेत सहित ल्यौ लाइ ॥७३॥
प्रान कँवल मुखि राम कहि, मन पवना मुखि राम ।
दादू सुरति मुख राम कहि, ब्रह्म सुन्न निज ठाम ॥७४॥
(दादू) कहता सुणता राम कहि, लेता देता राम ।
खाता पीता राम कहि, आत्म कँवल बिसराम ॥७५॥

(१) दर्द के साथ ।

ज्यूँ जल पैसे दूध में, ज्यूँ पाणी में लौण[१]।
ऐसें आतम राम सौं, मन हठ साधै कौण ॥७६॥
(दादू) राम नाम में पैसि करि, राम नाम ल्यौ लाइ।
यहु इकंत त्रय लोक में, अनत काहे कौं जाइ ॥७७॥
ना घर भला न बन भला, जहाँ नहीं निज नाँव।
दादू उनमुनि मन रहै, भला न सोई ठाँव ॥७८॥
(दादू) निर्गुणं नामं मई, हृदय भाव प्रबर्तितं।
भर्म कर्म कलि बिषं, माया मोहं कंपितं ॥७९[२]॥
कालं जालं सोचितं, भयानक जम किंकरं।
हर्षं मुदितं सतगुरं, दादू अविगति दर्शनं ॥८०[२]॥
(दादू) सब सुख सरग पयाल[३] के, तोल तराजू बाहि।
हरि सुख एक पलक्क का, ता सम कह्या न जाइ ॥८१॥
(दादू) राम नाम सब को कहै, कहिबे बहुत बिमेक।
एक अनेकौं फिरि मिले, एक समाना एक ॥८२॥
दादू अपणी अपणी हद्द में, सब को लेवै नाँव।
जे लागे बेहद्द सौं, तिन की बलि मैं जाँव ॥८३॥
कौण पटंतर[४] दीजिये, दूजा नाहीं कोइ।
राम सरीखा राम है, सुमिर्याँ ही सुख होइ ॥८४॥
अपणी जाणै आप गति, और न जाणै कोइ।
सुमिरि सुमिरि रस पीजिये, दादू आनँद होइ ॥८५॥
(दादू) सब ही बेद पुरान पढ़ि, मेटि नाँव निरधार।
सब कुछ इन ही माहि है, क्या करिये बिस्तार ॥८६॥

---

(१) नोन। (२) नं० ७९ और ८० साखियों का अर्थ यह है कि निर्गुन नाम में जब चित्त लग जाता है तब भ्रम (मिथ्या ज्ञान), कर्म (पुन्य पाप), कलि विष (सांसारिक दोष) माया, मोह, काल (समय-कृत बंधन) जाल (बंधन), शोक और मृत्यु का भय, ये सब हट जाते हैं; और हर्ष, आनन्द, सतगुरु और शब्दज्ञान प्राप्त होते हैं। (३) पाताल। (४) उपमा।

पढ़ि पढ़ि थाके पंडिता, किनहुँ न पाया पार ।
कथि कथि थाके मुनि जना, दादू नाँइ[१] अधार ॥८७॥

निगम हिं अगम बिचारिये, तऊ पार न आवै ।
ता थैं सेवक क्या करै, सुमिरन ल्यौ लावै ॥८८॥

(दादू) अलिफ एक अल्लाह का, जे पढ़ि करि जाणै कोइ ।
कुरान कतेबा इलम सब, पढ़ि करि पूरा होइ ॥८९॥

दादू यहु तन पिंजरा, माहीं मन सूवा ।
एकै नाँव अलाह का, पढ़ि हाफिज हूवा ॥९०॥

नाँव लिया तब जाणिये, जे तन मन रहै समाइ ।
आदि अंत मध एक रस, कबहूँ भूलि न जाइ ॥९१॥

॥ बिरह पतिव्रत ॥

(दादू) एकै दसा अनन्य[२] की, दूजी दसा न जाइ ।
आपा भूलै आन सब, एकइ रहै समाइ ॥९२॥

दादू पीवै एक रस, बिसरि जाइ सब और ।
अविगति यहु गति कीजिये, मन राखो येहि ठौर ॥९३॥

आतम चेतन कीजिये, प्रेम रस्स पीवै ।
दादू भूलै देह गुण, ऐसैं जन जीवै ॥९४॥

कहि कहि केते थाके दादू, सुणि सुणि कहु क्या लेइ ।
लूण मिलै गलि पाणियाँ, ता सनि[३] चित यों देइ ॥९५॥

दादू हरि रस पीवताँ, रती बिलंब न लाइ ।
बारंबार सँभालिये, मति वै बीसरि जाइ ॥९६॥

(दादू) जागत सुपना ह्वै गया, चिंतामणि जब जाइ ।
तब हीं साचा होत है, आदि अंत उर लाइ ॥९७॥

---

(१) नाम । (२) केवल एक की भक्ति या सरन जिसमें दूसरे का ध्यान या सहारा नाम मात्र को न हो । (३) से ।

नाँव न आवै तब दुखी, आवै सुख संतोष ।
दादू सेवक राम का, दूजा हरष न सोक ॥९८॥
मिले तो सब सुख पाइये, बिछुरे बहु दुख होइ ।
दादू सुख दुख राम का, दूजा नाहीं कोइ ॥९९॥
दादू हरि का नाँव जल, मैं मीन ता माहिं ।
संग सदा आनँद करै, बिछुरत ही मरि जाहि ॥१००॥
दादू राम बिसारि करि, जीवैं केहिं आधार ।
ज्यूँ चातृक जल बूँद कौं, करै पुकार पुकार ॥१०१॥
हम जीव इहि आसरै, सुमिरण के आधार ।
दादू छिटकै हाथ थैं, तौ हम कौं वार न पार ॥१०२॥
(दादू) नाँव निमति[1] रामहिं भजे, भगति निमति भजि सोइ ।
सेवा निमति साईं भजे, सदा सजीवनि होइ ॥१०३॥
(दादू) राम रसाइन नित चवै[2], हरि है हीरा साथ ।
सो धन मेरे साइयाँ, अलख खजीना[3] हाथ ॥१०४॥
हिरदे राम रहै जा जन के, ता कौं ऊरा[4] कौण कहै ।
अठ सिधि नौनिधि ता के आगे, सनमुख सदा रहै ॥१०५॥
बंदित तीनौं लोक बापुरा, कैसैं दरस लहै ।
नाँव निसान सकल जग ऊपरि, दादू देखत है ॥१०६॥
दादू सब जग नीधना, धनवंता नहिं कोइ ।
सो धनवंता जानिये, (जा के) राम पदारथ होइ ॥१०७॥
संगहिं लागा सब फिरै, राम नाम के साथ ।
चिंतामणि हिरदे बसै, तौ सकल पदारथ हाथ ॥१०८॥
दादू आनँद आतमा, अविनासी के साथ ।
प्राणनाथ हिरदे बसै, तौ सकल पदारथ हाथ ॥१०९॥

---

(१) निमित्त । (२) चुवै । (३) खज़ाना । (४) ऊरा = वरे, पीछे । एक लिपि में "कूरा" है और एक में "ऊना" ।

(दादू) भावै तहाँ छिपाइये, साच न छाना होइ ।
सेस रसातल गगन धू,[1] परगट कहिये सोइ ॥११०॥
(दादू) कहँ था नारद मुनि जना, कहाँ भगत प्रहलाद ।
परगट तीनिउँ लोक में, सकल पुकारैं साध ॥१११॥
(दादू) कहँ सिव बैठा ध्यान धरि, कहाँ कबीरा नाम ।
सो क्यों छाना होइगा, जे रे कहैगा राम ॥११२॥
(दादू) कहाँ लीन सुकदेव था, कहँ पीपा रैदास ।
दादू साचा क्यों छिपै, सकल लोक परकास ॥११३॥
(दादू) कहँ था गोरख भरथरी, अनंत सिधौं का मंत ।
परगट गोपीचंद है, दत्त कहैं सब संत ॥११४॥
अगम अगोचर राखिये, करि करि कोटि जतन ।
दादू छाना क्यों रहै, जिस घटि राम रतन ॥११५॥
दादू सरग पयाल में, साचा लेवै नाँव ।
सकल लोक सिर देखिये, परगट सब ही ठाँव ॥११६॥
सुमिरन का संसा रह्या, पछितावा मन माहिं ।
दादू मीठा राम रस, सगला पीया नाहिं ॥११७॥
दादू जैसा नाँव था, तैसा लीया नाहिं ।
हौस रही यहु जीव में, पछितावा मन माहिं ॥११८॥

॥ नाम बिसारने का दंड ॥

दादू सिर करवत[2] बहै, बिसरै आतम राम ।
माहिं कलेजा काटिये, जीव नहीं बिस्राम ॥११९॥
दादू सिर करवत बहै, राम रिदे थी[3] जाइ ।
माहिं कलेजा काटिये, काल दसौं दिसि खाइ ॥१२०॥
दादू सिर करवत बहै, अंग परस नहिं होइ ।
माहिं कलेजा काटिये, यहु बिथा न जाणै कोइ ॥१२१॥

(१) ध्रू तारा । (२) करोत=आरा । (३) से ।

दादू सिर करवत बहै, नैनहुँ निरखै नाहिं।
माहिं कलेजा काटिये, साल रह्या मन माहिं ॥१२२॥
जेता पाप सब जग करै, तेता नाँव बिसारें होइ।
दादू राम सँभालिये, तौ एता डारै धोइ ॥१२३॥
(दादू) जब ही राम बिसारिये, तब ही मोटी मार।
खंड खंड करि नाखिये,[1] बीज पड़ै तेहि बार ॥१२४॥
(दादू) जब ही राम बिसारिये, तब ही झंपै[2] काल।
सिर ऊपरि करवत बहै, आइ पड़ै जम जाल ॥१२५॥
(दादू) जब ही राम बिसारिये, तब ही कंध[3] बिनास।
पग पग परलय पिंड पड़ै, प्राणी जाइ निरास ॥१२६॥
(दादू) जब ही राम बिसारिये, तब ही हाना[4] होइ।
प्राण पिंड सरबस गया, सुखी न देख्या कोइ ॥१२७॥

॥ नाम रत्न-कोष ॥

साहिब जी के नाँव माँ, बिरहा पीड़ पुकार।
तालाबेली[5] रोवणाँ, दादू है दीदार ॥१२८॥

॥ सुमिरन बिधि ॥

साहेब जी के नाव माँ, भाव भगति बेसास[6]।
लै समाधि लागा रहै, दादू साँई पास ॥१२९॥
साहेब जी के नाँव माँ, मति बुधि ज्ञान बिचार।
प्रेम प्रीति इस्नेह सुख, दादू जोति अपार ॥१३०॥
साहेब जी के नाँव माँ, सभ कुछ भरे भँडार।
नूर तेज अनंत है, दादू सिरजनहार ॥१३१॥
जिस में सब कुछ सो लिया, नीरंजन का नाउँ।
दादू हिरदे राखिये, मैं बलिहारी जाउँ ॥१३२॥

॥ इति सुमिरन को अंग समाप्त ॥

(१) डालिये। (२) झपटै। (३) कंद = बिलाप, शोक। (४) हानि, घाटा। (५) तड़प, बेकली। (६) विश्वास।

३—बिरह को अंग

॥ बिरह व्यथा ॥

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुरु देवत: ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगत: ॥ १ ॥
रतिवंती आरति करै, राम सनेही आव ।
दादू अवसर अब मिलै, यहु बिरहिनि का भाव ॥ २ ॥
पीव पुकारै बिरहिनी, निस दिन रहै उदास ।
राम राम दादू कहै, तालाबेली[1] प्यास ॥ ३ ॥
मन चित चातृक ज्यूँ रटै, पिव पिव लागी प्यास ।
दादू दरसन कारने, पुरवहु मेरी आस ॥ ४ ॥
(दादू) बिरहिनि दुख कासनि[2] कहै, कासनि देइ सँदेस ।
पंथ निहारत पीव का, बिरहिनि पलटे केस[3] ॥ ५ ॥
(दादू) बिरहिनि दुख कासनि कहै, जानत है जगदीस ।
दादू निस दिन बहि रहै, बिरहा करवत सीस[4] ॥ ६ ॥
सबद तुम्हारा ऊजला, चिरिया[5] क्यों कारी ।
तुही तुही निस दिन करौं, बिरहा की जारी ॥ ७ ॥
बिरहिनि रोवै रात दिन, झूरै मनहीं माहिं ।
दादू औसर चलि गया, प्रीतम पाये नाहिं ॥ ८ ॥
(दादू) बिरहिनि कुरलै कुंज ज्यूँ[6], निस दिन तलफत जाइ ।
राम सनेही कारणै, रोवत रैनि बिहाइ ॥ ९ ॥
पासैं बैठा सब सुनै, हम कौं ज्वाब न देइ ।
दादू तेरे सिर चढ़ै, जीव हमारा लेइ ॥१०॥

(१) ब्याकुलता । (२) किस से । (३) बाल सपेद हो गये । (४) बिरह की पीर रात दिन आरा सिर पर चला रही है । (५) चिड़िया का अभिप्राय "मति" से है । (६) जैसे कुंज चिड़िया कुरेल करती या चिल्लाती है ।

सब कौं सुखिया देखिये, दुखिया नाहीं कोइ ।
दुखिया दादू दास है, ऐन[1] परस नहिं होइ ॥ ११ ॥
साहिब मुखि बोलै नहीं, सेवक फिरै उदास ।
यहु बेदन[2] जिय में रहै, दुखिया दादू दास ॥१२॥
पिव बिन पल पल जुग भया, कठिन दिवस क्यूँ जाइ ।
दादू दुखिया राम बिन, काल रूप सब खाइ ॥१३॥
दादू इस संसार में, मुझ सा दुखी न कोइ ।
पीव मिलन के कारणे, मैं जल भरिया रोइ ॥१४॥
ना वहु मिलै न मैं सुखी, कहु क्यूँ जीवन होइ ।
जिन मुझ कौं घायल किया, मेरो दारू[3] सोइ ॥१५॥
दरसन कारन बिरहिनी, बैरागिन होवै ।
दादू बिरह बियोगिनी, हरि मारग जोवै ॥१६॥
अति गति आतुर मिलन कौं, जैसे जल बिन मीन ।
सो देखै दीदार कौं, दादू आतम लीन ॥१७॥
राम बिछोही बिरहिनी, फिरि मिलन न पावै ।
दादू तलफै मीन ज्यूँ, तुझ दया न आवै ॥१८॥

॥ बिरह लगन ॥

(दादू) जब लग सुति सिमटै नहीं, मन निहचल नहिं होइ ।
तब लग पिव परसै नहीं, बड़ी बिपति यह मोहिं ॥१९॥
ज्यूँ अमली के चित अमल है, सूरे के संग्राम ।
निरधन के चित धन बसै, यौं दादू के राम ॥२०॥
ज्यूँ चातृक के चित जल बसै, ज्यूँ पानी बिन मीन ।
जैसे चंद चकोर है, ऐसें (दादू) हरि सौं कीन्ह ॥२१॥
ज्यूँ कुंजर के मन बसै, अनलपंखि आकास ।
यूँ दादू का मन राम सौं, यूँ बैरागी बनखँड बास ॥२२॥

(१) आँख नहीं लगती। (२) पीड़ा। (३) दवा।

भँवरा लुबधी बास का, मोह्या नाद कुरंग ।
यौं दादू का मन राम सौं, (ज्यूँ) दीपक जोति पतंग ॥२३॥
स्रवना राते नाद सौं, नैना राते रूप ।
जिभ्या राती स्वाद सौं, (त्यौं) दादू एक अनूप ॥ २४ ॥
देह पियारी जीव कौं, निस दिन सेवा माहिं ।
दादू जीवन मरण लौं, कब हूँ छाड़ी नाहिं ॥२५॥
देह पियारी जीव कौं, जीव पियारा देह ।
दादू हरि रस पाइये, जे ऐसा होइ सनेह ॥२६॥
दादू हर दम माहिं दिवान[1], सेज हमारी पीव है ।
देखौं सो सुबहान[2], ये इसक[3] हमारा जीव है ॥२७॥
दादू हर दम माहिं दिवान, कहूँ दरूनै[4] दरद सौं ।
दरद दरूनै जाइ, जब देखौं दीदार कौं ॥२८॥

॥ बिरह बिनती ॥

दादू दरूनै दरदवंद, यहु दिल दरद न जाइ ।
हम दुखिया दीदार के, मिहरबान दिखलाइ ॥२९॥
मूए पीड़ पुकारताँ, बैद न मिलिया आइ ।
दादू थोड़ी बात थी, जे टुक दरस दिखाइ ॥३०॥
(दादू) मैं भिष्यारी मंगिता, दरसन देहु दयाल ।
तुम दाता दुखभंजिता, मेरो करहु सँभाल ॥३१॥

॥ छिन बिछोह ॥

क्या जीये में जीवणाँ, बिन दरसन बेहाल ।
दादू सोई जीवणाँ, परगट परसन लाल[5] ॥३२॥
येहि जग जीवन सो भला, जब लग हिरदे राम ।
राम बिना जे जीवना, सो दादू बेकाम ॥३३॥

---

(१) अंतर के दर्द से बावला हो रहा हूँ । (२) ख़ुदा की पाक ज़ात । (३) प्रेम । (४) अंतरी । (५) जीवन फल यही है कि प्रीतम से मिलाप हो [त्रिकुटी का गुरु स्वरूप लाल रंग का है] ।

दादू कहु दीदार की, साईं सेती बात ।
कब हरि दरसन देहुगे, यहु अवसर चलि जात ॥३४॥
बिथा तुम्हारे दरस को, मोहिं ब्यापै दिन रात ।
दुखी न कीजे दीन कौं, दरसन दीजै तात ॥३५॥
(दादू) इस हिथड़े ये साल, पिव बिन क्योंहि न जाइसी ।
जब देखौं मेरा लाल, तब रोम रोम सुख आइसी ॥३६॥
तूँ है तैसा परकास करि, अपना आप दिखाइ ।
दादू कौं दीदार दे, बलि जाऊँ बिलँब न लाइ ॥३७॥
(दादू) पिव जी देखै मुज्झ कौं, हौं भी देखौं पीव ।
हौं देखौं देखत मिलै, तौ सुख पावै जीव ॥३८॥
(दादू कहै) तन मन तुम परि वारणै[१], करि दीजे कै बार ।
जे ऐसी बिधि पाइये, तौ लीजे सिरजनहार ॥३९॥
दीन दुनी सदकै[१] करौं, टुक देखण दे दीदार ।
तन मन भी छिन छिन करौं, भिस्त दोजग[२] भी वार ॥४०॥
(दादू) हम दुखिया दीदार के, तूँ दिल थैं दूरि न होइ ।
भावै हम कौं जालि दे, हूणाँ है सो होइ ॥४१॥
(दादू कहै) जो कुछ दिया हमकौं, सो सब तुमहीं लेहु ।
तुम बिन मन मानै नहीं, दरस आपणा देहु ॥४२॥
दूजा कुछ माँगौं नहीं, हम कौं दे दीदार ।
तूँ है तब लग एकटग[३] , दादू के दिलदार ॥४३॥
(दादू कहै) तूँ है तैसी भगति दे, तूँ है तैसा प्रेम ।
तूँ है तैसी सुरति दे, तूँ है तैसा खेम[४] ॥४४॥
(दादू कहै) सदिकै[५] करौं सरीर कौं, बेर बेर बहु भंत[६] ।
भाव भगति हित प्रेम ल्यौ, खरा पियारा कंत ॥४५॥

---

(१) न्यौछावर । (२) स्वर्ग और नर्क । (३) एकटक, निरंतर । (४) कुशल । (५) निछावर । (६) भाँति से, रीति से ।

दादू दरसन की रली[1], हम कौं बहुत अपार ।
क्या जाणैं कब हीं मिलै, मेरा प्राण अधार ॥४६॥
दादू कारण कंत के, खरा दूखी बेहाल ।
मीरा[2] मेरा मिहर करि, दे दरसन दरहाल ॥४७॥
तालाबेली प्यास बिन, क्यों रस पीया जाइ ।
बिरहा दरसन दरद सौं, हम कौं देहु खुदाय[3] ॥४८॥
तालाबेली पीड़ सौं, बिरहा प्रेम पियास ।
दरसन सेती दीजिये, बिलसै दादू दास ॥४९॥
(दादू कहै) हम कौं अपणाँ आप दे, इस्क मुहब्बत दर्द ।
सेज सुहाग सुख प्रेम रस, मिलि खेलैं लापर्द[4] ॥५०॥
प्रेम भगति माता रहै, तालाबेली अंग ।
सदा सपीड़ा[5] मन रहै, राम रमै उन संग ॥५१॥
प्रेम मगन रस पाइये, भगति हेत रुचि भाव ।
बिरह बिसास[6] निज नाँव सौं, देव दया करि आव ॥५२॥
गई दसा सब बाहुड़ै[7], जे तुम प्रगटहु आइ ।
दादू ऊजड़ सब बसै, दरसन देहु दिखाइ ॥५३॥
हम कसिहैं[8] क्या होइगा, बिड़द[9] तुम्हारा जाइ ।
पीछैं हीं पछिताहुगे, ता थैं प्रगटहु आइ ॥५४॥
मीयाँ मैंडा आव घर, बाँढी वत्ताँ लोइ ।
दुखडे मुँहिडे गये, मराँ बिछोहे रोइ ॥५५[10]॥
है सो निधि नहिं पाइये, नहीं सो है भरपूर[11] ।
दादू मन मानै नहीं, ता थैं मरिये झूरि ॥५६॥

---

(१) लालसा, चाह । (२) मालिक । (३) खुदा, ईश्वर । (४) बेपर्दे । (५) दर्द से भरा । (६) विश्वास, प्रतीत । (७) पलट आवै । (८) कसने या साँसत करने से । (९) प्रण । (१०) हे मेरे मियाँ (मालिक) मेरे घर आव, अर्थात मेरे मन में बास कर, मैं दुहागिन लोक में फिरती हूँ, मेरे दुख बढ़ गये हैं और तेरे वियोग से मैं मरती हूँ—पं० चंद्रिका प्रसाद । (११) "है" अर्थात "सत्य" जो अविनाशी है—"नहीं" अर्थात "असत्य" वा "माया" जो नाशमान है ।

जिस घट इस्क अलाह का, तिस घट लोहि[1] न मास ।
दादू जियरे जक[2] नहीं, सिसकै साँसै साँस ॥५७॥
रत्ती रब[3] ना बीसरै, मरै सँभालि सँभालि ।
दादू सुहदा थीर है, आसिक अल्लह नालि[4] ॥५८॥

॥ कसौटी ॥

दादू आसिक रब्ब दा, सिर भी डेवै लाहि ।
अल्लह कारणि आप कौं, साँडै अंदरि भाहि ॥५९[5] ॥
भोरे भोरे तन करै, वंडै करि कुरबाण ।
मीठा कौड़ा ना लगै, दादू तौहू साण ॥६०[6] ॥
जब लग सीस न सौंपिये, तब लग इसक न होइ ।
आसिक मरणै ना डरै, पिया पियाला सोइ ॥६१॥
तैं डीनौं ई सभु, जे डीये दीदार के ।
उँजे लहदी अभु, पसाई दो पाण के ॥६२[7] ॥
बिचौं सभौ दूरि करि, अंदर बिया न पाइ ।
दादू रता हिक दा, मन मोहब्बत लाइ ॥६३[8] ॥
इसक मोहब्बत मस्त मन, तालिब दर दीदार ।
दोस्त दिल हरदम हजूर, यादगार हुसियार ॥६४॥
(दादू) आसिक एक अलाह के, फारिग[9] दुनिया दीन ।
तारिक[10] इस औजूद थैं, दादू पाक अकीन ॥६५॥

---

(१) लोहू । (२) धोखा, डर । (३) साहिब । (४) साथ । (५) मालिक का प्रेमी अपने सिर (आपा) को उतार कर उसके सन्मुख धरदे और प्रीतम के लिये अपने (आपा) को [बिरह की] आग में जला दे । (६) अपने तन की प्रीतम के आगे बोटी बोटी कर के क़ुरबानी करै और बाँट दे फिर भी वह मधुर प्रीतम कड़वा न लगै—तब वह तुझे मिलै [साण=साथ] । (७) जो तुम अपना दीदार दोगे तो सब कुछ दे चुके—अपना रूप दिखाओ जिस से सब लालसा पूरी हो जाय । (८) बीच के सब [परदे] दूर कर, अंतर में बिया=दूसरे को धसने न दे, दादू दिली इश्क़ के साथ एक ही से राता माता है । (९) छुट्टी पाये हुए । (१०) छोड़े हुए, बिलग ।

आशिक़ाँ रह क़ब्ज़ कर्दः, दिल व जाँ रफ़्तंद ।
अलह आले नूर दीदम, दिले दादू बंद ॥६६[१]॥
दादू इसक अवाज सौं, ऐसैं कहै न कोइ ।
दर्द मुहब्बत पाइये, साहिब हासिल होइ ॥६७[२]॥
कहँ आसिक अल्लाह के, मारे अपने हाथ ।
कहँ आलम औजूद सौं, कहै जबाँ की बात[३] ॥६८॥
दादू इसक अलाह का, जे कबहूँ प्रगटै आइ ।
(तौ) तन मन दिल अरवाह[४] का, सब पड़दा जलि जाइ ॥६९॥
अरवाह सिजदा कुनंद, वजूद रा चि कार ।
दादू नूर दादनी, आशिक़ाँ दीदार ॥७०[५]॥
बिरह अगिन तन जालिये, ज्ञान अगिनि दौं लाइ
दादू नख सिख परजलै[६], तब राम बुझावै आइ ॥७१॥
बिरह अगिनि में जालिबा, दरसन के ताईं ।
दादू आतुर रोइबा, दूजा कुछ नाहीं ॥७२॥
साहिब सों कुछ बल नहीं, जिनि[७] हठ साधै कोइ ।
दादू पीड़ पुकारिये, रोताँ होइ सो होइ ॥७३॥

---

(१) इस साखी का सम्बन्ध पहली साखी नं० ६५ से है यानी [वह प्रेम मार्ग जिसमें लोक परलोक दोनों की परवाह नहीं रहती और आपा बिसर जाता है] ऐसे मार्ग को जिन गहिरे प्रेमियों ने गहा और उनके मन और सुरत उस में धसे तो मालिक का प्रचंड प्रकाश और आला नूर उसको दरसता है जिससे वह फिर नहीं हट सकते ।

(२) प्रेम प्रेम मुख (आवाज़) से कहने से काज नहीं सरता, जब दर्द अर्थात् तपन रूपी बिरह से प्रेम प्राप्त हो तब मालिक से मेला हो [देखो आगे की साखी] ।

(३) इश्क मजाज़ी और इश्क़ हक़ीक़ी अर्थात् वाच्य और लक्ष प्रेम में जमीन आसमान का फ़र्क़ है ।

(४) अरवाह अरबी भाषा में रूह का बहुबचन है अर्थात् जीवात्मा या सुरति ; सुरति पर तन पिंडी मन और निज मन के ख़ोल चढ़े हैं ।

(५) दंडवत चैतन्य सुरति से करना चाहिये न कि मायक तन से, सो भक्तों की अंतर दृष्टि को प्रकाश देने वाला (नूर दादनी) भगवंत का दर्शन (दीदार) है— [इस साखी का अर्थ पं० चंद्रिका प्रसाद का दिया हुआ ठीक नहीं जान पड़ता] ।

(६) भभक कर जलै । (७) मत ।

ज्ञान ध्यान सब छाड़ि दे, जप तप साधन जोग।
दादू बिरहा ले रहै, छाड़ि सकल रस भोग ॥७४॥
जहँ बिरहा तहँ और क्या, सुधि बुधि नाठे[1] ज्ञान।
लोक वेद मारग तजे, दादू एकै ध्यान ॥७५॥
बिरही जन जीवै नहीं, जे कोटि कहैं समझाइ।
दादू गहिला[2] ह्वै रहै, कै तलफि तलफि मरि जाइ ॥७६॥
दादू तलफै पीड़ सों, बिरही जन तेरा।
ससकै साईं कारणे, मिलि साहिब मेरा ॥७७॥
पड़्या पुकारे पीड़ सों, दादू बिरही जन।
राम सनेही चित बसै, और न भावै मन ॥७८॥
जिस घटि बिरहा राम का, उस नींद न आवै।
दादू तलफै बिरहिनी, उस पीड़ जगावै ॥७९॥
सारा सूरा नींद भरि, सब कोई सोवै।
दादू घायल दरदवँद, जागै अरु रोवै ॥८०॥
पीड़ पुराणी ना पड़ै, जे अंतर बेध्या होइ।
दादू जीवन मरन लौं, पड़्या पुकारै सोइ ॥८१॥
दादू बिरही पीड़ सौं, पड़्या पुकारै मीत।
राम बिना जीवै नहीं, पीव मिलन की चीत[3] ॥८२॥
जे कबहूँ बिरहिनि मरै, तौ सुरति बिरहिनी होइ।
दादू पिव पिव जीवताँ, मुवा भी टेरै सोइ ॥८३॥
(दादू) अपनी पीड़ पुकारिये, पीड़ पराई नाहिं।
पीड़ पुकारै सो भला, जा के करक कलेजे माहिं ॥८४॥
ज्यूँ जीवत मिरतक कारणै, गति करि नाखै[4] आप।
यौं दादू कारणि राम के, बिरही करै बिलाप ॥८५॥

(१) नष्ट हो गये। (२) मूर्ख, बावला। (३) चिंता, फ़िकर। (४) डालै।

तलफि तलफि बिरहिनि मरै, करि करि बहुत विलाप।
बिरह अगिनि में जलि गई, पीव न पूछै बात ॥८६॥
(दादू) कहाँ जावँ कोण पै पुकारौं, पीव न पूछै बात।
पिव बिन चैन न आवई, क्यौं भरौं[1] दिन रात ॥८७॥
(दादू) बिरह बियोग न सहि सकौं, मो पै सह्या न जाइ।
कोई कहौ मेरे पीव कौं, दरस दिखावै आइ ॥८८॥
(दादू) बिरह बियोग न सहि सकौं, निस दिन साले मोहिं।
कोई कहो मेरे पीव कौं, कब मुख देखौं तोहिं ॥८९॥
(दादू) बिरह बियोग न सहि सकौं, तन मन धरै न धीर।
कोई कहौ मेरे पीव कौं, मेटै मेरी पीर ॥९०॥
(दादू कहै) साध दुखी संसार में, तुम बिन रह्या न जाइ।
औरों के आनंद है, सुख सौं रैनि बिहाइ[2] ॥९१॥
दादू लाइक हम नहीं, हरि के दरसन जोग।
बिन देखे मरि जाहिंगे, पिव के बिरह बियोग ॥९२॥
दादू सुख साईं सौं, और सबै ही दुक्ख।
देखौं दरसन पीव का, तिस ही लागै सुक्ख ॥९३॥
चंदन सीतल चंद्रमा, जल सीतल सब कोइ।
दादू बिरही राम का, इन सौं कदे[3] न होइ ॥९४॥
दादू घायल दरदवंद, अंतरि करै पुकार।
साईं सुणै सब लोक में, दादू यहु अधिकार ॥९५॥
दादू जागै जगत गुर, जग सगला सोवै।
बिरही जागै पीड़ सौं, जे घाइल होवै ॥९६॥
बिरह अगिन का दाग दे, जीवत मिरतक गोर[4]।
दादू पहिली घर किया, आदि हमारी ठौर ॥९७॥

(१) कष्ट से बिताना या पूरा करना। (२) बीतती है। (३) कधी, कभी। (४) कबर।

(दादू) देखे का अचरज नहीं, अनदेखे का होइ ।
देखे ऊपर दिल नहीं, अनदेखे कौं रोइ ॥९८॥
पहिली आगम बिरह का, पीछैं प्रीति प्रकास ।
प्रेम मगन लैलीन मन, तहाँ मिलन की आस ॥९९॥
बिरह बियोगी मन भला, साईं का बैराग ।
सहज सँतोषी पाइये, दादू मोटे[1] भाग ॥१००॥
(दादू) तृषा बिना तन प्रीति न उपजे, सीतल निकट जल धरिया ।
जनम लगै जिव पुणग[2] न पीवै, निर्मल दह दिसि भरिया ॥१०१॥
(दादू) षुध्या[3] बिना तन प्रीति न उपजै, बहु बिधि भोजन नेरा[4] ।
जनम लगै जिव रती न चाखै, पाक पूरि बहुतेरा ॥१०२॥
(दादू) तपति[5] बिना तन प्रीति न उपजै, संगहिं सीतल छाया ।
जनम लगै जिव जाणैं नाहीं, तरवर त्रिभुवन राया ॥१०३॥
(दादू) चोट बिना तन प्रीति न उपजै, औषद[6] अंग रहंत ।
जनम लगै जिव पलक न परसै, बूटी अमर अनंत ॥१०४॥
(दादू) चोट न लागी बिरह की, पीड़ न उपजी आइ ।
जागि न रोवै धाह दे,[7] सोवत गई बिहाइ ॥१०५॥
दादू पीड़ न ऊपजी, ना हम करी पुकार ।
ता थैं साहिब ना मिल्या, दादू बीती बार[8] ॥१०६॥
अंदर पीड़ न ऊभरै, बाहर करै पुकार ।
दादू सो क्यों करि लहै, साहिब का दीदार ॥१०७॥
मन हीं माहैं झूरणाँ, रोवै मन हीं माहिं ।
मन हीं माहैं धाह[9] दे, दादू बाहर नाहिं ॥१०८॥
बिन हीं नैनौं रोवणाँ, बिन मुख पीड़ पुकार ।
बिन हीं हाथौं पीटना, दादू बारंबार ॥१०९॥

---

(१) बड़े । (२) पुनिक, कदापि । (३) क्षुधा, भूख । (४) पास । (५) तपन । (६) दवा ।
(७) धाड़ मारकर । (८) समय । (९) कराह ।

प्रीति न उपजै बिरह बिन, प्रेम भगति क्यों होइ।
सब झूठे दादू भाव बिन, कोटि करै जे कोइ ॥११०॥
(दादू) बातौं बिरह न ऊपजै, बातौं प्रीति न होइ।
बातौं प्रेम न पाइये, जिन रे पतीजे कोइ ॥१११॥
दादू तौ पिव पाइये, कसमल[1] है सो जाइ।
निरमल मन करि आरसी, मूरति माहिं[2] लखाइ ॥११२॥
दादू तौ पिव पाइये, करि मंझे[2] वीलाप।
सुनि है कबहूँ चित्त धरि, परघट होवै आप ॥११३॥
दादू तौ पिव पाइये, करि साईं की सेव।
काया माहिं लखायसी, घट ही भीतर देव ॥११४॥
दादू तौ पिव पाइये, भावै प्रीति लगाइ।
हेजैं[3] हरी बुलाइये, मोहन मंदिर आइ ॥११५॥
(दादू) जा के जैसी पीड़ है, सो तैसी करै पुकार।
को सूषिम[4] को सहज में, को मिरतक तेहि बार ॥११६॥
दरदहि बूझै दरदवंद, जा के दिल होवै।
क्या जाणै दादू दरद की, नींद भरि सोवै ॥११७॥
दादू अच्छर प्रेम का, कोई पढ़ेगा एक।
दादू पुस्तक प्रेम बिन, केते पढ़ैं अनेक ॥११८॥
दादू पाती प्रेम की, बिरला बाँचै कोइ।
बेद पुरान पुस्तक पढ़ैं, प्रेम बिना क्या होइ ॥११९॥
(दादू) कर बिन सर बिन कमान बिन, मारै खैंचि कसीस[5]।
लागी चोट सरीर में, नखसिख सालै सीस ॥१२०॥

(१) मैल। (२) घट में। (३) ऐसी उतंग प्रीत से जैसी कि गाय को बछड़े के साथ होती है कि उसके सन्मुख आते ही पनिहा जाती है यानी थन में दूध भर आता है। (४) सूक्ष्म। (५) कसकर, तानकर।

(दादू) भलका मारै भेद सौं, सालै मंझि पराण ।
मारणहारा जानि है, कै जेहि लागै बाण ॥१२१॥

(दादू) सो सर हम कौं मारि ले, जेहि सर मिलिये जाइ ।
निस दिन मारग देखिये, कबहूँ लागै आइ ॥१२२॥

जेहि लागी सो जागि है, बेध्या करै पुकार ।
दादू पिंजर पीड़ है, सालै बारम्बार ॥१२३॥

बिरही ससकै[1] पीड़ सौं, ज्यौं घाइल रन माहिं ।
प्रीतम मारे बाण भरि, दादू जीवै नाहिं ॥१२४॥

(दादू) बिरह जगावै दरद कौं, दरद जगावै जीव ।
जीव जगावै सुरति कौं, पंच पुकारै पीव ॥१२५॥

दादू मारे प्रेम सौं, बेधे साध सुजाण ।
मारणहारे कौं मिले, दादू बिरही बाण ॥१२६॥

सहजैं मनसा मन सधे, सहजैं पवना सोइ ।
सहजैं पंचौं थिरि भये, जे चोट बिरह की होइ ॥१२७॥

मारणहारा रहि गया, जेहि लागी सो नाहिं ।
कबहूँ सो दिन होइगा, यहु मेरे मन माहिं ॥१२८॥

प्रीतम मारे प्रेम सौं, तिन कौं क्या मारै ।
दादू जारे बिरह के, तिन कौं क्या जारै ॥१२९॥

दादू पड़दा पलक का, एता अंतर होइ ।
दादू बिरही राम बिन, क्यौं करि जीवै सोइ ॥१३०॥

काया माहें क्यौं रह्या, बिन देखे दीदार ।
दादू बिरही बावरा, मरै नहीं तेहि बार ॥१३१॥

बिन देखे जीवै नहीं, बिरहा का सहिनाण[2] ।
दादू जीवै जब लगैं, तब लग बिरह न जाण ॥१३२॥

---

(१) सिसकै = साँस भरै । (२) चिन्ह, निशान ।

रोम रोम रस प्यास है, दादू करहि पुकार ।
राम घटा दल उमँगि करि, बरसहु सिरजनहार ॥१३३॥
प्रीत जो मेरे पीव की, पैठो पिंजर माहिं ।
रोम रोम पिउ पिउ करै, दादू दूसर नाहिं ॥१३४॥
सब घट स्रवना सुरति सौं, सब घट रसना बैन ।
सब घट नैना ह्वै रहे, दादू बिरहा ऐन ॥१३५॥
रात दिवस का रोवणा, पहर पलक का नाहिं ।
रोवत रोवत मिलि गया, दादू साहिब माहिं ॥१३६॥
(दादू) नैन हमारे बावरे, रोवैं नहिं दिन राति ।
साईं संग न जागहीं, पिव क्यौं पूछै बात ॥१३७॥
नैनहुँ नीर न आइया, क्या जानैं ये रोइ ।
तैसे हीं करि रोइये, साहिब नैनहुँ जोइ ॥१३८॥
(दादू) नैन हमारे ढीठ हैं, नाले नीर न जाहिं ।
सूके सराँ सहेत वै, करँक भये गलि माहिं ॥१३९[१] ॥
(दादू) बिरह प्रेम की लहरि में, यह मन पंगुल होइ ।
राम नाम में गलि गया, बूझै बिरला कोइ ॥१४०॥
(दादू) बिरह अगिनि में जलि गये, मन के मैल बिकार ।
दादू बिरही पीउ का, देखैगा दीदार ॥१४१॥
बिरह अगिनि में जलि गये, मन के बिषै बिकार ।
ता थैं पंगुल ह्वै रह्या, दादू दर दीदार ॥१४२॥

---

(१) कहावत है कि असह दुख में आँसू भी सूख जाते हैं इसी मसल को दादू साहिब अलंकार में फ़र्माते हैं कि जैसे तलैया (सरा) के जीव मछली कछुए मेंढक आदि ऐसे निडर (ढीठ) या बेपरवाह होते हैं कि तलैया से पानी के साथ बह कर नाले में अपनी रक्षा नहीं करते बल्कि तलैया ही में पड़े रहते हैं और उसी के साथ (सहित) सूख कर चमड़ी (करंक) बन जाते हैं ऐसी ही दशा हमारी आँखों की है कि आँसू की धारा को त्याग कर जहाँ की तहाँ सूख या बैठ गईं। यही भावार्थ और शब्दार्थ १३९ नं० की साखी का है न कि जैसा पं० चंद्रिका प्रसाद ने लिखा है।

(दादू) जब बिरहा आया दरद सौं, तब मीठा लागा राम ।
काया लागी काल है, कड़वे लागे काम ॥१४३॥
जब राम अकेला रहि गया, तन मन गया बिलाइ ।
दादू बिरही तब सुखी, जब दरस परस मिलि जाइ ॥१४४॥
जे हम छाड़ैं राम कौं, तौ राम न छाड़ै ।
दादू अमली अमल थैं, मन क्यूँ करि काढ़ै ॥१४५॥
बिरहा पारस जब मिलै, तब बिरहिनि बिरहा होइ ।
दादू परसै बिरहिनी, पिउ पिउ टेरै सोइ ॥१४६॥
आसिक मासुक ह्वै गया, इसक कहावै सोइ ।
दादू उस मासूक का, अल्लहि आसिक होइ ॥१४७॥
राम बिरहिनी ह्वै गया, बिरहिनि ह्वै गई राम ।
दादू बिरहा बापुरा, ऐसे करि गया काम ॥१४८॥
बिरह बिचारा ले गया, दादू हम कौं आइ ।
जहँ अगम अगोचर राम था, तहँ बिरह बिना को जाइ ॥१४९॥
बिरहा बपुरा आइ करि, सोवत जगावै जीव ।
दादू अंग लगाइ करि, ले पहुँचावै पीव ॥१५०॥
बिरहा मेरा मीत है, बिरहा बैरी नाहिं ।
बिरहा को बैरी कहै, सो दादू किस माहिं ॥१५१॥
(दादू) इसक अलह की जात है, इसक अलह का अंग ।
इसक अलह औजूद है, इसक अलह का रंग ॥१५२॥
(दादू) प्रीतम के पग परसिये, मुझ देखण का चाव ।
तहँ ले सीस नवाइये, जहाँ धरे थे पाँव ॥१५३॥
बाट बिरह की सोधि करि, पंथ प्रेम का लेहु ।
लै के मारग जाइये, दूसर पाँव न देहु ॥१५४॥

बिरहा बेगा भगती सहज में, आगे पीछे जाइ।
थोड़े माँहैं बहुत है, दादू रहु ल्यौ लाइ ॥१५५॥
बिरहा बेगा ले मिलै, तालाबेली पीर।
दादू मन घाइल भया, सालै सकल सरीर ॥१५६॥

॥ बिरह बिनती ॥

आज्ञा अपरंपार की, बसि अंबर भरतार।
हरे पटम्बर पहिरि करि, धरती करै सिंगार ॥१५७॥
बसुधा सब फूलै फलै, पिरथी अनँत अपार।
गगन गरिज जल थल भरै, दादू जैजैकार ॥१५८॥
काला मुँह करि काल का, साईं सदा सुकाल।
मेघ तुम्हारे घरि घणाँ, बरसहु दीनदयाल ॥१५९॥

॥ इति बिरह को अंग समाप्त ॥

४—परचा को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुरु देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
(दादू) निरंतर पिउ पाइया, तहँ पंखी उनमन जाइ।
सप्तौं मंडल भेदिया, अष्टैं[1] रह्या समाइ ॥ २ ॥
(दादू) निरंतर पिउ पाइया, जहँ निगम न पहुँचै बेद।
तेज सरूपी पिउ बसै, कोइ बिरला जानै भेद ॥ ३ ॥
(दादू) निरंतर पिउ पाइया, तीन लोक भरपूरि।
सब सेजौं साईं बसै, लोग बतावैं दूरि ॥ ४ ॥

[साखी १५७-१५९] आँधी नामक गाँव में दादू साहिब चौमासे के ऋतु में रहे थे वहाँ बर्षा न होने से लोगों की प्रार्थना पर यह तीनों साखियाँ बना कर बिन्ती की कि जिस पर बरषा हुई और अकाल जाता रहा।

(१) सप्त लोक के परे ब्रह्म का आठवाँ मंडल है।

(दादू) निरंतर पिउ पाइया, जहँ आनँद बारह मास।
हंस सौं परम हंस खेलै, तहँ सेवग स्वामी पास ॥ ५ ॥
(दादू) रँग भरि खेलौं पिउ सौं, तहँ बाजे बेन रसाल।
अकल पाट परि बैठा स्वामी, प्रेम पिलावै लाल ॥ ६ ॥
(दादू) रँग भरि खेलौं पिउ सौं, सेती दीनदयाल।
निसु बासर नहिं तहँ बसे, मानसरोवर पाल ॥ ७ ॥
(दादू) रँग भरि खेलौं पीउ सौं, तहँ कबहुँ न होय बियोग।
आदि पुरुस अंतरि मिल्या, कुछ पूरबले संजोग ॥ ८ ॥
(दादू) रँग भरि खेलौं पीउ सौं, तहँ बारह मास बसंत।
सेवग सदा अनंद है, जुग जुग देखौं कंत ॥ ९ ॥
(दादू) काया अंतर पाइया, त्रिकुटी के रे तीर।
सहजैं आप लखाइया, ब्यापा सकल सरीर ॥१०॥
(दादू) काया अंतर पाइया, निरंतर निरधार।
सहजैं आप लखाइया, ऐसा समरथ सार ॥११॥
(दादू) काया अंतर पाइया, अनहद बेन बजाइ।
सहजैं आप लखाइया, सुन्न मँडल में जाइ ॥१२॥
(दादू) काया अंतर पाइया, सब देवन का देव।
सहजैं आप लखाइया, ऐसा अलख अभेव ॥१३॥
(दादू) भँवर कँवल रस बेधिया, सुख सरवर रस पीव।
तहँ हंसा मोती चुणैं, पिउ देखे सुख जीव ॥१४॥
(दादू) भँवर कँवल रस बेधिया, गहे चरण कर हेत।
पिउ जी परसत ही भया, रोम रोम सब सेत ॥१५॥
(दादू) भँवर कँवल रस बेधिया, अनत न भरमै जाइ।
तहाँ बास बिलंबिया, मगन भया रस खाइ ॥१६॥

(दादू) भँवर कँवल रस बेधिया, गही जो पिउ की ओट ।
तहाँ दिल भँवरा रहै, कौण करै सर चोट ॥१७॥

॥ जिज्ञासा ॥

(दादू) खोजि तहाँ पिउ पाइये, सबद उपनै[१] पास ।
तहाँ एक एकांत है, तहाँ जोति परकास ॥१८॥
(दादू) खोजि तहाँ पिउ पाइये, जहँ चंद न ऊगै सूर ।
निरंतर निरधार है, तेज रह्या भरपूर ॥१६॥
(दादू) खोजि तहाँ पिउ पाइये, जहँ बिन जिभ्या गुण गाइ ।
तहँ आदि पुरस अलेख है, सहजें रह्या समाइ ॥२०॥
(दादू) खोजि तहाँ पिउ पाइये, जहँ अजरा अमर उमंग ।
जरा मरण भौ भाजसी, राखै अपणै संग ॥२१॥
दादू गाफिल छो वतै, मंझे रब्ब निहार ।
मंझेई पिउ पाण जौ, मंझेई बीचार ॥२२[२] ॥
दादू गाफिल छो वतै, आहे मंझि अलाह ।
पिरी पाण जौ पाण सैं, लहै सभोई साव[३] ॥२३॥
दादू गाफिल छो वतै, आहे मंझि मुकाम ।
दरगह में दीवाण तत, पसे न बैठो पाण[४] ॥२४॥
दादू गाफिल छो वतै, अंदर पिरी[५] पस[६] ।
तखत रबाणी बीच में, पेरे तिन्हीं वस[७] ॥२५॥

---

(१) उत्पन्न होता है । (२) गाफ़िल इधर उधर क्या फिरता है अपने अंतर ही में प्रीतम को देख, तेरा प्रीतम तेरे घट में आप बिराजता है वहीं उसको पहिचान । (३) प्रीतम अपने ही आप सब स्वाद (साव) ले रहा है । (४) तेरे घट ही (दरगह) में वह सार वस्तु अर्थात् भगवंत आप बिराजमान है पर तुझे नहीं दीखता । (५) प्रीतम । (६) देख । (७) भगवंत का सिंहासन तेरे घट में है तिन्हीं के चरनों में बासाकर । "पेरे" का अर्थ पं० चन्द्रिका प्रसाद ने "समीप" लिखा है परंतु असल में "पैर" या "चरन" है ।

मैं नाहीं तहँ मैं गया, आगे एक अलाव[1] ।
दादू ऐसी बंदगी, दूजा नाहीं आव ॥४६॥
दादू आपा जब लगें[2] , तब लग दूजा होइ ।
जब यहु आपा मिटि गया, तब दूजा नहिं कोइ ॥४७॥
(दादू) मैं नाहीं तब एक है, मैं आई तब दोइ ।
मैं तैं पड़दा मिटि गया, तब ज्यूँ था त्यूँहीं होइ ॥४८॥
दादू है कौं भय घणा, नाहीं कौं कुछ नाहिं ।
दादू नाहीं ह्वै रहउ, अपणे साहिब माहिं ॥४९॥

॥ निरंजन धाम ॥

(दादू) तीनि सुन्नि आकार की, चौथी निरगुण नाम ।
सहजे सुन्नि में रमि रह्या, जहाँ तहाँ सब ठाम ॥५०॥
पाँच तत्त के पाँच हैं, आठ त्तत के आठ ।
आठ तत्त का एक है, तहाँ निरंजन हाट ॥५१॥
(दादू) जहँ मन माया ब्रह्म था, गुण इंद्री आकार ।
तहँ मन बिरचै सबनि थैं, रचि रहु सिरजनहार ॥५२॥
काया सुन्नि पंच का बासा, आतम सुन्नि प्रान परकासा ।
परम सुन्नि ब्रह्म सौं मेला, आगे दादू आप अकेला ॥५३॥
(दादू) जहाँ थैं सब ऊपजे, चंद सूर आकास ।
पानी पवन पावक किये, धरती का परकास ॥५४॥
काल करम जिव ऊपजे, माया मन घट साँस ।
तहँ रहिता रमिता राम है, सहज सुन्नि सब पास ॥५५॥
सहज सुन्नि सब ठौर है, सब घट सबही माहिं ।
तहाँ निरंजन रमि रह्या, कोइ गुण ब्यापै नाहिं ॥५६॥
(दादू) तिस सरवर के तीर, सो हंसा मोती चुणैं ।
पीवैं नीझर नीर, सो है हंसा सो सुणैं ॥५७॥

(१) अल्लाह । (२) तक ।

(दादू) तिस सरवर के तीर, जप तप संजम कीजिये ।
तहँ सनमुख सिरजनहार, प्रेम पिलावै पीजिये ॥५८॥
(दादू) तिस सरवर के तीर, संगी[1] सबै सुहावणे ।
तहँ बिन कर बाजै बेन, जिभ्या-हीणे[2] गावणे ॥५९॥
(दादू) तिस सरवर के तीर, चरण कँवल चित लाइया ।
तहँ आदि निरंजन पीव, भाग हमारे आइया ॥६०॥
(दादू) सहज सरोवर आतमा, हंसा करैं कलोल ।
सुख सागर सूभर भर्‌या, मुक्ताहल मन मोल ॥६१॥
(दादू) हरि सरवर पूरन सबै, जित तित पाणी पीव ।
जहाँ तहाँ जल अंचताँ[3], गई तृषा सुख जीव ॥६२॥
सुख सागर सूभर भर्‌या, उज्जल निर्मल नीर ।
प्यास बिना पीवै नहीं, दादू सागर तीर ॥६३॥
सुन्न सरोवर हंस मन, मोती आप अनंत ।
दादू चुगि चुगि चंच[4] भरि, यौं जन जीवैं संत ॥६४॥
सुन्न सरोवर मीन मन, नीर निरंजन देव ।
दादू यहु रस बिलसिये, ऐसा अलख अभेव ॥६५॥
सुन्न सरोवर मन भँवर, तहाँ कँवल करतार ।
दादू परिमल पीजिये, सनमुख सिरजनहार ॥६६॥
सुन्न सरोवर सहज का, तहँ मरजीवा[5] मन ।
दादू चुणि चुणि लेइगा, भीतरि राम रतन ॥६७॥
दादू मंझि सरोवर बिमल जल, हंसा केलि कराहिं ।
मुकताहल[6] मुकता चुगैं, तेहि हंसा डर नाहिं ॥६८॥

---

(१) हंस और प्रेमी सुरतें। (२) बिना जीभ के। (३) पीता। (४) चोंच। (५) मरजीवा डुबकी लगाने वाले (गोतेखोर) को कहते हैं जो समुद्र से मोती निकालते हैं। पं० चं० प्र० के अर्थ "मुक्त, माया से निवृत्त" के ग़लत हैं। (६) मुक्ताहल का शब्द संस्कृत कोष में नहीं मिलता, संभव है कि यह "मुक्ताफल" का अपभ्रंश हो। संतबानी में मुक्ताहल और मुक्ता दोनों मोती के अर्थ में आये हैं। यहाँ पर इन दोनों शब्दों के अलंकार से मुक्ति रूपी मोती का अर्थ निकलता है—अर्थात् मान सरोवर के हंस मुक्त रूपी मोती चुगते हैं और काल कर्म से निडर हैं।

अखँड सरोवर अथग[1] जल, हंसा सरवर न्हाहिं।
निर्भय पाया आप घर, इब[2] उड़ि अनत न जाहिं ॥६९॥
दादू दरिया प्रेम का, ता में झूलैं दोइ।
इक आतम परआतमा, एकमेक रस होइ ॥७०॥
दादू हिन दरियाव, मानिक मंझेई।
दुबी डेई पाण में, डिठो हंझेई ॥७१॥
परआतम सौं आतमा, ज्यूँ हंस सरोवर माहिं।
हिलि मिलि खेलै पीव सौं, दादू दूसर नाहिं ॥७२॥
दादू सरवर सहज का, ता में प्रेम तरंग।
तहँ मन झूलै आतमा, अपणे साईं संग ॥७३॥

॥ पीव परिचय ॥

(दादू) देखौं निज पीव कौं, दूसर देखौं नाहिं।
सबै दिसा सौं सोधि करि, पाया घट ही माहिं ॥७४॥
(दादू) देखौं निज पीव कौं, और न देखौं कोइ।
पूरा देखौं पीव कौं, बाहर भीतर सोइ ॥७५॥
(दादू) देखौं निज पीव कौं, देखत ही दुख जाइ।
हूँ तौ देखौं पीव कौं, सब में रह्या समाइ ॥७६॥
(दादू) देखौं निज पीव कौं, सोई देखण जोग।
परगट देखौं पीव कौं, कहाँ बतावैं लोग ॥७७॥

॥ सर्व व्यापक ॥

दादू देखौं दयाल कौं, सकल रह्या भरपूरि।
रोम रोम मैं रमि रह्या, तूँ जिनि जाणै दूरि ॥७८॥

---

(१) अथाह। (२) अब। (३) साखी नं० ७१ को जो अर्थ पं० चंद्रिका प्रसाद जी ने पहिनाये हैं सो अशुद्ध हैं। "हंझ" सिंध में एक चिड़िया का नाम है जिसे हंस कह सकते हैं हंझ का अर्थ "संत" कदापि नहीं हो सकता। पूरी साखी का अर्थ यह है कि "इस दरिया अर्थात घट के भीतर रत्न (चेतन्य) है सो हंस (जीव) अपने आप में डुबकी लगाने से उसका दर्शन पा सकता है।

दादू देखौं दयाल कौं, बाहरि भीतरि सोइ।
सब दिसि देखौं पीव कौं, दूसर नाहीं कोइ ॥७९॥
दादू देखौं दयाल कौं, सनमुख साईं सार।
जीधरि देखौं नैन भरि, तीधरि सिरजनहार ॥८०॥
दादू देखौं दयाल कौं, रोकि रह्या सब ठौर।
घटि घटि मेरा साइयाँ, तूँ जिनि जाणै और ॥८१॥
तन मन नाहीं मैं नहीं, नहिं माया नहिं जीव।
दादू एकै देखिये, दह दिसि मेरा पीव ॥८२॥
(दादू) पाणी माहैं पैसि करि, देखै दृष्टि उघार।
जला ब्यंब[1] सब भरि रह्या, ऐसा ब्रह्म बिचार ॥८३॥
सदा लीन आनंद में, सहज रूप सब ठौर।
दादू देखै एक कौं, दूजा नाहीं और ॥८४॥
(दादू) जहँ तहँ साखी संग हैं, मेरे सदा अनंद।
नैन बैन हिरदे रहैं, पूरण परमानंद ॥८५॥
जागत जगपति देखिये, पूरण परमानंद।
सोवत भी साईं मिलै, दादू अति आनंद ॥८६॥

॥ तेज पुंज ॥

दह दिसि दीपक तेज के, बिन बाती बिन तेल।
चहुँ दिसि सूरज देखिये, दादू अद्भुत खेल ॥८७॥
सूरज कोटि प्रकास है, रोम रोम की लार।
दादू जोति जगदीस की, अंत न आवै पार ॥८८॥
ज्यौं रवि एक अकास है, ऐसे सकल भरपूर।
दादू तेज अनंत है, अल्लह आले[2] नूर ॥८९॥
सूरज नहिं तहँ सूरज देख्या, चंद नहीं तहँ चंदा।
तारे नहिं तहँ झिलिमिलि देख्या, दादू अति आनंदा ॥९०॥

(१) बिम्ब, परछाहीं। (२) उच्च।

बादल नहिं तहँ बरसत देख्या, सबद नहीं गरजंदा ।
बीज[१] नहीं तहँ चमकत देख्या, दादू परमानंदा ॥६१॥
(दादू) जोती चमकै झिलिमिलै, तेज पुंज परकास ।
अमृत झरै रस पीजिये, अमर बेलि आकास ॥६२॥
(दादू) अबिनासी अँग तेज का, ऐसा तत्त अनूप ।
सो हम देख्या नैन भरि, सुंदर सहज सरूप ॥६३॥
परम तेज परगट भया, तहँ मन रह्या समाइ ।
दादू खेलै पीव सौं, नहिं आवै नहिं जाइ ॥६४॥
निराधार निज देखिये, नैनहुँ लागा बंद ।
तहँ मन खेलै पीव सौं, दादू सदा अनंद ॥६५॥
ऐसा एक अनूप फल, बीज बाकुला[२] नाहिँ ।
मीठा निर्मल एक रस, दादू नैनहुं माहिँ ॥६६॥
हीरे हीरे तेज के, सो निरखे त्रय लोय[३] ।
कोइ इक देखै संत जन, और न देखै कोय ॥६७॥
नैन हमारे नूर माँ, तहाँ रहे ल्यौ लाइ ।
दादू उस दीदार कौं, निस दिन निरखत जाइ ॥६८॥
नैनहुँ आगें देखिये, आतम अंतर सोइ ।
तेज पुंज सब भरि रह्या, झिलिमिलि झिलिमिलि होइ ॥६९॥
अनहद बाजे बाजिये, अमरापुरी निवास ।
जोति सरूपी जगमगै, कोइ निरखै निज दास ॥१००॥
परम तेज तहँ मन रहै, परम नूर निज देखै ।
परम जोति तहँ आतम खेलै. दादू जीवन लेखै ॥१०१॥
(दादू) जरै सो जोति सरूप है, जरै सो तेज अनंत ।
जरै सो झिलिमिलि नूर है, जरै सो पुंज रहंत ॥१०२॥

---

(१) बिजली । (२) बुकला, छिलका । (३) लोय = लोयन, लोचन । त्रय लोय से अभिप्राय शिव नेत्र या तीसरे तिल से है जिस के खुलने पर दिव्य दृष्टि हो जाती है ।

दादू अलख अलाह का, कहु कैसा है नूर ।
दादू बेहद हद नहीं, सकल रह्या भरपूर ॥१०३॥
वार पार नहिं नूर का, दादू तेज अनंत ।
कीमति नहिं करतार की, ऐसा है भगवंत ॥१०४॥
निरसँधि नूर अपार है, तेज पुंज सब माहिं ।
दादू जोति अनंत है, आगो पीछो नाहिं ॥१०५॥
खंड खंड निज ना भया, इकलस[1] एकै नूर ।
ज्यों था त्योंहीं तेज है, जोति रही भरपूर ॥१०६॥
परम तेज परकास है, परम नूर नीवास ।
परम जोति आनंद में, हंसा दादू दास ॥१०७॥
नूर सरीखा नूर है, तेज सरीखा तेज ।
जोति सरीखी जोति है, दादू खेलै सेज ॥१०८॥
तेज पुंज की सुंदरी, तेज पुंज का कंत ।
तेज पुंज की सेज परि, दादू बन्या बसंत ॥१०९॥
पुहुप प्रेम बरिषै सदा, हरि जन खेलैं फाग ।
ऐसा कौतिग[2] देखिये, दादू मोटे[3] भाग ॥११०॥

॥ अमी बर्षा ॥

अंमृत धारा देखिये, पारब्रह्म बरिखंत ।
तेज पुंज झिलिमिलि झरै, को साधू जन पीवंत ॥१११॥
रस ही मैं रस बरखि है, धारा कोटि अनंत ।
तहँ मन निहचल राखिये, दादू सदा बसंत ॥११२॥
घन बादल बिन बरिखि है, नीझर निरमल धार ।
दादू भींजे आतमा, को साधू पीवनहार ॥११३॥

(१) एकसा, यकसाँ । (२) कौतुक । (३) बड़े

ऐसा अचरज देखिया, बिन बादल बरिखै मेह ।
तहँ चित चातृग[1] ह्वै रह्या, दादू अधिक सनेह ॥११४॥
महा रस मीठा पीजिये, अविगत अलख अनंत ।
दादू निर्मल देखिये, सहजैं सदा झरंत ॥११५॥

॥ कामधेनु ॥

कामधेनु दुहि पीजिये, अकल[2] अनूपम एक ।
दादू पीवै प्रेम सौं, निर्मल धार अनेक ॥११६॥
कामधेनु दुहि पीजिये, ता कूँ लखै न कोइ ।
दादू पीवै प्यास सौं, महारस मीठा सोइ ॥११७॥
कामधेनु दुहि पीजिये, अलख रूप आनंद ।
दादू पीवै हेत सौं, सुषमन लागा बंद ॥११८॥
कामधेनु दुहि पीजिये, अगम अगोचर जाइ ।
दादू पीवै प्रीति सौं, तेज पुंज की गाइ ॥११९॥
कामधेनु करतार है, अंमृत सरवै[3] सोइ ।
दादू बछरा दूध कौं, पीवै तौ सुख होइ ॥१२०॥
ऐसी एकै गाइ है, दूझै[4] बारह मास ।
सो सदा हमारे संग है, दादू आतम पास ॥१२१॥

॥ अक्षय वृक्ष ॥

तरवर साखा मूल बिन, धरती पर नाहीं ।
अविचल अमर अनंत फल, सो दादू खाहीं ॥१२२॥
तरवर साखा मूल बिन, धर अंबर न्यारा[5] ।
अबिनासी आनंद फल, दादू का प्यारा ॥१२३॥
तरवर साखा मूल बिन, रज बीरज रहिता[6] ।
अजरा अमर अतीत फल, सो दादू गहिता ॥१२४॥

---

(१) एक पक्षी जिस का केवल स्वाँति बुंद आधार है। (२) अखंड, अद्वितीय। (३) आप से आप चुवै। (४) दुही जाय। (५) पृथ्वी और आकाश से न्यारा। (६) रहित, अलग।

तरवर साखा मूल बिन, उतपति परलय नाहिं।
रहिता रमिता राम फल, दादू नैनहुँ माहिं ॥१२५॥
प्राण तरोवर सुरति जड़, ब्रह्म भोमि ता माहिं।
रस पीवै फूलै फलै, दादू सूकै[1] नाहिं ॥१२६॥

(प्रश्न)

ब्रह्म सुन्नि तहँ क्या रहै, आतम के अस्थान।
काया अस्थल क्या बसै, सतगुर कहै सुजान ॥१२७॥

(उत्तर)

काया के अस्थल रहै, मन राजा पंच प्रधान।
पचिस प्रकिरती तीन गुण, आपा गर्ब गुमान ॥१२८॥
आतम के अस्थान हैं, ज्ञान ध्यान बेसास[2]।
सहज सील संतोष सत, भाव भगति निधि पास ॥१२९॥
ब्रह्म सुन्न तहँ ब्रह्म है, निरंजन निराकार।
नूर तेज जहँ जोति है, दादू देखणहार ॥१३०॥

(प्रश्न)

मौजूद ख़बर माबूद ख़बर, अरवाह ख़बर औजूद।
मुक़ाम चि चीज़ हस्त दादनी सजूद ॥१३१[3] ॥

(उत्तर)

॥ मौजूद मुक़ामे हस्त ॥

नफ़्स ग़ालिब किब्र क़ाबिज़, गुस्सः मनी ऐश।
दुई दरोग़ हिर्स हुज्जत, नामे नेकी नेस्त ॥१३२[4] ॥

---

(१) सूखै। (२) विश्वास। (३) साखी १३१ में शिष्य गुरू से मुसलमानों की चार मंज़िलों—अर्थात शरीअत (कर्मकांड), तरीक़त (उपासना वा भक्ति), हक़ीक़त (ज्ञान) और मारिफ़त (वज्ञान)—हर एक के घाट या मुक़ाम का निर्णय करने की प्रार्थना करता है कि कहाँ के धनी को दंडवत की जाय। जवाब आगे की साखियों में है।

(४) सा० १३२—शरीअत के बँधुओं की धुर मंजिल उन की स्थूल देह ही ("मौजूद") है और उनके लच्छण यह हैं कि मन के बस, अहंकार का रूप, क्रोध अपनपौ और शारीरक सुख के गुलाम, द्वैत भाव झूठ लोभ और हुज्जत तकरार के रसिया, जिन के मन में नेकी या परोपकार नाम मात्र नहीं है। [पं० चं० प्र० के पाठ में "ऐश" की जगह "एस्त" है जो अशुद्ध नहीं कहा जा सकता परंतु हम को दूसरी लिपि का पाठ अच्छा लगा—पूसरी कड़ी के आख़िर हिस्से का अर्थ पंडितजी का ठीक नहीं है]।

हैवान आलिम गुमराह ग़ाफ़िल, अव्वल शरीअत पंद ।
हलाल हराम नेकी बदी, दर्से दानिशमंद ॥१३३[१] ॥

॥ अरवाह मक़ामे हस्त ॥

इश्क़ इबादत बंदगी, यगानगी इख़लास ।
मेहर मुहब्बत ख़ैर ख़ूबी, नाम नेकी पास ॥१३४[२] ॥

॥ माबूद मक़ामे हस्त ॥

यके नूर ख़ूबे ख़ूबाँ दीदनी हैराँ ।
अजब चीज़ ख़ुर्दनी प्याले मस्ताँ ॥१३५[३] ॥
कुल्ल फ़ारिग़ तर्के दुनियाँ, हर रोज़ हर दम याद ।
अल्लह आले इश्क़ आशिक़, दरूने फ़रियाद ॥१३६[४] ॥
आब आतश अर्श कुरसी, सूरते सुबहान ।
सिर्र सिफ़त कर्दः बूदन, मारिफ़त मकान ॥१३७[५] ॥

---

(१) सा० १३३—संसारी नर-पशु शरीअत के बँधुए एक तो उसकी शिक्षा को लिये हुए अचेत भटकते हैं और दूसरे हलाल हराम नेकी बदी के जाल में जो विद्या बुद्धि वालों ने बिछा रक्खा है फस रहे हैं ।

(२) सा० १३४—तरीक़त वालों की धुर मंज़िल उनकी आत्मा ("अरवाह") है और उनका मार्ग प्रेमा-भक्ति, भजन सुमिरन, एक ही मालिक में निश्चय, और हर एक के साथ दया प्यार भलाई हमदर्दी और नेकी का है ।

(३) सा० १३५—हक़ीक़त वालों का इष्ट उन का परमेश्वर ("माबूद") है जो ख़ूबों में ख़ूब और तेज का ऐसा पुंज है जिस को देख कर आँखें चकरा और झप जाती हैं और जो मस्तों अर्थात प्रेम नशे में चूर भक्तों के प्याले की अचरजी अमी रूप दारू है ।

(४) सा० १३६—मारिफ़त वाले वह प्रेमी हैं जो संसार को त्याग कर सब प्रकार से संतुष्ट हैं, जिन को अपने प्रीतम का निरंतर ध्यान लगा है और बिरह और प्रेम की अंतर में पुकार उठ रही है ।

(५) सा० १३७—पानी, आग, आठवाँ आसमान (कुरसी) और नवाँ आसमान (अर्श) जहाँ मालिक का तख़्त है वह उसी का ज़हूरा हैं—जो मारिफ़त (विज्ञान) की मंज़िल पर पहुँचे वह उस के भेद (सिर्र) की महिमा जानते हैं। [इस साखी के अर्थ में पं० चं० प्र० ने बिल्कुल भूल की है—दूसरी कड़ी में सिर्र=भेद की जगह शरर=चिनगारी लिखा है, और अर्श और कुरसी के मानी भी ठीक नहीं दिये हैं]।

हक्क़ हासिल नूर दीदम, क़रारे मक़सूद ।
दीदारे यार अरवाह आमद, मौजूदे मौजूद ॥१३८[1] ॥
चहार मंज़िल बयाँ गुफ़तम, दस्त करदः बूद ।
पीराँ मुरीदाँ ख़बर करदः, राहे माबूद ॥१३९[2] ॥
पहिली प्राण पसू नर कीजै, साच झूठ संसार ।
नीत अनीत भला बुरा, सुभ असुभ निरधार ॥१४०॥
सब तजि देखि बिचारि करि, मेरा नाहीं कोइ ।
अन दिन राता राम सौं, भाव भगति रत होइ ॥१४१॥
अंबर धरती सूर ससि, साईं सबले[3] लावै अंग ।
जस कीरति करुना करै, तन मन लागा रंग ॥१४२॥
परम तेज तहँ मन गया, नैनहुँ देख्या आइ ।
सुख संतोष पाया घणा, जोतिहिं जोति समाइ ॥१४३॥
अरथ चारि अस्थान का, गुरु सिष कह्या समझाइ ।
मारग सिरजनहार का, भाग बड़े सो जाइ ॥१४४॥
अरवाह सिजदा कुनंद, औजूद रा चि कार । (३–७०)
दादू नूर दादनी, आशिक़ाँ दीदार ॥१४५॥
आशिक़ाँ रह क़ब्ज़ कर्दः, दिलो जाँ रफ़्तंद । (३–६६)
अलह आले नूर दीदम, दिले दादू बंद ॥१४६॥
आशिक़ाँ मस्ताने आलम, ख़ुरदनी दीदार ।
चंद दिह चे कार दादू, यारे मा दिलदार ॥१४७[4] ॥

---

(१) सा० १३८—आख़िर में मैंने ज़िन्दगी का माहसल (बांछित फल) पाया अर्थात उस परम तत्व का प्रकाश प्रीतम के दर्शन में लख पड़ा जो कि हस्ती की हस्ती और जान की जान है। (२) साखी १३९—मैंने चारों मंज़िलों का भेद बता दिया, जैसा कि सतगुरु ने अपने शिष्यों को उपदेश किया है उसकी कमाई करनी चाहिये। (३) पूरा पूरा। (४) साखी १४७—प्रेमी जन संसारी ऐश्वर्य को तुच्छ समझते हैं, उनकी प्रीत अपने प्रीतम से लगी है और उसी के दर्श अमी रस के आनन्द में संतुष्ट और मतवाले यानी दुनिया से बेख़बर रहते हैं। "दिह" का अर्थ फ़ारसी में गाँव यानी जायदाद है, पं० च० प्र० की पुस्तक में "रह" दिया है जो अशुद्ध जान पड़ता है।

॥ साक्षातकार ॥

दादू दया दयाल की, सो क्यों छानी[१] होइ ।
प्रेम पुलक[२] मुलकत[३] रहै, सदा सुहागिनि सोइ ॥१४८॥
बिगसि बिगसि दरसन करै, पुलकि पुलकि रस पान ।
मगन गलित माता रहै, अरस परस मिलि प्रान ॥१४९॥
(दादू) देखि देखि सुमिरन करै, देखि देखि लै लीन ।
देखि देखि तन मन बिलै[४], देखि देखि चित दीन ॥१५०॥
निरखि निरखि निज नाँव ले, निरखि निरखि रस पीव ।
निरखि निरखि पिव कौं मिलै, निरखि निरखि सुख जीव ॥१५१॥

॥ आतम सुमिरण ॥

तन सौं सुमिरण सब करै, आतम सुमिरण एक ।
आतम आगें एक रस, दादू बड़ा बिबेक ॥१५२॥
(दादू) माटी के मोकाम का, सब को जानै जाप ।
एक आध अरवाह का, बिरला आपै आप ॥१५३॥
(दादू) जब लगि असथल देह का, तब लगि सब व्यापै ।
निर्भै अस्थल आतमा, आगैं रस आपै ॥१५४॥
जब नहिं सुरत सरीर की, बिसरै सब संसार ।
आतम न जाणै आप कौं, तब एक रह्या निर्धार ॥१५५॥
तन सौं सुमिरण कीजिये, जब लगि तन नीका[५] ।
आतम सुमिरण ऊपजै, तब लागै फीका ।
(आगैं आपैं आप है, तहाँ क्या जीव का) ॥१५६॥

॥ आत्म दृष्टि ॥

चर्म दृष्टि देखै बहुत, आतम दृष्टी एकि ।
ब्रह्म दृष्टि परिचय भया, तब दादू बैठा देखि ॥१५७॥

---

(१) गुप्त, ढकी हुई । (२) प्रफुल्लित, मगन । (३) मुसकराती । (४) बिलाय जाय, लय हो जाय । (५) जब तक शरीर में लाग है अर्थात् तन-अभिमान है ।

येई नैनाँ देह के, येई आतम होइ।
येई नैनाँ ब्रह्म के, दादू पलटे दोइ ॥१५८॥
घट परिचै सब घट लखै, प्राण परीचै प्राण।
ब्रह्म परीचै पाइये, दादू है हैरान ॥१५९॥

॥ अंतरी अराधना ॥

दादू जल पाषाण ज्यूँ, सेवै सब संसार।
दादू पाणी लूण[1] ज्यूँ, कोइ बिरला पूजनहार ॥१६०॥
अलख नाँव अंतरि कहै, सब घटि हरि हरि होइ।
दादू पाणी लूण ज्यूँ, नाँव कहीजै सोइ ॥१६१॥
छाड़ै सुरति सरीर कूँ, तेज पुंज में आइ।
दादू ऐसैं मिलि रहै, ज्यूँ जल जलहि समाइ ॥१६२॥
सूरति रूप सरीर का, पिव के परसैं होइ।
दादू तन मन एक रस, सुमिरण कहिये सोइ ॥१६३॥
राम कहत रामहि रह्या, आप बिसर्जन होइ।
मन पवना पंचौं बिलै[2], दादू सुमिरण सोइ ॥१६४॥
जहँ आतम राम सँभालिये, तहँ दूजा नाहीं और।
देही आगैं अगम है, दादू सूषिम ठौर ॥१६५॥
पर आतम सौं आतमा, ज्यौं पाणी में लूँण।
दादू तन मन एक रस, तब दूजा कहिये कूँण ॥१६६॥
तन मन बिलै यौं कीजिये, ज्यौं पाणी में लूँण।
जीव ब्रह्म एकै भया, तब दूजा कहिये कूँण ॥१६७॥
तन मन बिलै यौं कीजिये, ज्यौं घृत लागे घाम।
आत्म कमल तहँ बंदगी, जहँ दादू परगट राम ॥१६८॥

॥ अंतरी सुमिरण ॥

कोमल कमल तहँ पैसि करि, जहाँ न देखै कोइ।
मन थिर सुमिरण कीजिये, तब दादू दरसन होइ ॥१६९॥

(१) नोन। (२) बिलाय जाय, लय हो जाय।

नख सिख सब सुमिरण करै, ऐसा कहिये जाप ।
अंतरि बिगसै आतमा, तब दादू प्रगटै आप ॥१७०॥
अंतरगति हरि हरि करै, तब मुख की हाजत नाहिं ।
सहजैं धुनि लागी रहै, दादू मन हीं माहिं ॥१७१॥
(दादू) सहजैं सुमिरण होत है, रोम रोम रमि राम ।
चित्त चहूँट्या[1] चित्त सौं, यौं लीजै हरि नाम ॥१७२॥
दादू सुमिरण सहज का, दीन्हा आप अनंत ।
अरस परस उस एक सौं, खेलै सदा बसंत ॥१७३॥
(दादू) सबद अनाहद हम सुन्या, नख सिख सकल सरीर ।
सब घटि हरि हरि होत है, सहज ही मन थीर ॥१७४॥
हुए दिल लागा हिक साँ, मे कूँ एहा तात ।
दादू कंमि खुदाय दे, बैठा डीहैं राति ॥१७५[2] ॥
(दादू) माला सब आकार की, कोइ साधू सुमिरै राम ।
करणीगर[3] तैं क्या किया, ऐसा तेरा नाम ॥१७६॥
सब घट मुख रसना करै, रटै राम का नाँव ।
दादू पीवै राम रस, अगम अगोचर ठाँव ॥१७७॥
(दादू) मन चित इस्थिर कीजिये, तौ नख सिख सुमिरण होइ ।
स्रवन नेत्र मुख नासिका, पंचौं पूरे सोइ ॥१७८॥

॥ साध महिमा ॥

आतम आसण राम का, तहाँ बसै भगवान ।
दादू दून्यूँ परसपर, हरि आतम का थान ॥१७९॥
राम जपै रुचि साध कौं, साध जपै रचि राम ।
दादू दून्यूँ एकटग,[4] यहु आरँभ यहु काम ॥१८०॥

---

(१) चिपका । (२) मेरा दिल एक के साथ लग गया और इसी की फ़िकर है, दादू मालिक की सेवा में रात दिन बैठा रहता है । (३) कुदरत का रचनहार, करतार (४) एक तार ।

जहाँ राम तहँ संत जन, जहँ साधू तहँ राम ।
दादू दून्यूँ एकठे,[1] अरस परस बिसराम ॥१८१॥
(दादू) हरि साधू यौं पाइये, अविगत के आराध ।
साधू संगति हरि मिलैं, हरि संगत थैं साध ॥१८२॥
(दादू) राम नाम सौं मिलि रहै, मन के छाडि बिकार ।
तौ दिल ही माहैं देखिये, दून्यूँ का दीदार ॥१८३॥
साध समाणा राम में, राम रह्या भरपूरि ।
दादू दून्यूँ एक रस, क्यौंकरि कीजै दूरि ॥१८४॥
(दादू) सेवग साईं का भया, तब सेवग का सब कोइ ।
सेवग साईं कौं मिल्या, तब साईं सरिखा होइ ॥१८५॥

॥ सतसंग महिमा ॥

मिसरी माहैं मेलि करि, मोल बिकाना बंस[2] ।
यौं दादू महिंगा भया, पारब्रह्म मिलि हंस ॥१८६॥
मीठे माहैं राखिये, सो काहे न मीठा होइ ।
दादू मीठा हाथि ले, रस पीवै सब कोइ ॥१८७॥

॥ सतसंगति कुसंगति ॥

मीठे सौं मीठा भया, खारे सौं खारा ।
दादू ऐसा जीव है, यहु रंग हमारा ॥१८८॥
मीठे मीठे करि लिये, मीठा माहैं बाहि ।
दादू मीठा ह्वै रह्या, मीठे माहिं समाइ ॥१८९॥
राम बिना किस काम का, नहिं कौड़ी का जीव ।
साईं सरिखा ह्वै गया, दादू परसैं पीव ॥१९०॥

॥ पारख अपारख ॥

हीरा कौड़ी ना लहै, मूरखि हाथ गँवार ।
पाया पारिख जौहरी, दादू मोल अपार ॥१९१॥

---

(१) इकट्ठे । (२) बाँस का पनच जो मिसरी के कुज्जे पर लगा रहता है ।

अंधे हीरा परखिया, कोया कौड़ी तोल ।
दादू साधू जौहरी, हीरे मोल न तोल ॥१६२॥
मोराँ कीया मेहर सौं, परदे थैं लापर्द[१] ।
राखि लिया दीदार में, दादू भूला दर्द ॥१६३॥
(दादू) नैन बिन देखिबा, अंग बिन पेखिबा,
रसन बिन बोलिबा, ब्रह्म सेती ।
स्रवन बिन सुणिबा, चरण बिन चालिबा,
चित्त बिन चित्यबा, सहज एती ॥१६४॥

॥ पतिव्रत ॥

दादू देख्या एक मन, सो मन सब ही माहिं ।
तेहि मन सौं मन मानिया, दूजा भावै नाहिं ॥१६५॥
(दादू) जेहिं घट दीपक राम का, तेहिं घट तिमिरि न होइ ।
उस उजियारे जोति के, सब जग देखै सोइ ॥१६६॥
दादू दिल अरवाह का, सो अपणा ईमान ।
सोई स्याबति[२] राखिये, जहँ देखै रहमान ॥१६७॥
अल्लह आप इमान है, दादू के दिल माहिं ।
सोई स्याबति राखिये, दूजा कोई नाहिं ॥१६८॥

॥ अनुभव ॥

प्राण पवन ज्यौं पातला, काया करै कमाइ ।
दादू सब संसार में, क्यौं ही गह्या न जाइ ॥१६९॥
नूर तेज ज्यौं जोति है, प्राण प्यंड[३] यों होइ ।
दिष्टि मुष्टि[४] आवै नहीं, साहिब के बसि सोइ ॥२००॥
काया सूषिम करि मिलै, ऐसा कोई एक ।
दादू आतम ले मिलैं, ऐसे बहुत अनेक ॥ २०१[५] ॥

---

(१) बेपरदा। (२) साबित, सावधान। (३) पिंड। (४) जिस का इन स्थूल इंद्रियाँ से देख या छू नहीं सकते। (५) काया का ऊपर लिखी रीति से सूक्ष्म करके मिलनेवाला कोई बिरला है परंतु काया के पात होने पर मिलने वाले बहुत हैं।

आड़ा आतम तन धरै, आप रहै ता माहिं[1]।
आपण खेलै आप सौं, जीवन सेती नाहिं ॥२०२॥
(दादू) अनभै थैं आनँद भया, पाया निर्भय नाँव।
निहचल निर्मल निर्बाण पद, अगम अगोचर ठाँव ॥२०३॥
दादू अनभै बाणी अगम कौं, लेगइ संग लगाइ।
अगह गहै अकहै कहै, अभेद भेद लहाइ ॥२०४॥
जे कुछ बेद पुरान थैं, अगम अगोचर बात।
सो अनभै साचा कहै, यह दादू अकह कहात ॥२०५॥
(दादू) जब घटि अनभै ऊपजे, तब किया करम का नास।
भय भरम भागै सबै, पूरन ब्रह्म प्रकास ॥२०६॥
(दादू) अनभै काटै रोग कौं, अनहद उपजै आइ।
सेझे[2] का जल निर्मला, पीवै रुचि ल्यौ लाइ ॥२०७॥
दादू बाणी ब्रह्म की, अनभै घट परकास।
राम अकेला रहि गया, सबद निरंजन पास ॥२०८॥
जे कबहूँ समझै आतमा, तौ दिढ़ गहि राखै मूल।
दादू सेझा राम रस, अंमृत काया कूल[3] ॥२०९॥
(दादू) मुझ ही माहैं मैं रहूँ, मैं मेरा घरबार।
मुझ ही माहैं मैं बसूँ, आप कहै करतार ॥२१०॥
(दादू) मैं ही मेरा अरस[4] में, मैं ही मेरा थान।
मैं ही मेरी ठौर में, आप कहै रहमान ॥२११॥
(दादू) मैं ही मेरे आसरे, मैं मेरे आधार।
मेरे तकिये मैं रहूँ, कहै सिरजनहार ॥२१२॥

---

(१) तन के सामने (आड़े) आत्मा को रक्खै अर्थात तन की सुधि बिसरा दे और आप आत्मा ही में रत हो रहै। (२) सोत पोत। (३) राम रस तो सोत पोत अथवा झरना के समान है और काया कूल अर्थात नदी नाले के समान जिस में वह अमृत बहता है। (४) अर्श = नवाँ आसमान।

(दादू) मैं ही मेरी जाति में, मैं ही मेरा अंग।
मैं ही मेरा जीव में, आप कहै परसंग ॥२१३॥
(दादू) सबै दिसा सो सारिखा[१], सबै दिसा मुख बैन।
सबै दिसा स्रवणहुँ सुणै, सबै दिसा कर नैन ॥२१४॥
सबै दिसा पग सीस है, सबै दिसा मन चैन।
सबै दिसा सनमुख रहै, सबै दिसा अँग ऐन ॥२१५॥
बिन स्रवण हुँ सब कुछ सुणै, बिन नैनहुँ सब देखै।
बिन रसना मुख सब कुछ बोलै, यहु दादू अचरज पेखै ॥२१६॥
सब अँग सब ही ठौर सब, सर्बंगी सब सार।
कहै गहै देखै सुनै, दादू सब दीदार ॥२१७॥
कहै सब ठौर गहै सब ठौर, रहै सब ठौर जोति परवानै।
नैन सब ठौर बैन सब ठौर, ऐन सब ठौर सोई भल जानै॥
सीस सब ठौर स्रवन सब ठौर, चरन सब ठौर कोई यहु मानै।
अंग सब ठौर संग सब ठौर, सबै सब ठौर दादू ध्यानै ॥२१८॥
तेज ही कहणा तेज ही गहणा, तेज ही रहणा सारे।
तेज ही बैना तेज ही नैना, तेज ही ऐन हमारे॥
तेज ही मेला तेज ही खेला, तेज अकेला तेज ही तेज सँवारे।
तेज ही लेवै तेज ही देवै, तेज ही खेवै तेज ही दादू तारे ॥२१९॥
नूरहि का धर नूरहि का घर, नूरहि का बर[२] मेरा।
नूरहि मेला नूरहि खेला, नूर अकेला नूरहि माँझ बसेरा॥
नूरहि का अँग नूरहि का सँग, नूरहि का रँग नेरा[३]।
नूरहि राता नूरहि माता, नूरहि खाता दादू तेरा ॥२२०॥

॥ पिंडी (खाकी) और ब्रह्मांडी (नूरी) मन ॥

(दादू) नूरी दिल अरवाह का, तहाँ बसै माबूदं।
तहँ बंदे की बंदगी, जहाँ रहै मौजूदं ॥२२१॥

---

(१) सब दिशा उस के लिये बराबर हैं। (२) पति। (३) "नेरा"=पास, निकट। पं० चं० प्र० के पाठ में "मेरा" है।

(दादू) नूरी दिल अरवाह का, तहँ खालिक भरपूरं ।
आले नूर अलाह का, खिदमतगार हजूरं ॥२२२॥
(दादू) नूरी दिल अरवाह का, तहँ देख्या करतारं ।
तहँ सेवग सेवा करै, अनंत कला रवि सारं ॥२२३॥
(दादू) नूरी दिल अरवाह का, तहाँ निरंजन बासं ।
तहँ जन तेरा एक पग, तेज पुंज परकासं ॥२२४॥
(दादू) तेज कँवल दिल नूर का, तहाँ राम रहमानं[1] ।
तहँ करि सेवा बंदगी, जे तूँ चतुर सयानं ॥२२५॥
तहाँ हजूरी बंदगी, नूरी दिल में होइ ।
तहँ दादू सिजदा करै, जहाँ न देखै कोइ ॥२२६॥
(दादू) देही माहैं दोइ दिल, इक खाकी इक नूर ।
खाकी दिल सूझै नहीं, नूरी मंझि हजूर ॥२२७॥

॥ नमाज सिजदा ॥

(दादू) हौद[2] हजूरी दिल ही भीतर, गुस्ल[3] हमारा सारं ।
उजू[4] साजि अलह के आगै, तहाँ निमाज गुजारं ॥२२८॥
(दादू) काया मसीत[5] करि पंचजमाती[6], मनही मुला इमामं ।
आप अलेख इलाही आगै, तहँ सिजदा करै सलामं ॥२२९॥
(दादू) सब तन तसबी[7] कहै करीमं, ऐसा कर ले जापं ।
रोजा एक दूर करि दूजा, कलमा आपै आपं ॥२३०॥
(दादू) अठे पहर अलह के आगै, इक टग रहिबा ध्यानं ।
आपै आप अरस के ऊपर, जहाँ रहै रहमानं ॥२३१॥
अठे पहर इबादती, जीवन मरण निबाहि ।
साहिब दर सेवै खड़ा, दादू छाड़ि न जाइ ॥२३२॥

---

(१) दयाल । (२) हौज़=कुंड । (३) स्नान । (४) वज़ू मुसलमानों में नमाज़ पढ़ने के लिये करते हैं जिस में पहले तो पानी से दोनों हाथों को धोते हैं, फिर कुल्ली करते हैं फिर पेशानी (माथा) पूरा चिहरा बाँह और आखिर में पाँव को धोते हैं । (५) मस्जिद । (६) पाँच फ़िर्क़े मुसलमानों के । (७) सुमिरनी ।

॥ साध महिमा ॥

अठे पहर अरस में, ऊभो ई आहे ।
दादू पसे तिन खे अला, गाल्हाये ॥२३३[१] ॥
अठे पहर अरस में, बेठा पिरी पसन्नि ।
दादू पसे तिन खे, जे दीदार लहन्नि ॥२३४[२] ॥
अठे पहर अरस में, जिन्हीं रूह रहन्नि ।
दादू पसे तिन खे, गुझ्यूँ गाल्ही कन्नि ॥२३५[३] ॥
अठे पहर अरस में, लुडींदा आहिन ।
दादू पसे तिन खे, असा खबरि डिन्ह ॥२३६[४] ॥
अठे पहर अरस में, वंजी जे गाहिन ।
दादू पसे तिन खे, किते ई आहिन ॥२३७[५] ॥

॥ प्रेम पियाला ॥

प्रेम पियाला नूर का, आसिक भरि दीया ।
दादू दर दीदार में, मतवाला कीया ॥२३८॥
इसक सलोना आसिकाँ, दरगह थैं दीया ।
दर्द मोहब्बत प्रेम रस, प्याला भरि पीया ॥२३९॥
दादू दिल दीदार दे, मतवाला कीया ।
जहँ अरस इलाही आप था, अपना करि लीया ॥२४०॥
दादू प्याला नूर दा, आसिक अरस पिवन्नि ।
अठे पहर अल्लाह दा, मुँह डिट्ठे जीवन्नि ॥२४१॥

---

(१) साखी २३३—अल्लाह आठ पहर नवें आसमान (अर्श) में खड़ा ही है, जो उसको देखते हैं सो उस से बात चीत करते हैं। (२) सा० २३४—प्रीतम (पिरी) आठ पहर अर्श में बैठा देखता है, जो उस को देखते हैं उनको दर्शन मिलते हैं। (३) सा० २३५—जिन की सुरति आठ पहर अर्श में रहती है वह उस को देखते हैं और उससे गुप्त बात चीत करते हैं। (४) सा० २३६—जो आठ पहर अर्श में झूल रहे हैं वह उसको देखते हैं और हम को खबर देते हैं। (५) सा० २३७—जो आठ पहर अर्श में जाकर रहते हैं जो उसको देखते हैं वह कितने (कहाँ ?) हैं।

आसिक अमली साध सब, अलख दरीबे जाइ।
साहिब दर दीदार में, सब मिलि बैठे आइ ॥२४२॥
राते माते प्रेम रस, भरि भरि देइ खुदाइ।
मस्तान मालिक करि लिये, दादू रहे ल्यौ लाइ ॥२४३॥

॥ अथाह भक्ति ॥

(दादू) भगति निरंजन राम की, अविचल अविनासी।
सदा सजीवन आतमा, सहजैं परकासी ॥२४४॥
(दादू) जैसा राम अपार है, तैसी भगति अगाध।
इन दून्यूँ की मित[1] नहीं, सकल पुकारैं साध ॥२४५॥
(दादू) जैसा अविगत राम है, तैसी भगति अलेख।
इन दून्यूँ को मित नहीं, सहस मुखाँ कहै सेस ॥२४६॥
(दादू) जैसा निर्गुण राम है, तैसी भगति निरंजन जाणि।
इन दून्यूँ की मित नहीं, संत कहैं परवाणि[2] ॥२४७॥
(दादू) जैसा पूरा राम है, तैसी पूरण भगति समान।
इन दून्यूँ की मित नहीं, दादू नाहीं आन ॥२४८॥

॥ निरंतर सेवा ॥

दादू जब लग राम है, तब लग सेवग होइ।
अखंडित सेवा एक रस, दादू सेवग सोइ ॥२४९॥
दादू जैसा राम है, तैसी सेवा जाणि।
पावैगा तब करैगा, दादू सो परवाणि ॥२५०॥
(दादू) साईं सरीखा सुमिरन कीजै, साईं सरीखा गावै।
साईं सरीखी सेवा कीजै, तब सेवग सुख पावै ॥२५१॥
(दादू) सेवग सेवा करि डरै, हम थैं कछू न होइ।
तूँ है तैसी बंदगी, करि नहिं जाणै कोइ ॥२५२॥

(१) हद, अंदाज़ा। (२) प्रमाण।

(दादू) जे साहिब मानै नहीं, तऊ न छाडौं सेव ।
यहि अवलंबनि[1] जीजिये, साहिब अलख अभेव ॥२५३॥
आदि अंत आगे रहै, एक अनूपम देव ।
निराकार निज निर्मला, कोई न जाणै भेव ॥२५४॥
अबिनासी अपरंपरा, वार पार नहिं छेव[2] ।
सो तूँ दादू देखि ले, उर अंतरि करि सेव ॥२५५॥
दादू भीतरि पैसि करि, घट के जड़ै कपाट ।
साईं की सेवा करै, दादू अविगत घाट ॥२५६॥
घट परिचय सेवा करै, प्रत्तषि[3] देखै देव ।
अविनासी दर्सन करै, दादू पूरी सेव ॥२५७॥
पूजणहारे पासि है, देही माहैं देव ।
दादू ता कौं छाडि करि, बाहरि माँडी सेव ॥२५८॥

॥ परचय ॥

दादू रमता राम सौं, खेलै अंतर माहिं ।
उलटि समाना आप में, सो सुख कतहूँ नाहिं ॥२५९॥
(दादू) जे जन बेधे प्रीत सौं, सो जन सदा सजीव ।
उलटि समाने आप में, अंतर नाहीं पीव[4] ॥२६०॥
परघट खेलै पीव सौं, अगम अगोचर ठाँव ।
एक पलक का देखणा, जिवन मरण का नाँव ॥२६१॥
आतम माहैं राम है, पूजा ता की होइ ।
सेवा बंदन आरती, साध करैं सब कोइ ॥२६२॥
परचइ सेवा आरती, परचइ भोग लगाइ ।
दादू उस परसाद की, महिमा कही न जाइ ॥२६३॥

---

(१) आसरा, आधार। (२) अंत। (३) प्रत्यक्ष। (४) अंतर = परदा—प्रीतम से फ़र्क़ या पर्दा नहीं रह गया।

माहिं निरंजन देव है, माहैं सेवा होइ ।
माहिं उतारै आरती, दादू सेवग सोइ ॥२६४॥

(दादू) माहैं कीजे आरती, माहैं पूजा होइ ।
माहैं सतगुरु सेविये, बूझै बिरला कोइ ॥२६५॥

संत उतारैं आरती, तन मन मंगलचार ।
दादू बलि बलि वारणै[1], तुम पर सिरजनहार ॥२६६॥

दादू अबिचल आरती, जुग जुग देव अनंत ।
सदा अखंडित एक रस, सकल उतारैं संत ॥२६७॥

॥ सौंज ॥

सति राम आतमा बैश्नौ, सुबुधि भोमि संतोष थान ।
मूल मंत्र मन माला, गुर तिलक सति संजम ॥
सोल सुच्या ध्यान धोवती, काया कलस प्रेम जल ।
मनसा मंदिर निरंजन देव, आतमा पाती पुहुप प्रीति ॥
चेतना चंदन नवधा नाँव, भाव पूजा मति पात्र ।
सहज समर्पण सबद घंटा, आनंद आरती दया प्रसाद ॥
अनिनि[2] एक दसा तीरथ सतसंग, दान उपदेस ब्रत सुमिरन ।
खट गुन ज्ञान अजपा जाप, अनभै आचार मरजादा राम ॥
फल दरसन अभि अंतरि, सदा निरंतर सति सौंज[3] दादू वर्तंते ।
आत्मा उपदेस, अंतरगति पूजा २६८॥

पिव सौं खेलौं प्रेम रस, तौ जियरे जक[4] होइ ।
दादू पावै सेज सुख, पड़दा नाहीं कोइ ॥२६९॥

सेवग बिसरै आप कौं, सेवा बिसरि न जाइ ।
दादू पूछै राम कौं, सो तत कहि समझाइ ॥२७०॥

---

(१) बलिहारी। (२) "अनन्य" अर्थात् केवल एक जिस में दूसरे की गुंजाइश न हो। (३) आचार। (४) चैन, इतमीनान।

ज्यौं रसिया रस पीवताँ, आपा भूलै और ।
यौं दादू रहि गया एक रस, पीवत पीवत ठौर ॥२७१॥

जहँ सेवग तहँ साहिब बैठा, सेवग सेवा माहिं ।
दादू साईं सब करै, कोई जाणै नाहिं ॥२७२॥

(दादू) सेवग साईं बस किया, सौंप्या सब परिवार ।
तब साहिब सेवा करै, सेवग के दरबार ॥२७३॥

तेज पुंज को बिलसणा, मिलि खेलै इक ठाँव ।
भरि भरि पीवै राम रस, सेवा इस का नाँव ॥२७४॥

अरस परस मिलि खेलिये, तब सुख आनँद होइ ।
तन मन मंगल चहुँ दिसि भये, दादू देखै सोइ ॥२७५॥

॥ सुहाग ॥

मस्तक मेरे पाँव धरि, मंदिर माहैं आव ।
सइयाँ सोवै सेज पर, दादू चंपै पाँव ॥२७६॥

ये चारिउँ पद पलँग के, साईं के सुख सेज ।
दादू इन पर बैसि करि, साईं सेतीं हेज[1] ॥२७७॥

प्रेम लहरि की पालकी, आतम बैसै आइ ।
दादू खेलै पीव सौं, यहु सुख कह्या न जाइ ॥२७८॥

॥ सौंज ॥

(दादू) देव निरंजन पूजिये, पाती पंच चढ़ाइ ।
तन मन चंदन चरचिये, सेवा सुरति लगाइ ॥२७९॥

भगति भगति सब को कहै, भगति न जाणै कोइ ।
दादू भगति भगवंत की, देह निरंतर होइ ॥२८०॥

देही माहैं देव है, सब गुण थैं न्यारा ।
सकल निरंतर भरि रह्या, दादू का प्यारा ॥२८१॥

---

(१) हेत ।

जीव पियारे राम कौं, पाती पंच चढ़ाइ ।
तन मन मनसा सौंपि सब, दादू बिलम[1] न लाइ ॥२८२॥

॥ ध्यान ॥

सबद सुरति लै साजि चित, तन मन मनसा माहिं ।
मति बुधि पंचौं आतमा, दादू अनत न जाहिं ॥२८३॥

(दादू) तन मन पवना पंच गहि, ले राखै निज ठौर ।
जहाँ अकेला आप है, दूजा नाहीं और ॥२८४॥

(दादू) यहु मन सुरति समेट करि, पंचअपूठे आणि[2] ।
निकट निरंजन लागि रहु, संगि सनेही जाणि ॥२८५॥

मन चित मनसा आतमा, सहज सुरति ता माहिं ।
दादू पंचौं पूरि ले, जहँ धरती अंबर नाहिं ॥२८६॥

दादू भीगे प्रेम रस, मन पंचौं का साथ ।
मगन भये रस में रहे, तब सनमुख त्रिभुवननाथ ॥२८७॥

(दादू) सबदैं सबद समाइ ले, पर आतम सौं प्राण ।
यहु मन मन सौं बाँधि ले, चित्तैं चित्त सुजाण ॥२८८॥

(दादू) सहजैं सहज समाइ ले, ज्ञानैं बंध्या ज्ञान ।
सुत्रैं[3] सुत्र समाइ ले, ध्यानैं बंध्या ध्यान ॥२८९॥

(दादू) दृष्टैं दृष्टि समाइ ले, सुरतैं सुरति समाइ ।
समझैं समझि समाई ले, लै सौं लै ले लाइ ॥२९०॥

(दादू) भावैं भाव समाइ ले, भगतैं भगति समान ।
प्रेमैं प्रेम समाइ ले, प्रीतैं प्रीति रस पान ॥२९१॥

(दादू) सुरतैं सुरति समाइ रहु, अरु बैनहुँ सौं बैन ।
मन हीं सौं मन लाइ रहु, अरु नैनहुँ सौं नैन ॥२९२॥

---

(१) देर । (२) मन और सुरति को समेट कर पंच इंद्रियों को पीछे (अपूठे) डाल दो । (३) श्रोत्र = कान ।

जहाँ राम तहँ मन गया, मन तहँ नैना जाइ ।
जहँ नैना तहँ आतमा, दादू सहजि समाइ ॥२९३॥

॥ जीवन मुक्ति ॥

प्राण न खेलै प्राण सौं, मन ना खेलै मन ।
सबद न खेलै सबद सौं, दादू राम रतन ॥२९४॥
चित्त न खेलै चित्त सौं, बैन न खेलै बैन ।
नैन न खेलै नैन सौं, दादू परघट ऐन ॥२९५॥
पाक न खेलै पाक सौं, सार न खेलै सार ।
खूब न खेलै खूब सौं, दादू अंग अपार ॥२९६॥
नूर न खेलै नूर सौं, तेज न खेलै तेज ।
जोति न खेलै जोति सौं, दादू एकै सेज[1] ॥२९७॥
(दादू) पंच पदारथ मन रतन, पवणा माणिक होइ ।
आतम हीरा सुरति सौं, मनसा मोती पोइ ॥२९८॥
अजब अनूपं हार है, साईं सरिखा सोइ ।
दादू आतम राम गलि,[2] जहाँ न देखै कोइ ॥२९९॥
(दादू) पंचौं संगी संगि ले, आये आकासा ।
आसण अमर अलेख का, निर्गुण नित बासा ॥३००॥
प्राण पवन मन मगन है, सँगि सदा निवासा ।
परचा परम दयाल सौं, सहजैं सुख दासा ॥३०१॥
(दादू) प्राण पवन मन मणि बसै, त्रिकुटी केरे संधि ॥
पंचौं इंद्री पीव सौं, ले चरणौं बंधि ॥३०२॥
प्राण हमारा पीव सौं, यौं लागा सहिये ।
पुहप बास घृत दूध में, अब का सौं कहिये ॥३०३॥
पाहन लोह बिचि बासदेव, ऐसैं मिलि रहिये ।
दादू दीनदयाल सौं, संगहि सुख लहिये ॥३०४॥

(१) पलँग । (२) गले में ।

(दादू) ऐसा बड़ा अगाध है, सूषिम जैसा अंग।
पुहप बास थैं पातला, सो सदा हमारे संग ॥३०५॥
(दादू) जब दिल मिला दयाल सौं, तब अंतर कुछ नाहिं।
ज्यौं पाला पाणी कौं मिल्या, त्यौं हरि जन हरि माहिं ॥३०६॥
(दादू) जब दिल मिला दयाल सौं, तब सब पड़दा दूरि।
ऐसै मिलि एकै भया, बहु दीपक पावक पूरि ॥३०७॥
(दादू) जब दिल मिला दयाल सौं, तब अंतर नाहीं रेख।
नाना बिधि बहु भूषणाँ, कनक कसौटी एक ॥३०८॥
(दादू) जब दिल मिला दयाल सौं, तब पलक न पड़दा कोइ।
डाल मूल फल बीज में, सब मिलि एकै होइ ॥३०९॥
फल पाका बेली तजी, छिटकाया मुख माहिं।
साईं अपणा करि लिया, सो फिरि ऊगै नाहिं ॥३१०॥
(दादू) काया कटोरा दूध मन, प्रेम प्रीति सौं पाइ।
हरि साहिब यहि बिधि अंचवै, बेगा बार न लाइ ॥३११॥
टगा टगी[१] जीवण मरण, ब्रह्म बराबरि होइ।
परघट खेलै पीव सौं, दादू बिरला कोइ ॥३१२॥

॥ प्रेम प्याला ॥

दादू निवारा[२] ना रहै, ब्रह्म सरीखा होइ।
लै समाधि रस पीजिये, दादू जब लगि दोइ ॥३१३॥
बेखुद ख़बर हुशियार बाशद, खुद ख़बर पामाल।
बेक़ीमती मस्तानः ग़लताँ, नूरे प्यालै ख़याल ॥३१४[३]॥

(१) एक तार, टकटकी। (२) न्यारा, दूर। (३) साखी ३१४—दरअसल वही हुशियार (सचेत) है जो अपनी ख़बर से बेख़बर है यानी अपने तन मन की सुध बिसर गया है—जिस की अपने तन मन की ओर निगाह है (जो खुद ख़बर है) वही बेहोश और जलील (पामाल) है—ऐसा अनमोल जन मालिक की याद के नशे के प्रकाश (नूर प्यालै ख्याल) में मतवाला व झूमता रहता है।

दादू माता प्रेम का, रस में रह्या समाइ ।
अंत न आवै जब लगैं, तब लगि पीवत जाइ ॥३१५॥
पीया तेता सुख भया, बाकी बहु बैराग ।
ऐसैं जन थाकै नहीं, दादू उनमन लाग ॥३१६॥
निकट निरंजन लागि रहु, जब लगि अलख अभेव ।
दादू पीवै राम रस, निहकामी निज सेव ॥३१७॥
राम रटनि छाडै नहीं, हरि लै लागा जाइ ।
बीचैं हीं अटकै नहीं, कला कोटि दिखलाइ[1] ॥३१८॥
दादू हरि रस पीवताँ, कबहूँ अरुचि न होइ ।
पीवत प्यासा नित नवा[2] , पीवणहारा सोइ ॥३१९[3] ॥
(दादू) जैसे स्रवणाँ दोइ हैं, ऐसे होंहिं अपार ।
रामकथा रस पीजिये, दादू बारंबार ॥३२०॥
जैसे नैनाँ दोइ हैं, ऐसे होंहिं अनंत ।
दादू चंद चकोर ज्यौं, रस पीवै भगवंत ॥३२१॥
ज्यौं रसना मुख एक है, ऐसे होंहिं अनेक ।
तौ रस पीवै सेस ज्यौं, यौं मुख मीठा एक ॥३२२॥
ज्यौं घटि आतम एक है, ऐसे होंहिं असंख ।
भरि भरि राखै राम रस, दादू एकै अंक ॥३२३॥
ज्यौं ज्यौं पीवै राम रस, त्यौं त्यौं बढ़ै पियास ।
ऐसा कोई एक है, बिरला दादू दास ॥३२४॥
राता माता राम का, मतवाला महमंत ।
दादू पीवत क्यौं रहे,[4] जे जुग जाहिं अनंत ॥३२५॥

---

(१) अभ्यासी को रास्ते में बड़े मन-ललचावन चमत्कार व कौतुक दीख पड़ेंगे उन[illegible] अटकना न चाहिये । (२) नया । (३) हरि रस पीने से कभी अघाय नहीं; पीनेवाल[illegible] उसी का नाम है जिसे हर घूँट के साथ नई प्यास जगै । (४) पीने से क्यों रुके ।

दादू निर्मल जोति जल, बरिषा बारह मास ।
तेहिं रस राता प्राणिया, माता प्रेम पियास ॥३२६॥
रोम रोम रस पीजिये, एती रसना होइ ।
दादू प्यासा प्रेम का, यौं बिन तृपति न होइ ॥३२७॥
तन गृह छाडै लाज पति, जब रस माता होइ ।
जब लगि दादू सावधान, कदे[1] न छाडै कोइ ॥३२८॥
आँगणि एक कलाल[2] के, मतवाला रस माहिं ।
दादू देख्या नैन भरि, ता के दुबिधा नाहिं ॥३२९॥
पीवत चेतन जब लगैं, तब लगि लेवै आइ ।
जब माता दादू प्रेम रस, तब काहे कौं जाइ ॥३३०॥
दादू अंतर आतमा, पीवै हरि जल नीर ।
सौंज[3] सकल लै उद्धरै, निर्मल होइ सरीर ॥३३१॥
दादू मीठा राम रस, एक घूँट करि जाइ ।
पुणग[4] न पीछै कौं रहै, सब हिरदै माहिं समाइ ॥३३२॥
चिड़ी चंच भरि ले गई, नीर निघटि नहिं जाइ ।
ऐसा बासण ना किया, सब दरिया माहिं समाइ ॥३३३॥
दादू अमली राम का, रस बिन रह्या न जाइ ।
पलक एक पावै नहीं, तौ तबहि तलफि मरि जाइ ॥३३४॥
दादू राता राम का, पीवै प्रेम अघाइ ।
मतवाला दीदार का, माँगै मुक्ति बलाइ ॥३३५॥
उज्जल भँवरा हरि कँवल, रस रुचि बारह मास ।
पीवै निर्मल बासना, सो दादू निज दास ॥३३६॥
नैनहुँ सौं रस पीजिये, दादू सुरति सहेत ।
तन मन मंगल होत है, हरि सौं लागा हेत ॥३३७॥

(१) कभी । (२) सतगुरु । (३) शौच = सफ़ाई । (४) तनिक, कुछ ।

पिवै पिलावै राम रस, माता है हुसियार ।
दादू रस पीवै घणाँ, औरैं का उपगार ॥३३८॥

नाना बिधि पिया राम रस, केती भाँति अनेक ।
दादू बहुत बिमेक[1] सैं, आतम अविगत एक ॥३३९॥

परचै का पय[2] प्रेम रस, जे कोई पीवै ।
मतवाला माता रहै, यौं दादू जीवै ॥३४०॥

परचै का पय प्रेम रस, पीवै हित चित लाइ ।
मनसा बाचा कर्मना, दादू काल न खाइ ॥३४१॥

परचै पीवै राम रस, जुग जुग इस्थिर होइ ।
दादू अविचल आतमा, काल न लागै कोइ ॥३४२॥

परचै पीवै राम रस, सो अबिनासी अंग ।
काल मीच[3] लागै नहीं, दादू साईं संग ॥३४३॥

परचै पीवै राम रस, सुख में रहै समाइ ।
मनसा बाचा कर्मना, दादू काल न खाइ ॥३४४॥

परचै पीवै राम रस, राता सिरजनहार ।
दादू कुछ ब्यापै नहीं, ते छूटे संसार ॥३४५॥

अमृत भोजन राम रस, काहे न बिलसै खाइ ।
काल बिचारा क्या करै, रमि रमि राम समाइ ॥३४६॥

॥ सजीवन ॥

(दादू) जिव अजया[4] बिघ[5] काल है, छेली जाया सोइ ।
जब कुछ बस नहिं काल का, तब मीनी[6] का मुख होइ ॥३४७॥

मन लौरू[7] के पंख है, उनमन चढ़ै अकास ।
पग रहि पूरे साच के, रोपि[8] रह्या हरि पास ॥३४८॥

---

(१) बिबेक । (२) दूध । (३) मौत । (४) बकरी । (५) भेड़िया । (६) मिन्नी, बिल्ली । (७) पच्छी । (८) जमाना, लगाना ।

तन मन बिरष[1] बबूल का, काँटे लागे सूल ।
दादू माखण ह्वै गया, काहू का अस्थूल ॥३४६॥

दादू संखा[2] सबद है, सुनहा[3] संसा[4] मारि ।
मन मींडक सौं मारिये, संक्या[5] सर्प निवारि ॥३५०॥

दादू गाँभी[6] ज्ञान है, भंजन[7] है सब लोक ।
राम दूध सब भरि रह्या, ऐसा अमृत पोष ॥३५१॥

दादू झूठा जीव है, गढ़िया गोबिंद बैन ।
मंसा मूँगी[8] पंख सौं, सुरज सरीखे नैन ॥३५२॥

साईं दीया दत[9] घणाँ, तिसका वार न पार ।
दादू पाया राम धन, भाव भगति दीदार ॥३५३॥

॥ इति परचा को अंग समाप्त ॥ ४ ॥

५—जरणा[10] को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥

को साधू राखै राम धन, गुर बाइक बचन बिचार ।
गहिला दादू क्यों रहै, मरकत हाथ गँवार ॥ २[11] ॥

(दादू) मन हीं माहैं समझि करि, मन हीं माहिं समाइ ।
मन हीं माहैं राखिये, बाहरि कहि न जणाइ ॥ ३ ॥

---

(१) वृक्ष । (२) सिंह । (३) कुत्ता । (४) संशय, चिंता । (५) शंका=डर । (६) घी । (७) भाजन=बरतन । (८) हरा । (९) दात, बख़शिश । (१०) जरणा गुजराती भाषा में जरंबु शब्द से बना है, इस का अर्थ पचाना, हज़म करना, धारण करना, गुप्त रखना, शांति, क्षमा इत्यादि है—पं० चंद्रिका प्रसाद । (११) कोई बिरला साधू गुर बचन को बिचार कर नाम रूपी धन को सम्हाले रखता है : यह धन मूर्खों के पास नहीं टिकता जैसे गँवार के पल्ले रत्न [मरकत=पन्ना] ।

दादू समझि समाइ रहु, बाहरि कहि न जणाइ ।
दादू अद्भुत देखिया, तहँ ना को आवै जाइ ॥ ४ ॥
कहि कहि क्या दिखलाइये, साईं सब जाणै ।
दादू परघट का कहै, कुछ समझि सयाणै ॥ ५ ॥
दादू मन ही माहैं ऊपजै, मनहीं माहिं समाइ ।
मन हीं माहैं राखिये, बाहरि कहि न जणाइ ॥ ६ ॥
लै बिचार लागा रहै, दादू जरता जाइ ।
कबहूँ पेट न आफरै[1] , भावै तेता खाइ ॥ ७ ॥
जिनि खोवै दादू राम धन, रिदै राखि जिनि जाइ ।
रतन जतन करि राखिये, चिंतामणि चित लाइ ॥ ८ ॥
सोई सेवग सब जरै, जेती उपजै आइ ।
कहि न जणावै और कौं, दादू माहिं समाइ ॥ ९ ॥
सोई सेवग सब जरै, जेता रस पीया ।
दादू गूझ[2] गँभीर का, परकास न कीया ॥१०॥
सोई सेवग सब जरै, जे अलख लखावा ।
दादू राखै राम धन, जेता कुछ पावा ॥११॥
सोई सेवग सब जरै, प्रेम रस खेला ।
दादू सो सुख कस कहै, जहँ आप अकेला ॥१२॥
सोई सेवग सब जरै, जेता घट परकास ।
दादू सेवग सब लखै, कहि न जणावै दास ॥१३॥
अजर जरै रसना झरै, घटि माहिं समावै ।
दादू सेवग सो भला, जे कहि न जणावै ॥१४॥
अजर जरै रसना झरै, घट अपना भरि लेइ ।
दादू सेवग सो भला, जारै जाण न देइ ॥१५॥

(१) अफरै, फूलै । (२) गूढ़, गुप्त ।

अजर जरै रसना झरै, जेता सब पीवै ।
दादू सेवग सो भला, राखै रस जीवै ॥१६॥
अजर जरै रसना झरै, पीवत थाकै नाहिं ।
दादू सेवग सो भला, भरि राखै घट माहिं ॥१७॥
जरणा जोगी जुगि जुगि जीवै, झरणा मरि मरि जाइ ।
दादू जोगी गुरमुखी, सहजैं रहै समाइ ॥१८॥
जरणा जोगी जुगि रहै, झरणा परलै होइ ।
दादू जोगी गुरमुखी, सहजि समाना सोइ ॥१९॥
जरणा जोगी थिर रहै, झरणा घट फूटै ।
दादू जोगी गुरमुखी, काल थैं छूटै ॥२०॥
जरणा जोगी जग-पती, अविनासी अवधूत ।
दादू जोगी गुरमुखी, निरंजन का पूत ॥२१॥
जरै सु नाथ निरंजन बाबा, जरै सु अलख अभेव ।
जरै सु जोगी सब की जीवनि, जरै सु जग में देव ॥२२॥
जरै सु आप उपावनहारा, जरै सु जग-पति साईं ।
जरै सु अलख अनूप है, जरै सु मरणा नाहीं ॥२३॥
जरै सु अविचल राम है, जरै सु अमर अलेख ।
जरै सु अविगत आप है, जरै सु जग में एक ॥२४॥
जरै सु अविगत आप है, जरै सु अपरंपार ।
जरै सु अगम अगाध है, जरै सु सिरजनहार ॥२५॥
जरै सु निज निरकार है, जरै सु निज निर्धार ।
जरै सु निज निर्गुण मई, जरै सु निज तत सार ॥२६॥
जरै सु पूरण ब्रह्म है, जरै सु पूरणहार ।
जरै सु पूरण परम गुर, जरै सु प्राण हमार ॥२७॥

(दादू) जरै सु जोति सरूप है, जरै सु तेज अनंत ।
जरै सु झिलिमिलि नूर है, जरै सु पुंज रहंत ॥२८॥
(दादू) जरै सु परम प्रकास है, जरै सु परम उजास ।
जरै सु परम उदीत है, जरै सु परम बिलास ॥२९॥
(दादू) जरै सु परम पगार है, जरै सु परम बिगास ।
जरै सु परम प्रभास है, जरै सु परम निवास ॥३०॥
(दादू) एक बोल भूले हरी, सु कोइ न जाणै प्राण ।
औगुण मन आणै नहीं, और सब जाणै हरि जाण ॥३१॥
(दादू) तुम जीवों के औगुण तजे, सु कारण कौण अगाध ।
मेरी जरणा देखि करि, मति को सीखै साध ॥३२॥
पवना पानी सब पिया, धरती अरु आकास ।
चंद सूर पावक मिले, पंचों एक गरास ॥३३॥
चौदह तीन्यूँ लोक सब, ठूँगे[1] साँसै साँस ।
दादू साधू सब जरै, सतगुर के बेसास[2] ॥३४॥

॥ इति जरणा को अंग समाप्त ॥ ५ ॥

६—हैरान को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
रतन एक बहु पारिखू, सब मिलि करैं विचार ।
गूँगे गहिले बावरे, दादू वार न पार ॥ २ ॥
केते पारिख जौहरी, पंडित ज्ञाता ध्यान ।
जाण्या जाइ न जाणिये, का कहि कथिये ज्ञान ॥ ३ ॥

---

(१) ठूँसे, निगले (२) बिश्वास ।

केते पारिख पचि मुए, कीमति कही न जाइ ।
दादू सब हैरान हैं, गूँगे का गुड़ खाइ ॥ ४ ॥
सब ही ज्ञानी पंडिता, सुर नर रहे उरझाइ ।
दादू गति गोबिंद की, क्यों ही लखी न जाइ ॥ ५ ॥
जैसा है तैसा नाउँ तुम्हारा, ज्यौं है त्यौं कहि साईं ।
तूँ आपै जाणै आप कौं, तहँ मेरी गमि नाहीं ॥ ६ ॥
केते पारिख अंत न पावैं, अगम अगोचर माहीं ।
दादू कीमति कोइ न जाणै, खीर नीर की नाईं ॥ ७ ॥
जीव ब्रह्म सेवा करै, ब्रह्म बराबरि होइ ।
दादू जाणै ब्रह्म कौं, ब्रह्म सरीखा सोइ ॥ ८ ॥
वार पार को ना लहै, कीमति लेखा नाहिं ।
दादू एकै नूर है, तेज पुंज सब माहिं ॥ ९ ॥
हस्त पाँव नहिं सीस मुख, स्रवन नेत्र कहुँ कैसा ।
दादू सब देखै सुणै, कहै गहै है ऐसा ॥१०॥
पाया पाया सब कहैं, केतक देहुँ दिखाइ ।
कीमति किनहूँ ना कही, दादू रहु ल्यौ लाइ ॥११॥
अपना भंजन[१] भरि लिया, उहाँ उता ही जाणि ।
अपणी अपणी सब कहैं, दादू बिड़द[२] बखाणि ॥१२॥
पार न देवै आपणा, गोप गूझ[३] मन माहिं ।
दादू कोई ना लहै, केते आवैं जाहिं ॥१३॥
गूँगे का गुड़ का कहूँ, मन जानत है खाइ ।
त्यौं राम रसाइण पीवताँ, सो सुख कह्या न जाइ ॥१४॥
(दादू) एक जीभ केता कहूँ, पूरण ब्रह्म अगाध ।
बेद कतेबाँ मिति[४] नहीं, थकित भये सब साध ॥१५॥

(१) बरतन। (२) प्रतिज्ञा। (३) गुप्त और छिपा। (४) अंदाज़।

दादू मेरा एक मुख, किरति अनंत अपार ।
गुण केते परिमिति[1] नहीं, रहे बिचारि बिचारि ॥१६॥
सकल सिरोमणि नाँउ है, तूँ है तैसा नाहिं ।
दादू कोई ना लहै, केते आवैं जाहिं ॥१७॥
दादू केते कहि गये, अंत न आवे ओर ।
हम हूँ कहते जात हैं, केते कहसी होर[2] ॥१८॥
(दादू) मैं का जानूँ का कहूँ, उस बलिये[3] की बात ।
क्या जानूँ क्योंहीं रहै, मो पै लख्या न जात ॥१६॥
दादू केते चलि गये, थाके बहुत सुजान ।
बातौं नाँव न नीकलै, दादू सब हैरान ॥२०॥
ना कहिं दिट्ठा ना सुण्या, ना कोइ आखणहार ।
ना कोइ उत्थौं थीं फिर्या, ना उर वार न पार ॥२१॥
नहीं मृतक नहिं जीवता, नहिं आवै नहिं जाइ ।
नहिं सूता नहिं जागता, नहिं भूखा नहिं खाइ ॥२२॥
न तहाँ चुप नहिं बोलणाँ, मैं तैं नाहीं कोइ ।
दादू आपा पर नहीं, न तहाँ एक न दोइ ॥२३॥
एक कहूँ तौ दोइ है, दोइ कहूँ तौ एक ।
यौं दादू हैरान है, ज्यौं है त्यौं हीं देख ॥२४॥
देखि दिवाने ह्वै गये, दादू खरे सयान ।
वार पार कोइ ना लहै, दादू है हैरान ॥२५॥
(दादू) करणहार जे कुछ किया, सोई हूँ करि जाणि ।
जे तूँ चतुर सयाना जानराइ[4], तौ याही परवाणि ॥२६॥
(दादू) जिन मोहन बाजी रची, सो तुम पूछौ जाइ ।
अनेक एक थैं क्यौं किये, साहिब कहि समझाइ ॥२७॥

---

(१) नाप, तादाद, हद । (२) और । (३) बलवान । (४) जानकारों का राजा, भारी जनैया ।

घट परिचै सब घट लखै, प्राण परीचै प्राण ।
ब्रह्म परीचै पाइये, दादू है हैराण ॥ २८ ॥ (४-१५६)
चर्म दृष्टि देखे बहुत, आतम दृष्टी एकि ।
ब्रह्म दृष्टि परिचै भया, दादू बैठा देखि ॥२६॥ (४-१५७)
येई नैनाँ देह के, येई आतम होइ ।
येई नैनाँ ब्रह्म के, दादू पलटे दोइ ॥ ३० ॥ (४-१५८)

॥ इति हैरान को अंग समाप्त ॥६॥

७—लय को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः १ ॥
(दादू) लय लागी तब जाणिये, जे कबहूँ छूटि न जाइ ।
जीवत यौं लागी रहै, मूवाँ मंझि समाइ ॥ २ ॥
(दादू) जे नर प्राणी लय गता, सोई गत ह्वै जाइ ।
जे नर प्राणी लय रता, सो सहजैं रहै समाइ ॥ ३ ॥
सब तजि गुण आकार के, निहचल मन ल्यौ लाइ ।
आतम चेतन प्रेम रस, दादू रहै समाइ ॥ ४ ॥
तन मन पवना पंच गहि, निरंजन ल्यौ लाइ ।
जहँ आतम तहँ परआतमा, दादू सहजि समाइ ॥ ५ ॥
अर्थ अनूपम आप है, और अनरथ भाई ।
दादू ऐसी जानि करि, ता सौं ल्यौ लाई ॥ ६ ॥
ज्ञान भगति मन मूल गहि, सहज प्रेम ल्यौ लाइ ।
दादू सब आरंभ तजि, जिनि काहू संग जाइ ॥ ७ ॥
पहिली था सो अब भया, अब सो आगैं होइ ।
दादू तीनौं ठौर की, बूझै बिरला कोइ ॥ ८ ॥

जोग समाधि सुख सुरति सौं, सहजैं सहजैं आव।
मुक्ता द्वारा महल का, इहै भगति का भाव ॥ ९ ॥
सहज सुन्नि मन राखिये, इन दून्यूँ के माहिं।
लय समाधि रस पीजिये, तहाँ काल भय नाहिं ॥ १० ॥
(दादू) बिन पाइन का पंथ है, क्योंकरि पहुँचै प्राण। (१-१३५)
बिकट घाट औघट खरे, माहिं सिखर असमान ॥ ११ ॥
मन ताजी चेतन चढ़ै, ल्यौ की करै लगाम। (१-१३६)
सब्द गुरू का ताजणाँ, कोइ पहुँचै साध सुजान ॥ १२ ॥
प्रश्न–किहिं मारग ह्वै आइया, किहिं मारग ह्वै जाइ।
दादू कोई ना लहै, केते करैं उपाइ ॥ १३ ॥
उत्तर–सुन्नहिं मारग आइया, सुन्नहिं मारग जाइ।
चेतन पैंडा सुरति का, दादू रहु ल्यौ लाइ ॥ १४ ॥
(दादू) पारब्रह्म पैंडा दिया, सहज सुरति लै सार।
मन का मारग माहिं घर, संगी सिरजनहार ॥ १५ ॥
राम कहै जिस ज्ञान सौं, अमृत रस पीवै।
दादू दूजा छाडि सब, लै लागी जीवै ॥ १६ ॥
राम रसाइन पीवताँ, जीव ब्रह्म ह्वै जाइ।
दादू आतम राम सौं, सदा रहै ल्यौ लाइ ॥ १७ ॥
सुरति समाइ सनमुख रहै, जुगि जुगि जन पूरा।
दादू प्यासा प्रेम का, रस पीवै सूरा ॥ १८ ॥
(दादू) जहाँ जगत-गुर[1] रहत है, तहँ जे सुरति समाइ।
तौ इन हीं नैनौं उलटि करि, कौतिग[2] देखै आइ ॥ १९ ॥
अख्यूँ पसण खे पिरी, भीरे उलटौं मंझ।
जिते वेठो माँ पिरी, नीहारी दौ हंझ ॥ २०[3] ॥

(१) निरंजन। (२) कौतुक। (३) आँखों को अंतर में फेर कर प्रीतम को देख, जहाँ मेरा प्रीतम बैठा है उस को हंस ही लख सकते हैं।

दादू उलटि अपूठा[1] आप में, अंतरि सोधि सुजाण ।
सो ढिग तेरी बावरे, तजि बाहिर की बाणि[2] ॥ २१ ॥
सुरति अपूठी[1] फेरि करि, आतम माहैं आण ।
लागि रहै गुरदेव सौं, दादू सोई सयाण ॥ २२ ॥
जहँ आतम तहँ राम है, सकल रह्या भरपूर ।
अंतरगति ल्यौ लाइ रहु, दादू सेवग सूर ॥ २३ ॥
(दादू) अंतरगति ल्यौ लाइ रहु, सदा सुरति सौं गाइ ।
यहु मन नाचै मगन ह्वै, भावै ताल बजाइ ॥ २४ ॥
(दादू) गावै सुरति सौं, बाणी बाजै ताल ।
यहु मन नाचै प्रेम सौं, आगैं दीनदयाल ॥ २५ ॥
(दादू) सब बातन की एक है, दुनिया थैं दिल दूरि ।
साईं सेती संग करि, सहज सुरति ले पूरि ॥ २६ ॥
दादू एक सुरति सौं सबर है, पंचौं उनमन लाग ।
यहु अनभै उपदेस यहु, यहु परम जोग बैराग ॥ २७ ॥
(दादू) सहजैं सुरति समाइ ले, पारब्रह्म के अंग ।
अरस परस मिलि एक ह्वै, सनमुख रहिबा संग ॥ २८ ॥
सुरति सदा सनमुख रहै, जहाँ तहाँ लैलीन ।
सहज रूप सुमिरन करै, निहकर्मी दादू दीन ॥ २९ ॥
सुरति सदा स्याबति[3] रहै, तिन के मोटे भाग ।
दादू पीवै राम रस, रहै निरंजन लाग ॥ ३० ॥
दादू सेवा सुरति सौं, प्रेम प्रीति सौं लाइ ।
जहँ अबिनासी देव है, तहँ सुरति बिना को जाइ ॥ ३१ ॥
(दादू) ज्यौं वै बरत गगन थैं टूटै, कहाँ धरनि कहँ ठाम ।
लागी सुरति अंग थैं छूटै, सो कत[4] जीवै राम ॥ ३२ ॥

(१) पीछे । (२) सुभाव, आदत । (३) साबित = स्थिर । (४) कहाँ ।

सहज जोग सुख में रहै, दादू निर्गुण जाणि ।
गंगा उलटी फेरि करि, जमुना माहैं आणि ॥ ३३ ॥
परआतम सो आतमा, ज्यौं जल उदक[1] समान ।
तन मन पाणी लौंण ज्यौं, पावै पद निर्बाण ॥ ३४ ॥
मन हीं सौं मन सेविये, ज्यौं जल जलहि समाय ।
आतम चेतन प्रेम रस, दादू रहु ल्यौ लाइ ॥ ३५ ॥
छाड़ै सुरति सरीर कौं, तेज पुंज में आइ । (४-१६२)
दादू ऐसैं मिलि रहै, ज्यौं जल जलहि समाइ ॥ ३६ ॥
यौं मन तजै सरीर कौं, ज्यौं जागत सो[2] जाइ ।
दादू बिसरै देखतां, सहजि सदा ल्यौ लाइ ॥ ३७ ॥
जिहि आसणि पहिली प्राण था, तेहि आसणि ल्यौ लाइ ।
जे कुछ था सोई भया, कछू न व्यापै आइ ॥ ३८ ॥
तन मन अपणा हाथ करि, ताही सौं ल्यौ लाइ ।
दादू निर्गुण राम सौं, ज्यौं जल जलहि समाइ ॥ ३९ ॥
एक मना लागा रहै, अंत मिलैगा सोइ ।
दादू जाके मन बसै, ता कौं दरसन होइ ॥ ४० ॥
दादू निबहै त्यूँ चलै, धरि धीरज मन माहिं ।
परसैगा पिव एक दिन, दादू थाकै नाहिं ॥ ४१ ॥
जब मन मिर्तक ह्वै रहै, इंद्री बल भागा ।
काया के सब गुण तजै, नीरंजन लागा ॥ ४२ ॥
आदि अन्त मधि एक रस, टूटै नहिं धागा ।
दादू एकै रहि गया, तब जाणी जागा ॥ ४३ ॥
जब लगि सेवग तन धरै, तब लगि दूसर आहि ।
एकमेक ह्वै मिलि रहै, तौ रस पीवन थैं जाहि ॥ ४४ ॥

---

(१) जल । (२) सोय जाय, नींद में हो जाय ।

ये दून्यूँ ऐसी कहैं, कीजे कौण उपाइ ।
ना मैं एक न दूसरा, दादू रहु ल्यौ लाइ ॥४५॥

॥ इति लय को अंग समाप्त ॥ ७ ॥

८—निहकर्मी पतिव्रता को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
एक तुम्हारे आसिरै, दादू इहि बेसास[1] ।
राम भरोसा तोर है, नहिं करणी की आस ॥ २ ॥
रहणी राजस ऊपजै, करणी आपा होइ ।
सब थैं दादू निर्मला, समिरण लागा सोइ ॥ ३ ॥
(दादू) मन अपणा लैलीन करि, करणी सब जंजाल ।
दादू सहजैं निर्मला, आपा मेटि सँभाल ॥ ४ ॥
(दादू) सिद्धि हमारे साइयाँ, करामात करतार ।
रिद्धि हमारे राम हैं, आगम अलख अपार ॥ ५ ॥
गोब्यंद गोसाईं तुम्हें अम्हंचा[2] गुरू, तुम्हें अम्हंचा ज्ञान ।
तुम्हें अम्हंचा देव, तुम्हें अम्हंचा ध्यान ॥ ६ ॥
तुम्हें अम्हंची पूजा, तुम्हें अम्हंची पाती ।
तुम्हें अम्हंचा तीरथ, तुम्हें अम्हंचा जाती ॥ ७ ॥
तुम्हें अम्हंचा नाद, तुम्हें अम्हंचा भेद ।
तुम्हें अम्हंचा पुराण, तुम्हें अम्हंचा बेद ॥ ८ ॥
तुम्हें अम्हंची जुगत, तुम्हें अम्हंचा जोग ।
तुम्हें अम्हंचा बैराग, तुम्हें अम्हंचा भोग ॥ ९ ॥

---

(१) बिश्वास । (२) अमचा=हमारा ।

तुम्हें अम्हंची जीवनि, तुम्हें अम्हंचा जप।
तुम्हें अम्हंचा साधन, तुम्हें अम्हंचा तप ॥१०॥
तुम्हें अम्हंचा सील, तुम्हें अम्हंचा संतोष।
तुम्हें अम्हंची मुकति, तुम्हें अम्हंचा मोष ॥११॥
तुम्हें अम्हंचा सिव, तुम्हें अम्हंची सक्ति।
तुम्हें अम्हंचा आगम, तुम्हें अम्हंची उक्ति ॥१२॥
तूँ सति तूँ अवगति तूँ अपरंपार, तूँ निराकार तुम्हंचा[1] नाम।
दादू चा[2] बिस्राम, देहु देहु अवलंबन राम ॥१३॥
(दादू) राम कहूँ ते जोड़िबा, राम कहूँ ते साखि।
राम कहूँ ते गाइबा, राम कहूँ ते राखि ॥१४[3]॥
(दादू) कुल हमारे केसवा, सगा त सिरजनहार।
जाति हमारी जगत-गुर, परमेसुर परिवार ॥१५॥
(दादू) एक सगा संसार में, जिन हम सिरजे सोइ।
मनसा बाचा कर्मना, और न दूजा कोइ ॥१६॥
साईं सन्मुख जीवताँ, मरताँ सन्मुख होइ।
दादू जीवण मरण का, सोच करे जिनि कोइ ॥१७॥
साहिब मिल्या त सब मिले, भेंटे भेंटा होइ।
साहिब रह्या त सब रहे, नहीं त नाहीं कोइ ॥१८॥
साहिब रहताँ सब रह्या, साहिब जाताँ जाइ।
दादू साहिब राखिये, दूजा सहज सुभाइ ॥१९॥
सब सुख मेरे साइयाँ, मंगल अति आनंद।
दादू सज्जन सब मिले, जब भेंटे परमानंद ॥२०॥

---

(१) तुमचा = तुम्हारा। (२) का। (३) नाम का सुमिरन ही मेरा पद जोड़ना है, वही मेरी साखी, वही मेरा गाना, वही मेरी धारना है—पं० चं० प्र०।

दादू रीझै राम पर, अनत न रीझै मन ।
मीठा भावै एक रस, दादू सोई जन ॥ २१ ॥
(दादू) मेरे हिरदै हरि बसै, दूजा नाहीं और ।
कहौ कहाँ धौं राखिये, नहीं आन कौं ठौर ॥ २२ ॥
(दादू) नारायण नैना बसै, मन हीं मोहनराइ ।
हिरदा माहैं हरि बसै, आतम एक समाइ ॥ २३ ॥
परम कथा उस एक की, दूजा नाहीं आन ।
दादू तन मन लाइ करि, सदा सुरति रस पान ॥ २४[1] ॥
(दादू) तन मन मेरा पीव सौं, एक सेज सुख सोइ ।
गहिला लोग न जाणही, पचि पचि आपा खोइ ॥ २५ ॥
(दादू) एक हमारे उरि बसै, दूजा मेल्या[2] दूरि ।
दूजा देखत जाइगा, एक रह्या भरपूर ॥ २६ ॥
निहचल का निहचल रहै, चंचल का चलि जाइ ।
दादू चंचल छाडि सब, निहचल सौं ल्यौ लाइ ॥ २७ ॥
साहिब रहताँ सब रह्या, साहिब जाताँ जाइ ।
दादू साहिब राखिये, दूजा सहज सुभाइ ॥ २८ ॥
मन चित मनसा पलक में, साईं दूरि न होइ ।
निहकामी निरखै सदा, दादू जीवनि सोइ ॥ २९ ॥
जहाँ नाँव तहँ नीति चाहिये, सदा राम का राज ।
निर्बिकार तन मन भया, दादू सीझै[3] काज ॥ ३० ॥
जिसकी खूबी खूब सब, सोई खूब सँभारि ।
दादू सुंदरि खूब सौं, नख सिख साज सँवारि ॥ ३१ ॥
(दादू) पंच अभूषन पीव करि, सोलह सब ही ठाँव ।
सुंदरि यहु सिंगार करि, लै लै पिव का नाँव ॥ ३२ ॥

---

(१) यह सखी केवल साधू दयालसरन जी की लिपि में दी हुई है। (२) डाला।
(३) सरे, बने।

यह ब्रत सुंदरि लै रहै, तौ सदा सुहागनि होइ।
दादू भावै पीव कौं, ता सम और न कोइ ॥ ३३ ॥
साहिब जी का भावताँ, कोइ करै कलि माहिं।
मनसा बाचा कर्मना, दादू घट घट नाहिं ॥ ३४ ॥
अज्ञा माहैं बैसै ऊबै,[1] अज्ञा आवै जाइ।
अज्ञा माहिं लेवै देवै, अज्ञा पहिरै खाइ ॥ ३५ ॥
अज्ञा माहैं बाहिर भीतरि, अज्ञा रहै समाइ।
अज्ञा माहैं तन मन राखै, दादू रहि ल्यौ लाइ ॥ ३६ ॥
पतिब्रता गृह आपणे, करै खसम की सेव।
ज्यौं राखै त्यौं हीं रहै, अज्ञाकारी टेव[2] ॥ ३७ ॥
(दादू) नीच ऊँच कुल सुंदरी, सेवा सारी होइ।
सोई सुहागनि कीजिये, रूप न पीजै धोइ ॥ ३८ ॥
(दादू) जब तन मन सौंप्या राम कौं, ता सनि का बिभिचार।
सहज सील संतोष सत, प्रेम भगति लै सार ॥ ३९ ॥
पर पुरिषा[3] सब परिहरै, सुन्दरि देखै जागि।
अपणा पीव पिछाणि करि, दादू रहिये लागि ॥ ४० ॥
आन पुरिष हूँ बहनड़ी, परम पुरिष भरतार।
हूँ अबला समझौं नहीं, तूँ जाणै करतार ॥ ४१ ॥
जिस का तिस कौं दीजिये, साईं सन्मुख आइ।
दादू नख सिख सौंपि सब, जिनि यहु बंट्या[4] जाइ ॥ ४२ ॥
सारा दिल साईं सौं राखै, दादू सोई सयान।
जे दिल बंटै आपणा, सो सब मूढ़ अयान ॥ ४३ ॥
(दादू) सारैं सौं दिल तोरि करि, साईं सौं जोरै।
साईं सेती जोरि करि, काहे कौं तोरै ॥ ४४ ॥

(१) बैठे उठै। (२) आदत, सुभाव। (३) पुरुष। (४) बाँटा।

साहिब देवै राखणा[1], सेवग दिल चोरै।
दादू सब धन साह का, भूला मन थोरै[2] ॥ ४५ ॥

(दादू) मनसा बाचा कर्मना, अंतरि आवै एक।
ता कौं परतषि[3] रामजी, बातैं और अनेक ॥ ४६ ॥

(दादू) मनसा बाचा कर्मना, हिरदै हरि का भाव।
अलख पुरिष आगे खड़ा, ता कै त्रिभुवन राव ॥ ४७ ॥

(दादू) मनसा बाचा कर्मना, हरिजी सौं हित होइ।
साहिब सन्मुख संगि है, आदि निरंजन सोइ ॥ ४८ ॥

(दादू) मनसा बाचा कर्मना, आतुर करणि राम।
समरथ साईं सब करै, परगट पूरे काम ॥ ४९ ॥

नारी पुरिषा देखि करि, पुरिषा नारी होइ।
दादू सेवग राम का, सीलवंत है सोइ ॥ ५० ॥

पर पुरिषा रत बाँझणी[4], जाणौं जे फल होइ।
जनम बिगोवै आपणा, दादू निर्फल सोइ ॥ ५१ ॥

दादू तजि भरतार कौं, पर पुरिषा रत होइ।
ऐसी सेवा सब करै, राम न जाणौं सोइ ॥ ५२ ॥

नारी सेवग तब लगैं, जब लग साईं पास।
दादू परसै आन कौं, ता की कैसी आस ॥ ५३ ॥

दादू नारी पुरिष कौं, जाणौं जे बसि होइ।
पिव की सेवा न करै, कामणिगारी[5] सोइ ॥ ५४ ॥

कीया मन का भावताँ, मेटी आज्ञाकार।
क्या ले मुख दिखलाइये, दादू उस भरतार ॥ ५५ ॥

---

(१) अमानत। (२) तुच्छ बुद्धि। (३) प्रत्यक्ष। (४) बाँझ। (५) टोनहिन, डाइन।

करामाति[१] कलंक है, जा के हिरदे एक।
अति आनंद बिभिचारणी, जा के खसम अनेक ॥ ५६ ॥
(दादू) पतिब्रता के एक है, बिभिचारणि के दोइ।
पतिब्रता बिभिचारणी, मेला क्योंकरि होइ ॥ ५७ ॥
पतिब्रता के एक है, दूजा नाहीं आन।
बिभिचारणि के दोइ हैं, पर घर एक समान ॥ ५८ ॥
(दादू) पुरिष हमारा एक है, हम नारी बहु अंग।
जे जे जैसी ताहि सौं, खेलै तिसही रंग ॥ ५९ ॥
दादू रहता राखिये, बहता देहु बहाइ।
बहते संग न जाइये, रहते सौं ल्यौ लाइ ॥ ६० ॥
जिनि बाझै काहू कर्म सौं, दूजे आरँभ[२] जाइ।
दादू एकै मूल गहि, दूजा देइ बहाइ ॥ ६१ ॥
बावैं देखि न दाहिणै, तन मन सन्मुख राखि।
दादू निर्मल तत्त गहि, सत्य सबद यहु साखि ॥ ६२ ॥
(दादू) दूजा नैन न देखिये, स्रवणहुँ सुनै न जाइ।
जिभ्या आन न बोलिये, अंग न और सुहाइ ॥ ६३ ॥
चरणहुँ अनत न जाइये, सब उलटा माहिं समाइ।
उलटि अपूठा आप में, दादू रहु ल्यौ लाइ ॥ ६४ ॥
(दादू) दूजे अंतर होत है, जिनि आणै मन माहिं।
तहँ ले मन कौं राखिये, जहँ कुछ दूजा नाहिं ॥ ६५ ॥
भरम तिमर भाजै नहीं, रे जिय आन उपाइ।
दादू दीपक साजि ले, सहजैं ही मिटि जाइ ॥ ६६ ॥
(दादू) सो बेदन[३] नहिं बावरे, आन[४] किये जे जाइ।
सब दुख-भंजन[५] साइयाँ, ताही सौं ल्यौ लाइ ॥ ६७ ॥

---

(१) चमत्कार, सिद्धि शक्ति। (२) नया काम, उलझेड़ा। (३) पीड़ा। (४) दूसरे के। (५) दुख-निवारन।

(दादू) औषदि मूली कुछ नहीं, ये सब झूठी बात।
जे औषदि ही जीविये, तौ काहे कौं मरि जात ॥ ६८ ।
मूल गहै सो निहचल बैठा, सुख में रहै समाइ।
डाल पात भरमत फिरै, बेदौं[1] दिया बहाइ ॥ ६९ ॥
सौ धक्का सुनहाँ[2] कौं देवै, घर बाहरि काढै।
दादू सेवग राम का, दरबार न छाडै ॥ ७० ॥
साहिब का दर छाडि करि, सेवग कहीं न जाइ।
दादू बैठा मूल गहि, डालौं फिरै बलाइ ॥ ७१ ॥
(दादू) जब लग मूल न सींचिये, तब लग हर्‌या न होइ।
सेवा निरफल सब गई, फिरि पछताना सोइ ॥ ७२ ॥
दादू सींचे मूल के, सब सींच्या बिस्तार।
दादू सींचे मूल बिन, बादि गई बेगार ॥ ७३ ॥
सब आया उस एक में, डाल पान फल फूल।
दादू पीछैं क्या रह्या, जब निज पकड़्या मूल ॥ ७४ ॥
खेत न निपजै बीज बिन, जल सींचे क्या होइ।
सब निरफल दादू राम बिन, जाणत है सब कोइ ॥७५॥
(दादू) जब मुख माहैं मेलिये, तब सबही तृप्ता होइ।
मुख बिन मेले आन दिस, तृप्ति न मानै कोइ ॥ ७६ ॥
जब देव निरंजन पूजिये, तब सब आया उस माहिं।
डाल पान फल फूल सब, दादू न्यारे नाहिं ॥ ७७ ॥
दादू टीका राम कौं, दूसर दीजै नाहिं।
ज्ञान ध्यान तप भेष पष[3], सब आये उस माहिं ॥ ७८ ॥
साधू राखै राम कौं, संसारी माया।
संसारी पालव[4] गहै, मूल साधू पाया ॥ ७९ ॥

---

(१) बेद कतेब। (२) कुत्ता। (३) पत्त या टेक। (४) पत्ता।

दादू जे कुछ कीजिये, अविगत बिन आराध ।
कहिबा सुणिबा देखिबा, करिबा सब अपराध ॥ ८० ॥

सब चतुराई देखिये, जे कुछ कीजै आन ।
दादू आपा सौंपि सब, पिव कौं लेहु पिछान ॥ ८१ ॥

दादू दूजा कुछ नहीं, एक सत्त करि जाणि ।
दादू दूजा क्या करै, जिन एक लिया पहिचाणि ॥ ८२ ॥

(दादू) कोई बांछै मुकति फल, कोइ अमरापुरि बास ।
कोई बांछै परम गति, दादू राम मिलन की प्यास ॥ ८३ ॥

तुम हरि हिरदे हेत सौं, प्रगटहु परमानन्द ।
दादू देखै नैन भरि, तब केता होइ अनंद ॥ ८४ ॥

प्रेम पियाला राम रस, हम कौं भावै येहि ।
रिधि सिधि माँगै मुकति फल, चाहै तिन कौं देहि ॥ ८५ ॥

कोटि बरस क्या जीवणा, अमर भये क्या होइ ।
प्रेम भगति रस राम बिन, का दादू जीवनि सोइ ॥ ८६ ॥

कछू न कीजे कामना, सर्गुण निर्गुण होइ ।
पलटि जीवतैं ब्रह्म गति, सब मिलि मानैं मोहिं ॥ ८७ ॥

घट अजरावर[1] ह्वै रहै, बंधन नाहीं कोइ ।
मुकता चौरासी मिटै, दादू संसै सोइ ॥ ८८ ॥

निकट निरंजन लागि रहु, जब लगि अलख अभेव । (४-३१७)
दादू पीवै राम रस, निहकामी निज सेव ॥ ८९ ॥

सालोक संगति रहै, सामीप सन्मुख सोइ ।
सारूप सारीखा भया, साजुज एकै होइ ॥ ९०[2] ॥

---

(१) अमर । (२) इसमें चारो प्रकार की मुक्ति का वर्णन है-(१) सालोक अर्थात इष्ट के लोक में बासा मिलना, (२) सापीप=इष्ट के निकट रहना, (३) सारूप=इष्ट का रूप धारण करना, (४) सायुज्य=इष्ट में लय हो जाना ।

राम रसिक बांछै नहीं, परम पदारथ चार।
अठ सिधि नौ निधि का करै, राता सिरजनहार ॥ ९१ ॥
स्वारथ सेवा कीजिये, ता थैं भला न होइ।
दादू ऊसर बाहि[1] करि, कोठा भरै न कोइ ॥ ९२ ॥
सुत बित माँगै बावरे, साहिब सी निधि मेलि[2]।
दादू वै निर्फल गये, जैसैं नागर बेलि ॥ ९३ ॥
फल कारण सेवा करै, जाचै त्रिभुवन-राव।
दादू सो सेवग नहीं, खेलै अपणा डाव[3] ॥ ९४ ॥
सहकामी सेवा करै, माँगै मुगध[4] गँवार।
दादू ऐसे बहुत हैं, फल के भूँचणहार[5] ॥ ९५ ॥
तन मन ले लागा रहै, राता सिरजनहार।
दादू कुछ माँगै नहीं, ते बिरला संसार ॥ ९६ ॥
(दादू कहै) साईं कौं सँभालताँ, कोटि बिघन टलि जाहिं।
राई मान बसंदरा, केते काठ जलाहिं[6] ॥ ९७ ॥
राम नाम गुर सबद सूँ, रे मन पेलि भरम।
निहकरमी सूँ मन मिल्या, दादू काटि करम ॥ ९८ ॥
सहजैं हीं सब होइगा, गुण इन्द्री का नास।
दादू राम सँभालताँ, कटैं करम के पास[7] ॥ ९९ ॥
एक महूरत मन रहै, नाँव निरंजन पास।
दादू तब ही देखताँ, सकल करम का नास ॥ १०० ॥
एक राम के नाम बिन, जिव की जलण न जाइ।
दादू केते पचि मुए, करि करि बहुत उपाइ ॥ १०१ ॥

(१) जोत बो कर। (२) छोड़ कर। (३) दाँव। (४) मूर्ख। (५) चाहने वाले। (६) राई बराबर आग से काठ के ढेर जल जाते हैं। (७) फाँस।

करमै करम काटै नहीं, करमै करम न जाइ।
करमै करम छुटै नहीं, करमै करम बधाइ[1] ॥ १०२ ॥

॥ इति निहकर्मी पतिव्रता को अंग समाप्त ॥८॥

९—चितावणी को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
(दादू) जे साहिब कौं भावै नहीं, सो हम थैं जिनि होइ।
सतगुर लाजै आपणा, आध न मानै कोइ ॥ २ ॥
(दादू) जे साहिब कौं भावै नहीं, सो सब परिहरि प्राण।
मनसा बाचा कर्मना, जे तूँ चतुर सुजाण ॥ ३ ॥
(दादू) जे साहिब कौं भावै नहीं, जीव न कीजै रे।
परिहरि बिषै बिकार सब, अमृत रस पीजै रे ॥ ४ ॥
दादू जे साहिब कौं भावै नहीं, सो बाट न बूझी रे।
साईं सौं सन्मुख रही, इस मन सौं जूझी रे ॥ ५ ॥
राम कहे सब रहत है, नख सिख सकल सरीर।
राम कहे बिन जात है, समझो मनवाँ बीर ॥ ६ ॥
राम कहे सब रहत है, लाहा मूल सहेत।
राम कहे बिन जात है, मूरख मनवाँ चेत ॥ ७ ॥
राम कहे सब रहत है, आदि अंत ल्यौ लाइ।
राम कहे बिन जात है, यह मन बहुरि न आइ ॥ ८ ॥
राम कहे सब रहत है, जीव ब्रह्म की लार।
राम कहे बिन जात है, रे मन होउ हुसियार ॥ ९ ॥

(१) बढ़ाता है।

दादू अचेत न होइये, चेतन सौं चित लाइ ।
मनवाँ सोता नींद भरि, साईं संग जगाइ ॥ १० ॥
दादू अचेत न होइये, चेतन सौं करि चित्त ।
ये अनहद जहँ थैं उपजै, खोजो तहँ ही नित्त ॥ ११ ॥
दादू जन कुछ चेत करि, सौदा लीजै सार ।
निखर कमाई न छूटणा, अपणे जीव बिचार ॥ १२ ॥
(दादू) कर साईं की चाकरी, ये हरि नाँव न छोड़ि ।
जाणा है उस देस कौं, प्रीति पिया सौं जोड़ि ॥ १३ ॥
आपा पर सब दूरि करि, राम नाम रस लागि ।
दादू औसर जात है, जागि सकै तौ जागि ॥ १४ ॥
बार बार यहु तन नहीं, नर नारायण देह ।
दादू बहुरि न पाइये, जनम अमोलिक येह ॥ १५ ॥
दुख दरिया संसार है, सुख का सागर राम ।
सुख सागर चलि जाइये, दादू तजि बेकाम ॥ १६ ॥
एका एकी राम सौं, कै साधू का संग ।
दादू अनत न जाइये, और काल अंग ॥ १७ ॥
(दादू) तन मन के गुण छाडि सब, जब होइ नियारा ।
तब अपने नैनहुँ देखिये, परघट पिव प्यारा ॥ १८ ॥
(दादू) झाँती पाये पसु पिरी, अंदरि सो आहे ।
हाँणी पाणे बिच्च में, मिहर न लाहे ॥ १९[२] ॥
दादू झाँती पाये पसु पिरी, हाँणे लाइ म बेर ।
साथ सभोई हल्यौ, पोइ पसंदो केर ॥ २०[३] ॥

॥ इति चितावणी को अंग समाप्त ॥ ९ ॥

(१) असल, निज । (२) झाँकी (झाँती) पाकर या खिड़की में मुँह डाल कर प्रीतम (पिरी) का दर्शन कर (पसु) वह अंदर है—अब (हाँणी) वह आप (पाणे) तेरे घट में है अपनी मेहर न छोड़ेगा (लाहे) । (३) झाँकी पाकर प्रीतम का दर्शन कर, अब (हाँणे) देर (बेर) मत (म) लगा (लाइ)—साथी सभी (सभोई) चल दिये (हल्यौ), पीछे (पोइ) कौन (केर) देखेगा [पसंदो]

१०—मन को अंग

दादू नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
दादू यहु मन बरजी बावरे, घट में राखी घेरि ।
मन हस्ती माता बहै, अंकुस दे दे फेरि ॥ २ ॥
हस्ती छूटा मन फिरै, क्यों ही बँध्या न जाइ ।
बहुत महावत पचि गये, दादू कुछ न बसाइ ॥ ३ ॥
जाहाँ थैं मन उठि चलै, फेरि तहाँ ही राखि ।
तहँ दादू दयलीन करि, साध कहैं गुर साखि ॥ ४ ॥
थोरैं थोरैं हटकिये,[१] रहैगा ल्यौ लाइ ।
जब लागा उनमनी सौं, तब मन कहीं न जाइ ॥ ५ ॥
आड़ा दे दे[२] राम कौं, दादू राखै मन ।
साखी दे इस्थिर करै, सोई साधू जन ॥ ६ ॥
सोई सूर जे मन गहै, निमखि न चलने देइ ।
जब हीं दादू पग भरै, तब ही पाकड़ि लेइ ॥ ७ ॥
जेती लहरि समंद की, तेते मनहिं मनोरथ मारि ।
बैसै सब संतोष करि, गहि आतम एक बिचारि ॥ ८ ॥
(दादू) जे मुख माहैं बोलता, स्रवणहुँ सुणता आइ ।
नैनहुँ माहैं देखता, सो अंतरि उरझाइ ॥ ९ ॥
दादू चम्बक देखि करि, लोहा लागै आइ ।
यौं मन गुण इंद्री एक सौं, दादू लीजै लाइ ॥ १० ॥
मन का आसण जे जिव जाणै, तौ ठौर ठौर सब सूझै ।
पंचौं आणि एक घरि राखै, तब अगम निगम सब बूझै ॥ ११ ॥

---

(१) बरजना, रोकना । (२) सन्मुख करके ॥

ठे सदा एक रस पीवै, निरबैरी कत जूझै।
ातम राम मिलै जब दादू, तब अंगि न लागै दूजै ॥१२॥
ब लगि यहु मन थिर नहीं, तब लगि परस न होइ।
दू मनवाँ थिर भया, सहजि मिलैगा सोइ ॥ १३ ॥
ादू) बिन अवलंबन क्यूँ रहै, मन चंचलि चलि जाइ।
स्थिर मनवाँ तौ रहै, सुमिरण सेती लाइ ॥ १४ ॥
न इस्थिर कर लीजे नाम।
दू कहै तहाँ हीं राम ॥ १५ ॥
र सुमिरण सौं हेत करि, तब मन निहचल होइ।
दू बेध्या प्रेम रस, बीष[1] न चलै सोइ ॥ १६ ॥
ब अंतरि उरझया एक सौं, तब थाके सकल उपाय।
दू निहचल थिर भया, तब चलि कहीं न जाइ ॥१७॥
ादू) कउवा बोहिथ[2] बैसि करि, मंझि समंदाँ[3] जाइ।
ड़ उड़ि थाका देखि तब, निहचल बैठा आइ ॥ १८ ॥
मन कागद की गुडी,[4] उड़ि चढ़ी आकास।
दू भीगै प्रेम जल, तब आइ रहे हम पास ॥ १९ ॥
दू खीला गारि[5] का, निहचल थिर न रहाइ।
दू पग नहिं साच के, भरमै दह दिसि जाइ ॥ २० ॥
सुख आनँद आतमा, जे मन थिर मेरा होइ।
दू निहचल राम सौं, जे करि जाणै कोइ ॥ २१ ॥
निर्मल थिर होत है, राम नाम आनंद।
दू दरसन पाइये, पूरण परमानंद ॥ २२ ॥

---

(१) विष, जहर। (२) नाव किश्ती। (३) समुद्र। (४) गुड्डी, पतंग। (५) गाड़ी की
जो पहिये के साथ घूमती रहता है। [पंडित चंद्रिका प्रसाद ने गारिका का अर्थ
ी का" लिखा है।]

(दादू) यौं फूटे थैं सारा भया, संधे संधि मिलाइ[1] ।
बाहुड़ि बिषै न भूँचिये,[2] तौ कबहूँ फूटि न जाइ ।। २३ ।।

(दादू) यहु मन भूला सो गली, नरक जाण के घाट ।
अब मन अविगत नाथ सौं, गुरू दिखाई बाट ।। २४ ।।

(दादू) मन सुध स्यावत[3] आपणाँ, निहचल होवै हाथ ।
तौ इहँ ही आनंद है, सदा निरंजन साथ ।। २५ ।।

जब मन लागै राम सौं, तब अनत काहे को जाइ ।
दादू पाणी लूँण ज्यूँ, ऐसैं रहै समाइ ।। २६ ।।

ज्यूँ जल पैसै दूध में, ज्यूँ पाणी में लूँण ।
ऐसैं आतम राम सौं, मन हठ साधै कूँण ।।२७।। (२-७६)

मन का मस्तक मूँडिये, काम क्रोध के केस[4] ।
दादू बिषै बिकार सब, सतगुरु के उपदेस ।।२८।। (१-७७)

सो कुछ हम थैं ना भया, जा पर रीझै राम ।
दादू इस संसार में, हम आये बेकाम ।। २९ ।।

क्या मुँह ले हँसि बोलिये, दादू दीजे रोइ ।
जनम अमोलक आपणा, चले अकारथ खोइ ।। ३० ।।

जा कारण जग जीजिबे[5] सो पद हिरदे नाहि ।
दादू हरि की भगति बिन, धृग जीवण कलि नाहिं ।।३१।।

कीया मन का भावताँ, मेटी अज्ञाकार ।
क्या ले मुख दिखलाइये, दादू उस भरतार[6] ।। ३२ ।।

इंद्री स्वारथ सब किया, मन माँगै सो दीन्ह ।
जा कारण जग सिरजिया, सो दादू कछू न कीन्ह ।।३३।।

---

(१) जोड़ से जोड़ मिला कर । (२) चाहिये । (३) साबित, स्थिर । (४) बाल (५) जीने योग्य । (६) पति, पुरुष ।

कीया था इस काम कौं, सेवा कारण साज।
दादू भूला बंदगी, सर्या न एको काज ॥ ३४ ॥
दादू बिषै बिकार सौं, जब लगि मन राता।
तब लगि चित्त न आवई, त्रिभवन-पति दाता ॥३५॥ (२-६६)
(दादू) का जाणौं कब होइगा, हरि सुमिरन इकतार।
का जाणौं कब छाड़ि है, यहु मन बिषै बिकार ॥३६॥ (२-६७)
बादिहि जनम गँवाइया, किया बहुत बिकार।
यहु मन इस्थिर ना भया, जहँ दादू निज सार सार ॥ ३७ ॥
(दादू) जिनि बिष पीवे बावरे, दिन दिन बाढ़ै रोग।
देखत हीं मरि जाइगा, तजि बिषया रस भोग ॥ ३८ ॥
आपा पर सब दूरि करि, राम नाम रस लागि।
दादू औसर जात है, जागि सकै तौ जागि ॥ ३९ ॥
दादू सब कुछ बिलसताँ, खाताँ पीताँ होइ।
दादू मन का भावता, कहि समझावे कोइ ॥ ४० ॥
दादू मन का भावता. मेरी कहै बलाइ।
साच राम का भावता, दादू कह सुणि आइ ॥ ४१ ॥
ये सब मन का भावता, जे कुछ कीजे आन।
मन गहि राखै एक सौं, दादू साध सुजान ॥ ४२ ॥
जे कुछ भावे राम कौं, सो तत कहि समझाइ।
दादू मन का भावता, सब को कहै बनाइ ॥ ४३ ॥
पैंडे पग चालै नहीं, होइ रह्या गलियार[1]।
राम रथि निबहै नहीं, खैबे कौं हुसियार ॥ ४४ ॥
(दादू) का परमोधै आन कौं, आपण बहिया[2] जात।
औरौं कौं अमृत कहै, आपण हीं बिष खात ॥ ४५ ॥

(१) अड़ियल। (२) बहा।

(दादू) पंचों ये परमोधि ले, इन हीं कूँ उपदेस ।
यहु मन अपणा हाथ करि, तौ चेला सब देस ॥४६॥ (१-१४६)

(दादू) पंचौं का मुख मूल है, मुख का मनवाँ होइ ।
यहु मन राखै जतन करि, साध कहावै सोइ ॥ ४७ ॥

(दादू) जब लगि मन के दोइ गुण, तब लग निपणा[1] नाहिं ।
द्वै गुण मन के मिटि गये, तब निपणा मिलि माहिं ॥ ४८ ॥

काचा पाका जब लगैं, तब लगि अंतर होइ ।
काचा पाका दूरि करि, दादू एकै सोइ ॥ ४९ ॥

सहज रूप मन का भया, तब द्वै द्वै मिटी तरंग ।
तात सीला सम भया, तब दादू एकै अंग ॥ ५० ॥

(दादू) बहु-रूपी मन तब लगैं, जब लगि माया रंग ।
जब मन लागा राम सौं, तब दादू एकै अंग ॥ ५१ ॥

हीरा[2] मन पर राखिये, तब दूजा चढ़ै न रंग ।
दादू यौं मन थिर भया, अबिनासी के संग ॥ ५२ ॥

सुख दुख सब झाँईं[3] पड़ै, तब लगि काचा मन ।
दादू कुछ ब्यापै नहीं, तब मन भया रतन ॥ ५३ ॥

पाका मन डोलै नहीं, निहचल रहै समाइ ।
काचा मन दह दिसि फिरै, चंचल चहुँ दिसि जाइ ॥ ५४ ॥

सीप सुधा रस ले रहै, पिवै न खारा नीर ।
माहैं मोती नीपजै, दादू बंद सरीर ॥ ५५ ॥

दादू मन पंगुल भया, सब गुण गये बिलाइ ।
है काया नव-जोबनी[4], मन बूढ़ा है जाइ ॥ ५६ ॥

---

(१) निपणा यानी जिस में पानी का मेल न हो (जैसा कि सुच्चे दूध के लिये बोला जाता है), बिना मेल के, शुद्ध । (२) हीरा का तात्पर्य राम नाम से है । (३) छाया, असर । (४) तरुण ।

(दादू) कच्छिब अपने करि लिये, मन इंद्री निज ठौर । (१-८६)
नाँइ निरंजन लागि रहु, प्राणी परिहरि और ॥ ५७ ॥
मन इंद्री आँधा किया, घट में लहरि उठाइ ।
साईं सतगुर छाड़ि करि, देखि दिवाना जाइ ॥ ५८ ॥
(दादू कहै) राम बिना मन रंक[1] है, जाचै तीन्यूँ लोक ।
जब मन लागा राम सौं, तब भागे दलिदर दोष ॥ ५९ ॥
इंद्री का आधीन मन, जीव जंत सब जाचै ।
तिणें तिणें[2] के आगैं दादू, तिहूँ लोक फिरि नाचै ॥ ६० ॥
इंद्री अपणे बसि करै, सो काहे जाचण जाइ ।
दादू इस्थिर आतमा, आसण बैसै आइ ॥ ६१ ॥
मन मनसा दून्यूँ मिले, तब जिव कीया भाँड[3] ।
पंचों का फेर्‌या फिरै, माया नचावै राँड ॥ ६२ ॥
नकटी[4] आगैं नकटा[5] नाचै, नकटी ताल बजावै ।
नकटी आगैं नकटा गावै, नकटी नकटा भावै ॥ ६३ ॥
पाँचौं इंद्री भूत हैं, मनवा खेतरपाल[6] ।
मनसा देवी पूजिये, दादू तीन्यूँ काल । ६४ ॥
जीवत लूटैं जगत सब, मिर्तक लूटैं देव ।
दादू कहाँ पुकारिये, करि करि मूए सेव ॥ ६५ ॥
अगनि धोम[7] ज्यौं नीकलै, देखत सबै बिलाइ ।
त्यौं मन बिछुट्या राम सौं, दह दिसि बीखरि जाइ ॥ ६६ ॥
घर छाडे जब का गया, मन बहुरि न आया ।
दादू अगनि के धोम ज्यौं, खुर खोज न पाया ॥ ६७ ॥
सब काहू के होत है, तन मन पसरै जाइ ।
ऐसा कोई एक है, उलटा माहिं समाइ ॥ ६८ ॥

---

(१) भिखमंगा । (२) तुच्छों या नीचों । (३) मसखरा, बेहूदा । (४) मनसा । (५) मन । (६) राजा । (७) धुआँ ।

क्यौं करि उलटा आणिये, पसरि गया मन फेरि।
दादू डोरी सहज की, यौं आणै घरि घेरि ॥ ६९ ॥
(दादू) साध सबद सौं मिलि रहै, मन राखै बिलमाइ।
साध सबद बिन क्यौं रहै, तब हीं बीखरि जाइ ॥ ७० ॥
चंचल चहुँ दिसि जात है, गुर बायक सूँ बंधि।
दादू संगति साध की, पारब्रह्म सूँ संधि ॥७१॥ (१-८४)
एक निरंजन नाँव सौं, साधू संगति माहिं।
दादू मन बिलमाइये, दूजा कोई नाहिं ॥ ७२ ॥
तन में मन आवै नहीं, निस दिन बाहरि जाइ।
दादू मेरा जिव दुखी, रहै नहीं ल्यौ लाइ ॥ ७३ ॥
तन में मन आवै नहीं, चंचल चहुँ दिसि जाइ।
दादू मेरा जिव दुखी, रहै न राम समाइ ॥ ७४ ॥
कोटि जतन करि करि मुए, यहु मन दह दिसि जाइ।
राम नाम रोक्या रहै, नाहीं आन उपाइ ॥ ७५ ॥
यहु मन बहु बकवाद सौं, बाइ भूत है जाइ।
दादू बहुत न बोलिये, सहजैं रहै समाइ ॥ ७६ ॥
भूला भोंदू फेरि मन, मूरख मुग्ध गँवार।
सुमिरि सनेही आपणा, आतम का आधार ॥ ७७ ॥
मन माणिक मूरख राखि रे, जण जण हाथि न देहु।
दादू पारिख जौहरी, राम साध दोइ लेहु ॥ ७८ ॥
(दादू) मार्‌याँ बिन मानै नहीं, यहु मन हरि की आन।
ज्ञान खड़ग गुरदेव का, ता सँग सदा सुजान ॥ ७९ ॥ (१-८६)
मन मिरगा मारै सदा, ता का मीठा माँस।
दादू खाइबे कौं हिल्या, ता थैं आन उदास[१] ॥ ८० ॥

---

(१) और भोग बेस्वाद [उदास] हो गये।

कह्या हमारा मानि मन, पापी परिहरि काम।
बिषया का सँग छाड़ि दे, दादू कहि रे राम॥ ८१॥
केता कहि समुझाइये, मानै नहीं निलज्ज।
मूरख मन समझै नहीं, कीये काज अकज्ज॥ ८२॥
मन हीं मंजन कीजिये, दादू दरपण देह।
माहैं मूरति देखिये, इहिं अवसर करि लेह॥ ८३॥
तब हीं कारा[1] होत है, हरि बिन चितवत आन।
क्या कहिये समझै नहीं, दादू सिखवत ज्ञान॥ ८४॥
(दादू) पाणी धोवैं बावरे, मन का मैल न जाइ।
मन निर्मला तब होइगा, जब हरि के गुण गाइ॥ ८५॥
(दादू) ध्यान धरें का होत है, जे मन नहिं निर्मल होइ।
तौ बग[2] सब हीं ऊधरैं, जे यहि बिधि सीझै कोइ॥ ८६॥
(दादू) ध्यान धरें का होत है, जे मन का मैल न जाइ।
बग मीनी का ध्यान धरि, पसू बिचारे खाइ॥ ८७॥
(दादू) काले थैं धौला भया, दिल दरिया में धोइ।
मालिक सेती मिलि रह्या, सहजैं निर्मल होइ॥ ८८॥
(दादू) जिस का दर्पण ऊजला, सो दर्सन देखै माहिं।
जिस की मैली आरसी, सो मुख देखै नाहिं॥ ८९॥
दादू निर्मल सुद्ध मन, हरि रँग राता होइ।
दादू कंचन करि लिया, काच कहे नहिं कोइ॥ ९०॥
यहु मन अपना थिर नहीं, करि नहिं जाणै कोइ।
दादू निर्मल देव की, सेवा क्यों करि होइ॥ ९१॥
(दादू) यहु मन तीन्यूँ लोक में, अरस परस सब होइ।
देही की रष्या करै, हम जिनि भीटै कोइ॥ ९२[3]॥

---

(१) काला, मलोन। (२) बकुला। (३) लोग देही की छुआ छूत तो बचाते हैं पर मन हर जगह स्पर्श करता फिरता है—[भीटै=छू जाय]

(दादू) देह जतन करि राखिये, मन राख्या नहिं जाइ ।
उत्तिम मद्धिम बासना, भला बुरा सब खाइ ॥ ९३ ॥
दादू हाड़ौं मुख भर्‍या, चाम रह्या लपटाइ ।
माहैं जिभ्या माँस की, ताही सेती खाइ ॥ ९४ ॥
नऊ दुवारे नरक के, निस दिन बहै बलाइ ।
सुची[1] कहाँ लौं कीजिये, राम सुमिरि गुण गाइ ॥ ९५ ॥
प्राणी तन मन मिलि रह्या, इन्द्री सकल विकार ।
दादू ब्रह्मा सुद्र घरि, कहाँ रहै आचार ॥ ९६ ॥
दादू जीवै पलक में, मरताँ कल्प बिहाइ ।
दादू यहु मन मसूकरा, जिनि कोई पतियाइ ॥ ९७ ॥
(दादू) मूवा मन हम जीवत देख्या, जैसे मरहट[2] भूत ।
मूवाँ पीछैं उठि उठि लागै, ऐसा मेरा पूत ॥ ९८ ॥
निहचल करताँ जुग गये, चंचल तब हीं होइ ।
दादू पसरै पलक में, यहु मन मारै मोहिं ॥ ९९ ॥
दादू यहु मन मींडका[3], जल सौं जीवै सोइ ।
दादू यहु मन रिंद[5] है, जिनि रु पतीजै कोइ ॥ १०० ॥
माहैं सूषिम[4] ह्वै रहै, बाहरि पसारै अंग ।
पवन लागि पोढ़ा भया, काला नाग भुवंग ॥ १०१ ॥
मन भुवंग यहु विष भर्‍या, निर्विष क्यों हीं न होइ ।
दादू मिल्या गुर गारुड़ो[6], निर्बिष कीया सोइ ॥ १०२ ॥
सुपना तब लग देखिये, जब लग चंचल होइ ।
जब निहचल लागा नाँव सौं, तब सुपना नाहीं कोइ ॥ १०३ ॥
जागत जहँ जहँ मन रहै, सोवत तहँ तहँ जाइ ।
दादू जे जे मन बसै, सोइ सोइ देखै आइ ॥ १०४ ॥

---

(१) सफ़ाई । (२) मरघट । (३) मेंडक । (४) लामज़हब, गया गुज़रा । (५) सूक्ष्म ।
(६) साँप का विष झाड़ने वाला ।

दादू जे जे चित बसै, सोइ सोइ आवै चीत ।
बाहर भीतर देखिये, जाही सेती प्रीत ॥ १०५ ॥
सावण हरिया देखिये, मन चित ध्यान लगाइ ।
दादू केते जुग गये, तौ भी हर्या न जाइ ॥ १०६ ॥
जिस की सुरति जहाँ रहै, तिस का तहँ बिस्राम ।
भावै माया मोह में, भावै आतम राम ॥ १०७ ॥
जहँ मन राखै जीवताँ, मरताँ तिस घरि जाइ ।
दादू बासा प्राण का, जहँ पहली रह्या समाइ ॥ १०८ ॥
जहाँ सुरति तहँ जीव है, जहँ नाहीं तहँ नाहिं ।
गुण निर्गुण जहँ राखिये, दादू घर बन माहिं ॥ १०९ ॥
जहाँ सुरति तहँ जीव है, आदि अंत अस्थान ।
माया ब्रह्म जहँ राखिये, दादू तहँ बिस्राम ॥ ११० ॥
जहाँ सुरति तहँ जीव है, जिवन मरण जिस ठौर ।
विष अमृत जहँ राखिये, दादू नाहीं और ॥ १११ ॥
जहाँ सुरति तहँ जीव है, जहँ जाणै तहँ जाइ ।
गम्म अगम जहँ राखिये, दादू तहाँ समाइ ॥ ११२ ॥
मन मनसा का भाव है, अंत फलैगा सोइ ।
जब दादू बाणक[१] बण्या, तब आसै आसण होइ ॥ ११३ ॥
जप तप करणी करि गये, सरग पहूँते[२] जाइ ।
दादू मन की बासना, नरक पड़ै फिरि आइ ॥ ११४ ॥
पाका काचा ह्वै गया, जीत्या हारै डाव[३] ।
अंत काल गाफिल भया, दादू फिसले पाँव ॥ ११५ ॥

(१) संयोग । (२) पहुँचे । (३) दाँव ।

(दादू) यहु मन पंगुल पंच दिन, सब काहू का होइ।
दादू उतरि अकास थैं, धरती आया सोइ ॥ ११६ ॥
ऐसा कोई एक मन, मरै सो जीवै नाहिं।
दादू ऐसे बहुत हैं, फिरि आवैं कलि माहिं ॥ ११७ ॥
देखा देखी सब चले, पारि न पहुँच्या जाइ।
दादू आसणि पहल[1] के, फिरि फिरि बैठे आइ ॥ ११८ ॥
बरतण[2] एकै भाँति सब, दादू संत असंत।
भिन्न भाव अंतर घणा, मनसा तहाँ गछंत[3] ॥ ११६ ॥
यहु मन मारै मोमिनाँ, यहु मन मारै मीर।
यहु मन मारै साधिकाँ, यहु मन मारै पीर ॥ १२० ॥
मन मारे मुनियर[4] मुए, सुर नर किये सँघार।
ब्रह्मा बिस्नु महेस सब, राखै सिरजनहार ॥ १२१ ॥
मन बाहे[5] मुनियर बड़े, ब्रह्मा बिस्नु महेस।
सिध साधक जोगी जती, दादू देस बिदेस ॥ १२२ ॥
पूजा मान बड़ाइयाँ, आदर माँगै मन।
राम गहै सब परिहरै, सोई साधू जन ॥ १२३ ॥
जहँ जहँ आदर पाइये, तहाँ तहाँ जिव जाइ।
बिन आदर दीजै राम रस, छाड़ि हलाहल खाइ ॥ १२४ ॥
करणी किरका[6] को नहीं, कथणी अनत अपार।
दादू यूँ क्यूँ पाइये, रे मन मूढ़ गँवार ॥ १२५ ॥
दादू मन मिर्तक भया, इंद्री अपणै हाथ।
तौ भी कदे[7] न कीजिये, कनक कामिनी साथ ॥ १२६ ॥

---

(१) पहिले ;—पहलू या बाज़ू के अर्थ भी लगते हैं। (२) बर्ताव। (३
जाता है ; सम्बन्ध रखती है। (४) मुनिवर। (५) बहाये। (६) किनका मात्र
(७) कभी।

अब मन निरभय घरि नहीं, भय में बैठा आइ ।
निरभय सँग थैं बीछुट्या, तब कायर ह्वै जाइ ॥ १२७ ॥
जब मन मिर्तक ह्वै रहै, इंद्री बल भागा ।
काया के सब गुण तजै, नीरंजन लागा ॥१२८॥ (७-४२)
आदि अंत मधि एक रस, टूटै नहिं धागा ।
दादू एकै रहि गया, तब जाणी जागा ॥१२९॥ (७-४३)
दादू मन के सीस मुख, हस्त पाँव है जीव ।
स्रवण नेत्र रसना रटै, दादू पाया पीव ॥ १३० ॥
जहँ के नवाये सब नवैं, सोई सिर करि जाणि ।
जहँ के बुलाये बोलिये, सोई मुख परवाणि ॥ १३१ ॥
जहँ के सुणाये सब गुणैं, सोई स्रवण सयाण ।
जहँ के दिखाये देखिये, सोई नैन सुजाण ॥ १३२ ॥
(दादू) मन हीं सौं मल ऊपजै, मन हीं सौं मल धोइ ।
सीख चलै गुर साध की, तौ तूँ निरमल होइ ॥ १३३ ॥
दादू मन हीं माया ऊपजै, मन हीं माया जाइ ।
मन हीं राता राम सौं, मन हीं रह्या समाइ ॥ १३४ ॥
(दादू) मन हीं मरणा ऊपजै, मन हीं मरणा खाइ ।
मन अबिनासी ह्वै रह्या, साहिब सौं ल्यौ लाइ ॥ १३५ ॥
मन हीं सन्मुख नूर है, मन हीं सन्मुख तेज ।
मन हीं सन्मुख जोति है, मन ही सन्मुख सेज ॥ १३६ ॥
मन हीं सौं मन थिर भया, मन हीं सौं मन लाइ ।
मन हीं सौं मन मिलि रह्या, दादू अनत न जाइ ॥ १३७ ॥

॥ इति मन को अंग समाप्त ॥ १० ॥

———

११—सूषिम[1] जन्म को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
(दादू) चौरासी लख जीव की, परकीरति घट माहिं ।
अनेक जन्म दिन के करै, कोई जाणै नाहिं ॥ २ ॥
(दादू) जेते गुण व्यापैं जीव कौं, तेते ही अवतार ।
आवागवन यहु दूरि करि, समरथ सिरजनहार ॥ ३ ॥
सब गुण सब ही जीव के, दादू व्यापैं आइ ।
घर माहैं जामै मरै, कोई न जाणै ताहि ॥ ४ ॥
जीव जन्म जाणै नहीं, पलक पलक में होइ ।
चौरासी लख भोगवै, दादू लखै न कोइ ॥ ५ ॥
अनेक रूप दिन के करै, यहु मन आवै जाइ ।
आवागवन मन का मिटै, तब दादू रहै समाइ ॥ ६ ॥
निस बासर यहु मन चलै, सूषिम जीव सँघार ।
दादू मन थिर कीजिये, आतम लेहु उबारि ॥ ७ ॥
कबहूँ पावक कबहूँ पाणी, धर[2] अंबर गुण बाइ ।
कबहूँ कुंजर कबहूँ कीड़ी, नर पसुवा ह्वै जाइ ॥ ८ ॥
सूकर स्वान सियाल[3] सिंघ, सर्प रहै घट माहिं ।
कुंजर कीड़ी जीव सब, पाँडे[4] जाणै नाहिं ॥ ९ ॥

॥ इति सूषिम जन्म को अंग समाप्त ॥ ९ ॥

१२—माया को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥

(१) सूक्ष्म । (२) धर=पृथ्वी ; अंबर = आकाश ; बाइ=वायु । (३) सियार ।
(४) पंडित ।

साहिब है पर हम नहीं, सब जग आवै जाइ।
दादू सुपिना देखिये, जागत गया बिलाइ ॥ २ ॥
(दादू) माया का सुख पंच दिन, गर्ब्यों कहा गँवार।
सुपिनैं पायौ राज धन, जात न लागै बार ॥ ३ ॥
(दादू) सुपिनैं सूता प्राणिया, कीये भोग बिलास।
जागत झूठा ह्वै गया, ता की कैसी आस ॥ ४ ॥
यौं माया का सुख मन करै, सेज्या सुंदरि पास।
अंति काल आया गया, दादू होहु उदास ॥ ५ ॥
जे नाहीं सो देखिये, सूता सुपिनैं माहिं।
दादू झूठा ह्वै गया, जागै तौ कुछ नाहिं ॥ ६ ॥
यहु सब माया मिर्ग-जल[1], झूठा झिलिमिलि होइ।
दादू चिलका देखि करि, सति करि जाना सोइ ॥ ७ ॥
झूठा झिलिमिलि मिर्ग-जल, पाणी करि लीया।
दादू जग प्यासा मरै, पसु प्राणी पीया ॥ ८ ॥
छलावा छलि जाइगा, सुपिना बाजी सोइ।
दादू देखि न भूलिये, यहु निज रूप न होइ ॥ ९ ॥
सुपिनैं सब कुछ देखिये, जागै तौ कुछ नाहिं।
ऐसा यहु संसार है, समझि देखि मन माहिं ॥ १० ॥
(दादू) ज्यौं कुछ सुपनैं देखिये, तैसा यहु संसार।
ऐसा आपा जाणिये, फूल्यौ कहा गँवार ॥ ११ ॥
(दादू) जतन जतन करि राखिये, दिढ़ गहि आतम मूल।
दूजो दृष्टि न देखिये, सब ही सेंबल फूल ॥ १२ ॥

---

(१) मृग-जल से अभिप्राय मरीचिका या सराब से है जहाँ बालू के मैदान की चमक दूर से देख कर मृग को पानी का धोखा होता है और उस के पीछे प्यास बुझाने को दौड़ता है।

(दादू) नैनहुँ भरि नहिं देखिये, सब माया का रूप।
तहँ ले नैना राखिये, जहँ है तत्त अनूप॥ १३॥
हस्ती, हय, बर, धन देखि करि, फूल्यौ अंग न माइ[1]।
भेरि[2] दमामा[3] एक दिन, सब ही छाड़े जाइ॥ १४॥
(दादू) माया बिहड़ै[4] देखताँ, काया संग न जाइ।
कृत्तम बिहड़ै बावरे, अजरावर[5] ल्यौ लाइ॥ १५॥
(दादू) माया का बल देखि करि, आया अति अहंकार।
अंध भया सूझै नहीं, का करिहै सिरजनहार॥ १६॥
मन मनसा माया रती[6], पंच तत्त परकास।
चौदह तीन्यूँ लोक सब, दादू होइ उदास॥ १७॥
माया देखे मन खुसी, हिरदै होइ बिगास।
दादू यहु गति जीव की, अंति न पूगै[7] आस॥ १८॥
मन की मूठि न माँडिये, माया के नीसाण।
पीछैं ही पछिताहुगे, दादू खोटे बाण॥ १९[8]॥
कुछ खाताँ कुछ खेलताँ, कुछ सोवत दिन जाइ।
कुछ बिषियाँ रस बिलसताँ, दादू गये बिलाइ॥ २०॥
माखण मन पाहण भया, माया रस पीया।
पाहण मन माखण भया, राम रस्स लीया॥ २१॥

---

(१) समाय। (२) शहनाई, नफ़ीरी। (३) डंका। (४) बिछुड़े। (५) अकाल पुरुष। (६) रत, लौलीन। (७) पूरी होय।

(८) साखी १९ के अर्थ पंडित चंद्रिका प्रसाद ने विचित्र लिखे हैं। वह "बाण" के मानी तीर के, "मूठ"=कमान, "नीसाण"=निशाना के लगाते हैं। यह अर्थ खींचा ताना के और अशुद्ध जान पड़ते हैं क्योंकि माया को मन के तीर का निशाना "न" बनाना उलटी बात होगी. और 'खोटे" तीर का मुहावरा भी कभी सुनने में नहीं आया थोथे तीर अलबत्ते बोलते हैं! हमारी समझ में तो सीधे सादे मतलब यह हैं कि मन की हठ [मूठ] को रोको [न माँडिये=न करिये] जिस का झुकाव या रुचि [नीसाण] माया की ओर होती है; नहीं तो इस बुरी आदत [खोटे बाण] के लिये पीछे पछताना पड़ेगा।

(दादू) माया सौं मन बीगड़्या, ज्यों काँजी करि दूध।
है कोई संसार में, मन करि देवै सूध[1] ॥ २२ ॥
गंदी सौं गंदा भया, यौं गंदा सब कोइ।
दादू लागै खूब सौं, तौ खूब सरीखा होइ ॥ २३ ॥
(दादू) माया सौं मन रत भया, बिषै रस्स माता।
दादू साचा छाड़ि करि, झूठे रँग राता ॥ २४ ॥
माया के सँगि जे गये, ते बहुरि न आये।
दादू माया डाकिणी[2], इन केते खाये ॥ २५ ॥
(दादू) माया मोट बिकार की, कोइ न सकई डारि।
बहि बहि मूए बापुरे, गये बहुत पचि हारि ॥ २६ ॥
(दादू) रूप राग गुण अँड़सरे[3], जहँ माया तहँ जाइ।
बिद्या अष्यर[4] पंडिता, तहाँ रहे घर छाइ ॥ २७ ॥
साध न कोई पग भरे, कबहूँ राज दुवारि।
दादू उलटा आप में, बैठा ब्रह्म बिचारि ॥ २८ ॥
(दादू) अपणे अपणे घरि गये, आपा अंग बिचारि।
सहकामी माया मिले, निहकामी ब्रह्म सँभारि ॥ २९ ॥
(दादू) माया मगन जु ह्वै रहे, हम से जीव अपार।
माया माहैं ले रही, डूबे काली धार[5] ॥ ३० ॥

॥ सवैया ॥

(दादू) बिषे के कारण रूप राते रहैं,
नैन नापाक यौं कीन्ह भाई।
बदी की बात सुणत सारा दिन,
स्रवन नापाक यौं कीन्ह जाई।

(१) शुद्ध। (२) डंकिनी। (३) अँगड़स रहे, फँस रहे। (४) अच्छर। (५) काल की धारा में।

स्वाद के कारणे लुब्धि लागी रहै,
जिभ्या नापाक यौं कीन्ह खाई।
भोग के कारणे भूख लागी रहै,
अंग नापाक यौं कीन्ह लाई॥ ३१॥

दादू नगरी चैन तब, जब इक-राजी[1] होइ।
दोइ-राजी दुख दुंद में, सुखी न बैसै कोइ॥ ३२॥
इक-राजी आनंद है, नगरी निहचल बास।
राजा परजा सुखि बसैं, दादू जोति प्रकास॥ ३३॥
जैसैं कुंजर काम बस, आप बँधाणा आइ।
ऐसैं दादू हम भये, क्यौंकरि निकस्या जाइ॥ ३४॥
जैसैं मरकट जीभ रस, आप बँधाणा अंध।
ऐसैं दादू हम भये, क्यौंकरि छूटै फंध॥ ३५॥
ज्यौं सूवा सुख कारणे, बंध्या मूरख माहिं।
ऐसैं दादू हम भये, क्यौंही निकसैं नाहिं॥ ३६॥
जैसैं अंध अज्ञान गृह, बंध्या मूरख स्वादि।
ऐसैं दादू हम भये, जन्म गँवाया बादि॥ ३७॥
(दादू) बूड़ि रह्या रे बापुरे, माया गृह के कूप।
मोह्या कनक अरु कामिनी, नाना बिधि के रूप॥ ३८॥
(दादू) स्वाद लागि संसार सब, देखत परलै जाइ।
इंद्री स्वारथ साच तजि, सबै बँधाणे आइ॥ ३९॥
बिष सुख माहैं रमि रह्या, माया हित चित लाइ।
सोई संत जन ऊबरे, स्वाद छाड़ि गुण गाइ॥ ४०॥
दादू झूठी काया झूठ घर, झूठा यह परिवार।
झूठी माया देखि करि, फूल्यौ कहा गँवार॥ ४१॥

---

(१) एकही का राज।

॥ कबित्त ॥

(दादू) झूठा संसार, झूठा परिवार,
झूठा घर बार, झूठा नर नारि, तहाँ मन मानै।
झूठा कुल जाति, झूठा पित मात,
झूठा बंध भ्रात, झूठा तन गात, सति करि जानै॥
झूठा सब धंध, झूठा सब फंध,
झूठा सब अंध, झूठा जा चंद, कहा मधु छानै।
दादू भागि, झूठ सब त्यागि,
जागि रे जागि, देखि दिवानै॥ ४२॥

दादू झूठे तन के कारणे, कीये बहुत बिकार।
गृह दारा धन संपदा, पूत कुटुँब परिवार॥ ४३॥
ता कारण हति आतमा, झूठ कपट अहंकार।
सो माटी मिलि जाइगा, बिसर्‌या सिरजनहार॥ ४४॥
(दादू) जन्म गया सब देखताँ, झूठी के सँग लागि।
साचे प्रीतम कौं मिलै, भागि सकै तौ भागि॥ ४५॥

॥ छंद ॥

(दादू) गतं[1] गृहं, गतं धनं, गतं दारा सत जोबनं।
गतं माता, गतं पिता, गतं बंधु सज्जनं॥
गतं आपा, गतं परा, गतं संसार कत रंजनं।
भजसि भजसि रे मन, परब्रह्म निरंजनं॥ ४६॥

जीवौं माहैं जिव रहै, ऐसा माया मोह।
साईं सूधा सब गया, दादू नहिं अंदोह[2]॥ ४७॥

---

(१) गया। (२) फ़ारसी शब्द 'अंदोह' का अर्थ गम, शोक होता है; हिन्दी में अंदेह = अंदेशा।

माया मगहर[1] खेत खर, सद गति कदे न होइ।
जे बंचैं ते देवता, राम सरीखे सोइ ॥ ४८ ॥
कालरि[2] खेत न नीपजै, जे बाहै[3] सौ बार।
दादू हाना बीज का, क्या पचि मरै गँवार ॥ ४९ ॥
दादू इस संसार सौं, निमख न कीजै नेह।
जामण मरण आवटणा[4], छिन छिन दाझै देह ॥ ५० ॥
दादू मोह संसार कौं, बिहरै[5] तन मन प्राण।
दादू छूटै ज्ञान करि, को साधू संत सुजाण ॥ ५१ ॥
मन हस्ती माया हस्तिनी, सघन बन संसार।
ता में निर्भय ह्वै रह्या, दादू मुग्ध गँवार ॥ ५२ ॥
(दादू) काम कठिन घटि चोर है, घर फोड़ै दिन रात।
सोवत साह न जागई, तत्त बस्त ले जात ॥ ५३ ॥
काम कठिन घटि चोर है, मूसै भरे भँडार।
सोवत ही ले जाइगा, चेतनि पहरे च्यार ॥ ५४ ॥
ज्यौं घुन लागै काठ कौं, लोहे लागै काट[6]।
काम किया घट जाजरा[7], दादू बारह बाट ॥ ५५ ॥
राहु गिलै[8] ज्यौं चन्द कौं, गहण गिलै ज्यौं सूर।
कर्म गिलै यौं जीव कौं, नखसिख लागै पूर ॥ ५६ ॥
(दादू) चन्द गिलै जब राहु कौं, गहण गिलै जब सूर।
जीव गिलै जब कर्म कौं, राम रह्या भरपूर ॥ ५७ ॥
कर्म कुहाड़ा[9] अंग बन, काटत बारम्बार।
अपने हाथौं आप कौं, काटत है संसार ॥ ५८ ॥

---

(१) काशी के गंगा पार के खेतों को मगहर भूमि कहते हैं और कहावत है कि वहाँ मरने से गधे का जन्म मिलता है सो दादू साहिब ने माया की उपमा उसी भूमि से दी है, अर्थात् दोनों दुर्गति की दाता हैं। (२) ऊसर। (३) जोतै। (४) जन्म मरन की तपन। (५) फूट जाना। (६) मोरचा। (७) जरजर, निर्बल। (८) ग्रसै। (९) कुल्हाड़ा।

आपै मारै आप कौं, यहु जीव बिचारा।
साहिब राखणहार है, सो हितू हमारा। ५६ ॥
आपै मारै आप कौं, आप आप कौं खाइ।
आपै अपणा काल है, दादू कहि समझाइ ॥ ६० ॥
मरिबे की सब ऊपजै, जीबे की कुछ नाहिं।
जीबे की जाणै नहीं, मरिबे की मन माहिं ॥ ६१ ॥
बंध्या बहुत बिकार सौं, सर्ब पाप का मूल।
ढाहै सब आकार कौं, दादू यहु अस्थूल ॥ ६२ ॥
(दादू) यहु तो दोजग[1] देखिये, काम क्रोध अहंकार।
राति दिवस जरिबौ करै, आपा अगिनि बिकार ॥ ६३ ॥
बिषै हलाहल खाइ करि, सब जग मरि मरि जाइ।
दादू मुहरा[2] नाँव ले, रिदै राखि ल्यौ लाइ ॥ ६४ ॥
जेती बिषया बिलसिये, तेती हत्या होइ।
प्रत्तषि[3] माणस[4] मारिये, सकल सिरोमणि सोइ ॥ ६५ ॥
बिषया का रस मद भया, नर नारी का मास।
माया माते मद पिया, किया जन्म का नास ॥ ६६ ॥
(दादू) भावै सकत[5] भगत ह्वै, बिषै हलाहल खाइ।
तहँ जन तेरा रामजी, सुपिनै कदे न जाइ ॥ ६७ ॥
खाड़ाबूजी भगति है, लोहर-वाड़ा माहिं।
परगट पेड़ाइत बसैं, तहँ संत काहे कौं जाहिं ॥ ६८[6] ॥
साँपणि इक सब जीव कौं, आगे पीछे खाइ।
दादू कहि उपगार करि, कोइ जन ऊबरि जाइ ॥ ६९ ॥

---

(१) नर्क। (२) जहर मुहरा। (३) प्रत्यक्ष। (४) मन। (५) निगुरा।
(६) खाड़ाबूजी = गढ़े में छिपाई हुई अर्थात् धोखे या कपट की। लोहरवाड़ा = चोरों की एक बस्ती का नाम। पेड़ाइत = पीड़ा देने वाले या दुष्टप्राणी। दादू दयाल ने कपट भक्ति की उपमा इस चोर बस्ती से दी है जिस के निकट संत सुपने में भी नहीं जाते अर्थात् कपट की भक्ति से संतों को घृणा है।

दादू खाये साँपणी, क्यौं करि जीवैं लोग।
राम मंत्र जन[1] गारड़ी[2], जीवैं यहि संजोग॥ ७०॥
(दादू) माया कारण जग मरै, पिव के कारणि कोइ।
देखौ ज्यौं जग परजलै, निमख न न्यारा होइ॥ ७१॥
काल कनक अरु कामिनी, परिहरि इन का सङ्ग।
दादू सब जग जलि मुवा, ज्यौं दीपक जोति पतङ्ग॥ ७२॥
(दादू) जहाँ कनकअरु कामिनी, तहँ जीव पतंगे जाहिं।
आगि अनँत सूझै नहीं, जलि जलि मूए माहिं॥ ७३॥
घट माहैं माया घणी, बाहरि त्यागी होइ।
फाटीकथा[3] पहरि करि, चिहन[4] करै सब कोइ॥ ७४॥
काया राखै बन्द दे, मन दह दिसि खेलै।
दादू कनक अरु कामिनी, माया नहिं मेलै॥ ७५॥
दादू मन सौं मीठी मुख सौं खारी।
माया त्यागी कहैं बजारी॥ ७६॥
माया मन्दिर मीच का, ता में पैठा धाइ।
अंध भया सूझै नहीं, साध कहैं समझाइ॥ ७७॥
दादू केते जलि मुए, इस जोगी की आगि।
दादू दूरै बंचिये, जोगी के सँग लागि॥ ७८॥
ज्यौं जल मैंणी[5] मंछली, तैसा यहु संसार।
माया माते जीव सब, दादू मरत न बार॥ ७९॥
(दादू) माया फोड़ै नैन दोइ, राम न सूझै काल।
साध पुकारै मेर[6] चढ़ि, देखि अगिनी की झाल॥ ८०॥
बिना भुवंगम हम डसे, बिन जल डूबे जाइ।
बिनहीं पावक ज्यौं जले, दादू कुछ न बसाइ॥ ८१॥

(१) एक लिपि में "जन" को जगह "गुरु" है। (२) साँप का विष झाड़ने वाला। (३) गुदड़ी। (४) चैन। (५) भीतर। (६) पहाड़।

(दादू) अमृत रूपी आप है , और सबै बिष झाल ।
राखणहारा राम है , दादू दूजा काल ।। ८२ ।।
बाजी चिहर[1] रचाइ करि , रह्या अपरछन[2] होइ ।
माया पट पड़दा दिया , ता थैं लखै न कोइ ।। ८३ ।।
दादू बाहे देखताँ , ढिग ही ढौरी लाइ ।
पिव पिव करते सब गये , आपा दे न दिखाइ ।। ८४[3] ।।
मैं चाहूँ सो ना मिलै , साहिब का दीदार ।
दादू बाजी बहुत है , नाना रंग अपार ।। ८५ ।।
हम चाहें सो ना मिलै , औ बहुतेरा आहि ।
दादू मन मानै नहीं , केता आवै जाहि ।। ८६ ।।
बाजी मोहे जीव सब , हम कौं भुरकी बाहि[4] ।
दादू कैसी करि गया , आपण रह्या छिपाइ ।। ८७ ।।
दादू साईं सत्ति है , दूजा भर्म बिकार ।
नाँव निरंजन निर्मला , दूजा घोर अँधार ।। ८८ ।।
दादू सो धन लीजिये , जे तुम्ह सेती होइ ।
माया बाँधे केई मुए , पूरा पड़्या न कोइ ।। ८९ ।।
(दादू कहै) जे हम छाड़ैं हाथ थैं, सो तुम लिया पसारि ।
जे हम लेवैं प्रीति सौं, सो तुम दीया डारि ।। ९० ।।
(दादू) हीरा पग सौं ठेलि करि, कंकर कौं कर लीन्ह ।
पारब्रह्म कौं छाड़ि करि , जीवन सौं हित कीन्ह ।। ९१ ।।
(दादू) सब को बणिजै खार-खलि[5] , हीरा कोई न लेइ ।
हीरा लेगा जौहरी , जो माँगै सो देइ ।। ९२ ।।

---

(१) विचित्र । (२) गुप्त । (३) ईश्वर ने जीवों के ढिग (साथ) ढौरी (चाह) लगाकर उन को जगत में बाहि (भरमा) रक्खा है–पं० चं० प्र० । (४) मंत्र डाला । (५) संसार खारी और फोक चीजें अर्थात् कूड़ा करकट का गाहक है ।

दड़ी[१] दोट[२] ज्यों मारिये, तिहूँ लोक में फेर।
धुर पहुँचे संतोष है, दादू चढ़िबा मेर[३] ॥ ९३ ॥

अनलपंखि[४] आकाश कौं, माया मेर उलंघि।
दादू उलटे पंथ चढ़ि, जाइ बिलम्बे अंगि ॥ ९४ ॥

(दादू) माया आगैं जीव सब, ठाढ़े रहे कर जोड़ि।
जिन सिरजे[५] जल बुंद सौं, ता सौं बैठे तोड़ि ॥ ९५ ॥

सुर नर मुनियर बसि किये, ब्रह्मा बिसुन महेस।
सकल लोक के सिर खड़ी, साधू के पग हेठ ॥ ९६ ॥

(दादू) माया चेरी संत की, दासी उस दरबार।
ठकुराणी सब जगत की, तीन्यूँ लोक मँझार ॥ ९७ ॥

(दादू) माया दासी संत की, साकत की सिरताज।
साकत सेती भाँडणी[६], संतौं सेती लाज ॥ ९८ ॥

चारि पदारथ मुक्ति बापुरी, अठ सिधि नौ निधि चेरी।
माया दासी ता के आगैं, जहँ भक्ति निरंजन तेरी ॥ ९९ ॥

(दादू कहै) ज्यों आवे त्यों जाइ बिचारी।
बिलसी बितड़ी नें माथें मारी[७] ॥ १०० ॥

(दादू) माया सब गहले[८] किये, चौरासी लख जीव।
ता का चेरी क्या करे, जे रँग राते पीव ॥ १०१ ॥

(दादू) माया बैरिणि जीव की, जिनि को लावै प्रीति।
माया देखै नरक करि[९], यहु सन्तन की रीति ॥ १०२ ॥

माया मति चकचाल करि[१०], चंचल कीये जीव।
माया माते मद पिया, दादू बिसर्‌या पीव ॥ १०३ ॥

---

(१) गेंद। (२) चोट। (३) मेरु=पहाड़। (४) अलल पच्छ या सारदूल चिड़िया जो आकाश ही में रहता है। (५) रचा। (६) निलज्ज। (७) संतों ने माया को आप यथार्थ रीति से बिलसा, औरों को बाँटा (बितड़ी) और (नें) फिर धप्प मार कर निकाल दिया। (८) पागल। (९) नर्क समान। (१०) मत को भरमा कर।

जणे जणे की रामकी[1], घर घर की नारी।
पतिव्रता नहिं पीव की, सो माथैं मारी ॥ १०४ ॥
जण जण के उठि पीछैं लागै, घर घर भरमत डोलै।
ता थैं दादू खाइ तमाचे, मंदल दुहु मुख बोलै[2] ॥ १०५ ॥
जे नर कामिनि परिहरैं, ते छूटैं गर्भ-वास।
दादू ऊँधे[3] मुख नहीं, रहैं निरंजन पास ॥ १०६ ॥
रोक न राखै झूठ न भाखै, दादू खरचै खाइ।
नदी पूर परवाह ज्यूँ, माया आवै जाइ ॥ १०७ ॥
सदिका सिरजनहार का, केता आवै जाइ।
दादू धन संचै नहीं, बैठ खुलावै खाइ ॥ १०८ ॥
जोगणि ह्वै जोगी गहे, सोफणि[4] ह्वै करि सेस।
भगतणि ह्वै भगता गहे, करि करि नाना भेस ॥ १०९ ॥
बुधि बमेक बल हरणी, त्रय तन ताप उपावनी।
अङ्ग अगिनि परजालिनी, जिव घर बारि नचावनी ॥११०॥
नाना बिधि के रूप धरि, सब बन्धे भामिनी।
जग बिटंब[5] परलै किया, हरि नाम भुलावनी ॥ १११ ॥
बाजीगर की पूतरी, ज्यूँ मरकट मोह्या।
दादू माया राम की, सब जगत बिगोया ॥ ११२ ॥
मोरा मोरी देखि करि, नाचै पंख पसारि।
यौं दादू घर आँगणे, हम नाचे कै बारि[6] ॥ ११३ ॥
(दादू) जिस घट दीपक राम का, तिस घट तिमर न होइ
(४-१९६)
उस उजियारे जोति के, सब जग देखै सोइ ॥ ११४ ॥

---

(१) फ़ारसी में राम चेरे को कहते हैं, रामक=छुद्र चेरा, "रामकी"=छुद्र चेरी। (२) ढोलक जो दो मुँह से बोलती है और इस लिये तमाचा (चटकना) खाती है। (३) गर्भ में बच्चा औंधे मुँह रहता है। (४) नागिन। (५) पसारा, ढकोसला। (६) कई बार।

(दादू) जेहि घट ब्रह्म न परगटै, तहँ माया मंगल गाइ ।
दादू जागै जोति जब , तब माया भरम बिलाइ ॥ ११५ ॥

(दादू) जोती चमकै तिरवरै[१] , दीपक देखै लोइ ।
चंद सूर का चाँदणा , पगार[२] छलावा होइ ॥ ११६ ॥

दादू दीपक देह का , माया परगट होइ ।
चौरासी लख पंखिया , तहाँ परै सब कोइ ॥ ११७ ॥

यहु घट दीपक साध का , ब्रह्म जोति परकास ।
दादू पंखी सन्त जन , तहाँ परै निज दास ॥ ११८ ॥

दादू मन मिरतक भया , इन्द्री अपणै हाथ ।
तौ भी कदे न कीजिये , कनक कामिनी साथ ॥ ११९ ॥

जाणै बूझै जीव सब , त्रिया पुरुष का अंग ।
आपा पर भूला नहीं , दादू कैसा संग ॥ १२० ॥

माया के घट साजि द्वै , त्रिया पुरुष धरि नाँउ ।
दून्यूँ सुन्दर खेलैं दादू , राखि लेहु बलि जाँउ ॥ १२१ ॥

बहण बीर करि देखिये , नारी अरु भर्तार ।
परमेसुर के पेट के , दादू सब परिवार ॥ १२२ ॥

पर घर परिहरि आपणी , सब एकै उणहार[३] ।
पसु प्राणी समझै नहीं , दादू मुग्ध गँवार ॥ १२३ ॥

पुरिष पलटि बेटा भया , नारी माता होइ ।
दादू को[४] समझै नहीं , बड़ा अचंभा मोहिं ॥ १२४ ॥

माता नारी पुरिष की , पुरिष नारि का पूत ।
दादू ज्ञान बिचारि करि , छाडि गये अवधूत ॥ १२५ ॥

---

(१) झिलमिलाय । (२) पगार के ठीक अर्थ गुजराती भाषा में "तनख्वाह" के हैं परन्तु यहाँ "चमक" से मतलब है । "पगार छलावा" का अभिप्राय भूतों की लुकारी या शहाबा से है जिस में झूठा प्रकाश दीख पड़ता है । (३) सदृश, रूप । (४) कोई ।

ब्रह्मा बिस्नु महेस लौं, सुर नर उरझाया।
बिष का अमृत नाँव धरि, सब किनहूँ खाया ॥ १२६ ॥
(दादू) माया का जल पीवताँ, ब्याधी होइ बिकार।
सेझे[1] का जल पीवताँ, प्राण सुखी सुध सार ॥ १२७ ॥
जिव गहिला जिव बावला, जीव दिवाना होइ।
दादू अमृत छाड़ि करि, बिष पीवै सब कोइ ॥ १२८ ॥
माया मैली गुणमई, धरि धरि उज्जल नाँव।
दादू मोहै सबन कूँ, सुर नर सब ही ठाँव ॥ १२९ ॥
बिष का अमृत नाँव धरि, सब कोई खावै।
दादू खारा ना कहै, यहु अचिरज आवै ॥ १३० ॥
(दादू) जे बिष जारे खाइ करि, जिन मुख में मेलै।
आदि अंत परलय गये, जे बिष सूँ खेलै ॥ १३१ ॥
जिन बिष खाया ते मुए, क्या मेरा क्या तेरा।
आगि पराई आपणी, सब करै निबेरा ॥ १३२ ॥
(दादू कहै) जिनि बिष पीवै बावरे, दिन दिन बाढ़ै रोग।
देखत ही मरि जायगा, तजि बिषया रस भोग ॥ १३३ ॥
आपणा पराया खाइ बिष, देखत ही मरि जाय।
दादू को जीवै नहीं, इहिं भोरैं[2] जिनि खाइ ॥ १३४ ॥
ब्रह्म सरीखा होइ करि, माया सूँ खेलै।
दादू दिन दिन देखताँ, अपणौ गुण मेलै[3] ॥ १३५ ॥
माया मारै लात सूँ, हरि कूँ घालै हाथ।
संग तजै सब झूठ का, गहै साच का साथ ॥ १३६ ॥
घर के मारे बन के मारे, मारे स्वर्ग पयाल।
सूषिम मोटा गूँथि करि, माँड्या माया जाल ॥ १३७ ॥

(१) सोत। (२) भूले से। (३) त्यागै।

ऊभा[१] सारं बैठ बिचारं, संभारं जागत सूता।
तीन लोक तत जाल बिडारं, तहाँ जाइगा पूता[२] ॥ १३८ ॥
मुए सरीखे ह्वै रहे, जीवण की क्या आस।
दादू राम बिसारि करि, बाँछै[३] भोग बिलास ॥ १३९ ॥
माया रूपी राम कूँ, सब कोई ध्यावै।
अलख आदि अनादि है, सो दादू गावै ॥ १४० ॥
ब्रह्मा का बेद बिस्नु की मूरति, पूजै सब संसारा।
महादेव की सेवा लागै, कहँ है सिरजनहारा ॥ १४१ ॥
माया का ठाकुर किया, माया की महिमाइ।
ऐसे देव अनंत करि, सब जग पूजन जाइ ॥ १४२ ॥
माया बैठी राम ह्वै, कहै मैं ही मोहनराइ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस लौं, जोनी आवै जाइ ॥ १४३ ॥
माया बैठी राम ह्वै, ता कूँ लखै न कोइ।
सब जग मानै सत्त करि, बड़ा अचंभा मोहिं ॥ १४४ ॥
अंजन किया निरंजना, गुण निर्गुण जानै।
धर्‍या दिखावै अधर करि, कैसें मन मानै ॥ १४५ ॥
निरंजन की बात कहि, आवै अंजन माहिं।
दादू मन मानै नहीं, सर्ग रसातल जाहिं। ॥ १४६ ॥
दादू कथणी और कुछ, करणी करै कुछ और।
तिन थैं मेरा जिव डरै, जिन के ठीक न ठौर ॥ १४७ ॥
कामधेनु के पटतरै[४], करै काठ की गाइ।
दादू दूध दूझै नहीं, मूरखि देहि बहाइ ॥ १४८ ॥
चिंतामणि[५] कंकर किया, माँगै कछू न देइ।
दादू कंकर डारि दे, चिंतामणि कर लेइ ॥ १४९ ॥

(१) खड़ा। (२) पवित्र। (३) माँगै। (४) बराबर। (५) एक मणि जो मुँह माँगा पदाथ देती है।

पारस किया पषान का, कंचन कदे[1] न होइ।
दादू आतम राम बिन, भूलि पड़या सब कोइ॥ १५० ॥
सूरिज फटिक पषाण का, ता सूँ तिमर न जाइ।
साचा सूरिज परगटै, दादू तिमर नसाइ॥ १५१ ॥
मूरति घड़ी[2] पषाण की, कीया सिरजनहार।
दादू साच सूझै नहीं, यूँ डूबा संसार॥ १५२ ॥
पुरिष बिदेस कामिणि किया, उसही के उणहारि[3]।
कारज को सीझै नहीं, दादू माथैं मारि॥ १५३ ॥
कागद का माणस किया, छत्रपती सिर मौर।
राज पाट साधै नहीं, दादू परिहरि और॥ १५४ ॥
सकल भवन भानै घड़ै, चतुर चलावणहार।
दादू सो सूझै नहीं, जिस का वार न पार॥ १५५ ॥
(दादू) पहिलो आप उपाइ करि, न्यारा पद निर्बांण।
ब्रह्मा बिस्नु महेस मिलि, बंध्या सकल बँधाण[4] ॥ १५६ ॥
नाँव नीति अनीति सब, पहिलो बाँधे बंध।
पसू न जाणै पारधी[5], दादू रोपै फंध॥ १५७ ॥
दादू बाँधे बेद बिधि, भरम करम उरझाइ।
मरजादा माहैं रहै, सुमिरण किया न जाइ॥ १५८ ॥
(दादू) माया मोठि बोलणी, नै नै[6] लागै पाँइ।
दादू पैसै पेट में, काढ़ि कलेजा खाइ॥ १५९ ॥

---

(१) कभी। (२) गढ़ी। (३) यदि स्त्री परदेस गये हुए पुरुष के सरीखी मूरत बनाकर रक्खै तो उससे कोई काम नहीं निकल सकता। (४) निरंजन जोत (काल और माया) ने ब्रह्मा, बिश्नु, महेश, को पैदा किया और फिर निरंजन न्यारे होकर निरबान पद में सतपुरुष के ध्यान में लग गये और तीनों देवता और माया ने मिलकर सब रचना त्रिलोकी की करी और सब प्रकार के बन्धन जीव को अपनी अमलदारी से बाहर न जा सकने के निमित्त फैलाये। (५) शिकार। (६) झुक झुक कर।

नारी नागणि जे डसे, ते नर मुए निदान।
दादू को जीवै नहीं, पूछौ सबै सयान॥ १६०॥
नारी नागणि एक सी, बाघणि बड़ी बलाइ।
दादू जे नर रत भये, तिन का सरबस खाइ॥ १६१॥
नारी नैन न देखिये, मुख सूँ नाँव न लेइ।
कानौं कामणि जिनि सुणै, यहु मण जाण न देइ॥ १६२॥
सुंदरि खाये साँपणी, केते यहि कलि माहिं।
आदि अंत इन सब डसे, दादू चेतै नाहिं॥ १६३॥
दादू पैसे पेट में, नारी नागणि होइ।
दादू प्राणी सब डसे, काढ़ि सकै ना कोइ॥ १६४॥
माया साँपणि सब डसै, कनक कामणी होइ।
ब्रह्मा बिस्नु महेस लौं, दादू बचै न कोइ॥ १६५॥
माया मारै जीव सब, खंड खंड करि खाइ।
दादू घट का नास करि, रोवै जग पतियाइ॥ १६६॥
बाबा बाबा कहि गिलै[1], भाई कहि कहि खाइ।
पूत पूत कहि पी गई, पुरिषा जिन पतियाइ॥ १६७॥
ब्रह्मा बिस्नु महेस की, नारी माता होइ।
दादू खाये जीव सब, जिनि रु पतीजै कोइ॥ १६८॥
माया बहुरूपी नटणी नाचै, सुर नर मुनि कूँ मोहै।
ब्रह्मा बिस्नु महादेव बाहै[2], दादू बपुरा को है॥ १६९॥
माया पासी[3] हाथि लै, बैठी गोप छिपाइ।
जे कोइ धीजै प्राणियाँ, ताही के गलि बाहि॥ १७०॥
पुरिषा पासी हाथि करि, कामणि के गल बाहि।
कामणि कटारी कर गहै, मारि पुरिष कूँ खाइ॥ १७१॥

---

(१) निगलै। (२) जोतै। (३) फाँसी।

नारी वैरणि पुरिष की, पुरिषा वैरी नारि।
अंति कालि दून्यूँ मुए, दादू देखि बिचारि ॥ १७२ ॥
नारी पुरिष कूँ ले मुई, पुरिषा नारी साथ।
दादू दून्यूँ पचि मुए, कछू न आया हाथ ॥ १७३ ॥
भँवरा लुब्धी बास का, कँवल बँधाना आइ।
दिन दस माहैं देखताँ, दून्यूँ गये बिलाइ ॥ १७४ ॥
नारी पीवै पुरिष कूँ, पुरिष नारी कूँ खाइ।
दादू गुर के ज्ञान बिन, दून्यूँ गये बिलाइ ॥ १७५ ॥

॥ इति माया को अंग समाप्त ॥१२॥

१३—साच को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बन्दनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥

॥ निर्दई-मांसाहारी ॥

(दादू) दया जिन्हों के दिल नहीं, बहुरि कहाव साध।
जे मुख उन का देखिये, (तौ) लागै बहु अपराध ॥ २ ॥
(दादू) मिहर मुहब्बत मन नहीं, दिल के बज्र कठोर।
काले काफिर ते कहिय[1], मोमिन[2] मालिक और ॥ ३ ॥
(दादू) कोई काहू जीव की, करै आतमा घात।
साच कहूँ संसा नहीं, सो प्राणी दोजगि[3] जात ॥ ४ ॥
(दादू) नाहर सिंह सियाल सब, केते—मूसलमान।
माँस खाइ मोमिन भये, बड़े मियाँ का ज्ञान ॥ ५ ॥

---

(१) कहना चाहिये। (२) सच्चे मालिक का ईमान या निश्चय रखने वाले।
(३) दोजख = नर्क।

(दादू) माँस अहारी जे मरा , ते नर सिंह सियाल ।
बग[1] मंजार[2] सुनहा[3] सही , एता परतषि[4] काल ॥ ६ ॥

(दादू) मुई मार माणस घणे , ते परतषि जम काल ।
मिहर दया नहिं सिंहदिल[5] , कूकर काग सियाल ॥ ७ ॥

माँस अहारी मद[6] पिवै , बिषै बिकारी सोइ ।
दादू आतम राम बिन , दया कहाँ थैं होइ ॥ ८ ॥

लंगर लोग लोभ सूँ लागे , बोलैं सदा उन्हीं की भीर ।
जोर जुलम बीच बटपारे , आदि अंत उनहीं सूँ सीर ॥९[7] ॥

तन मन मारि रहे साईं सूँ , तिन कूँ देखि करैं ताजीर ।
ये बड़ि बूझि कहाँ थैं पाई , ऐसी कजा औलिया पीर ॥१०[8] ॥

बेमिहर गुमराह ग़ाफ़िल , गोश्त खुर्दनी ।
बेदिल बदकार आलम , हयात मुर्दनी ॥ ११[9] ॥

छल करि बल करि धाइ करि , मारै जेहि तेहिं फेरि ।
दादू ताहि न धीजिये , परणै सगी पतेरि[10] ॥ १२ ॥

---

(१) बगुला । (२) बिल्ली । (३) कुत्ता । (४) प्रत्यक्ष । (५) संग दिल =कठोर ।
(६) शराब ।

(७) साखी न० ९—निलज्ज बिषई संसारी [लंगर लोग] उन निर्दई बेईमानों का पच्छ [भीर] करते और उन्हीं की सी बोली बोलते हैं, ऐसे लोग अत्याचार और दुष्टता [जोर जुल्म] की राह के ठग [बटपार] हैं और यह जीव जनम भर ऐसों ही का साथ [सीर] देता है ।

(८) साखी नं० १०—जो भक्त जन तन मन को नीचा डाल कर मालिक की सेवा में लगे हैं उन से ऐसे दुर्जन विरोध [ताज़ीर] रखते हैं; न जाने यह अनूठी समझौती [बड़ी बूझि] महात्माओं और सद्उपदेश कों [औलिया पीर] के घात [क़ज़ा] की कहाँ से धारन की ।

(९) साखी नं० ११—निठुर [बेमिहर] बिमुख [गुमराह] अचेत (ग़ाफ़िल) माँस अहारी [गोश्त खुर्दनी] कपटी [बेदिल] कुकर्मी [बदकार], संसार में [आलम] जीते जी मृतक तुल्य [हयात मुर्दनी] है ।

(१०) ऐसे का कभी बिश्वास न करै [धीजिये] वह अपनी सगी बहिन [पतेरि] से ब्याह कर ले (परणै) तो अचरज नहीं ।

(दादू) दुनियाँ सूँ दिल बाँधिकरि, बैठे दीन गँवाइ।
नेकी नाँव बिसारि करि, करद कमाया खाइ[1] ॥ १३ ॥

(दादू) गल काटै कलमा भरै, अया बिचारा दीन।
पाँचौ बखत निमाज गुजारै, स्याबित नहीं अकीन ॥१४[2] ॥

दुनियाँ के पीछे पड्या, दौड्या दौड्या जाइ।
दादू जिन पैदा किया, ता साहिब कूँ छिटकाइ ॥ १५ ॥

कुफर[3] जे के मन में, मीयाँ मूसलमान।
दादू) पेया[4] झङ्ग[5] में, बिसारे रहमान ॥ १६ ॥

आपस[6] कौं मारै नहीं, पर कौं मारन जाइ।
दादू आपा मारे बिना, कैसे मिलै खुदाइ ॥ १७ ॥

भीतर दुंदर[7] भरि रहे, तिन कौं मारैं नाहिं।
साहिब की अरवाह[8] कौं, ता कौं मारन जाहिं ॥ १८ ॥

(दादू) मूए कौं क्या मारिये, मीयाँ मूई[9] मार।
आपस[10] कौं मारै नहीं, औरौं कौं हुसियार ॥ १९ ॥

॥ साच ॥

जिस का था तिस का हुआ, तौ काहे का दोस।
दादू बंदा बंदगी, मीयाँ ना कर रोस ॥ २० ॥

---

(१) छुरी की कमाई (यानी गोश्त जिस को छुरे से काटते हैं) खाता है।

(२) मुसलमान दीन अधीन बकरे (अया) को जिबह करने के वक्त कलमा पढ़ते हैं—लेकिन पाँचों वक्त की नमाज़ पढ़ने से क्या होता है जब प्रतीत (यक़ीन) पक्की नहीं है।

(३) जिस के मन में संसार की चाह और मालिक की अचाह है। (४) पड़ा। (५) झगड़ा। (६) अपनपौ। (७) दुई, भरम, कलह। (८) रुहैं, जीवों। (९) माया, ममता। (१०) हँगता।

सेवग सिरजनहार का, साहिब का बंदा।
दादू सेवा बंदगी, दूजा क्या धन्धा ॥ २१ ॥

॥ काफ़र यानी असाध की रहनी ॥

॥ चौपाई[1] ॥

सो काफिर जो बोलै काफ। दिल अपणा नहिं राखै साफ।
साईं कौं पहिचानै नाहीं। कूड़ कपट सब उस ही माहीं ॥२२॥
साईं का फुरमान न मानै, कहाँ पीव ऐसे करि जानै।
मन आपणे में समझत नाहीं। निरखत चलै आपणी छाहीं ॥२३॥
जोर करै मिसकीन[2] सतावै। दिल उस की में दरद न आवै।
साईं सेती नाहीं नेह। गर्ब करै अति अपणी देह ॥ २४ ॥
इन बातन क्यों पावै पीव। पर धन ऊपर राखै जीव ॥
जोर जुलुम करि कुटँब सूँ खाइ। सो काफिर दोजग में जाइ ॥ २५ ॥

॥ हिंसा ॥

॥ दोहा ॥

(दादू) जा कौं मारण जाइये, सोई फिर मारै।
जा कौं तारण जाइये, सोई फिर तारै ॥ २६ ॥
(दादू) नफ़स[3] नाँव सूँ मारिये, गोसमाल[4] दे पंद[5]।
दूई है सो दूरि करि, तब घर में आनंद ॥ २७ ॥

॥ चौपाई ॥

मुसलमान जो राखै मान। साईं का मानै फुरमान ॥
सारौं कौं सुखदाई होइ। मुसलमान कर जाणौ सोइ ॥ २८ ॥

---

(१) नीचे की आठ कड़ियाँ और फिर दो दोहों के आगे की आठ कड़ियाँ चौपाई की हैं जिन पर एक ही नम्बर होना चाहिए लेकिन जो कि पाँचों लिपियों और छापों में दोहा की तरह दो दो कड़ियों पर नम्बर दिये हैं वही तरीक़ा क़ाइम रक्खा गया।(२) गरीब। (३) मन। कान उमेठना, सज़ा देना। (४) समझौती, सीख। (५) कहते हैं कि नम्बर ३२ से ३६ तक की साखियाँ मुसलमानों के इस व्यंग पर लिखी गईं कि दादूजी न नमाज़ पढ़ते और न देवी देवता पूजते तो न हिन्दू हुए न मुसलमान, फिर हैं क्या ?

(दादू) मुसलमान मिहर गहि रहै। सब कौं सुख किसही नहिं दहै॥
मुवा न खाय, जीवत नहिं मारै। करै बंदगी राह सँवारै॥२९॥
सो मोमिन मन में करि जाणि। सत्ति सबूरी बैसै आणि॥
चालै साच सँवारै बाट। तिन कूँ खुलै भिस्त का पाट॥ ३०॥
सो मोमिन मोम दिल होइ। साईं को पहिचानै सोइ।
जोर न करै हराम न खाइ। सो मोमिन भिस्त में जाइ॥३१॥
जो हम नहीं गुजारते, तुम कौं क्या भाई।
सीर नहीं कुछ बंदगी, कहु क्यूँ फुरमाई॥ ३२॥
अपणे अमलौं छूटिये, काहू के नाहीं।
सोई पीड़ पुकारसी, जा दूखै माहीं॥ ३३॥
कोई खाइ अघाइ करि, भूखे क्यों भरिये।
खूटी पूगी[1] आन की, आपण क्यों मरिये॥ ३४॥
फूटी नाव समंद में, सब डूबन लागे।
अपणाँ अपणाँ जीव ले, सब कोई भागे॥ ३५॥
(दादू) सिरि सिरि लागी आपणे, कहु कौण बुझावै।
अपणाँ अपणाँ साच दे, साईं कौं भावै॥ ३६॥

॥ चितावनी ॥

साचा नाँव अलाह का, सोई सति करि जाणि।
निहचल करि ले बंदगी, दादू सो परवाणि॥ ३७॥
आवट कूटा[2] होत है, औसर बीता जाइ।
दादू करि ले बन्दगी, राखणहार खुदाइ॥ ३८॥
इस कलि केते ह्वै गये, हिंदू मूसलमान।
दादू साची बन्दगी, झूठा सब अभिमान॥ ३९॥

(१) खोटा भाग। (२) कूटा पीसी, जनम मरन।

॥ कथनी बिना करनी ॥

पोथी अपणा प्यंड करि, हरि जस माहैं लेख।
पंडित अपणा प्राण करि, दादू कथहु अलेख ॥ ४०[१] ॥
काया कतेब बोलिये, लिखि राखूँ रहिमान[२]।
मनवाँ मुल्ला बोलिये, सुरता[३] है सुबहान[४] ॥ ४१ ॥
(दादू) काया महल में निमाज गुजारूँ, तहँ और
न आवन पावै ।
मन मनके[५] करि तसबी[६] फेरूँ, तब साहिब के मन भावै ॥४२॥
दिल दरिया में गुसल[७] हमारा, ऊजू[८] करि चित लाऊँ ।
साहिब आगे करूँ बन्दगी, बेर बेर बलि जाऊँ ॥४३॥
(दादू) पंचों संगि सँभालूँ साईं, तन मन तौ सुख पाऊँ ।
प्रेम पियाला पिवजी देवै, कलमा ये लय लाऊँ ॥४४॥
सोभा कारण सब करै, रोजा बङ्ग निमाज ।
मुवा न एकै आह सूँ, जे तुज साहिब सेती काज ॥४५[९] ॥
हर रोज हजूरी होइ रहु, काहे करै कलाप[१०] ।
मुल्ला तहाँ पुकारिये, जहँ अरस[११] इलाही आप ॥४६॥
हर दम हाजिर होणाँ बाबा, जब लग जीवै बन्दा ।
दाइम[१२] दिल साईं सौं साबित, पंच बखत का धन्धा ॥४७॥
(दादू) हिंदू मारग कहैं हमारा, तुरक कहैं रह[१३] मेरी ।
कहाँ पंथ है कहौ अलह का, तुम तौ ऐसी हेरी ॥४८॥

---

(१) भगवंत जो लिखने पढ़ने से परे है उस के गुणानुवाद के लिये अपने पिंड की पोथी बनाओ अंतर को कागद, उसके दात को लेख, और अपने प्राण को पाटक।

(२) दयाल पुरुष। (३) श्रोता। (४) पवित्र भगवंत। (५) माला के दाने। (६) माला। (७) स्नान। (८) निमाज़ के पहिले मुसलमान हाथ मुँह धोते हैं उसको वजू बोलते हैं। (९) भाव यह कि रोजा, बाँग नमाज़ आदि कार्रवाई ऊपरी दिखावे को करता है परन्तु मालिक के मिलने को बिरह नहीं उठाता कि जिससे काम बनै। (१०) शोक, दुख। (११) अर्श = नवाँ आसमान। (१२) सदा, हमेशा। (१३) राह।

(दादू) दुई दरोग[1] लोग कौं भावै, साईं साच पियारा ।
कौण पंथ हम चलैं कहौ धौं, साधौ करौ बिचारा ॥४९॥
खंडि खंडि करि ब्रह्म कौं, पखि पखि[2] लीया बाँटि ।
दादू पूरण ब्रह्म तजि, बँधे भरम की गाँठि ॥५०॥
जीवत दीसै रोगिया, कहैं मूवाँ पीछैं जाइ ।
दादू दुह के पाढ़ में, ऐसी दारू लाइ ॥ ५१[3] ॥
सो दारू किस काम की, जा थैं दरद न जाइ ।
दादू काटै रोग कौं, सो दारू ले लाइ ॥ ५२ ॥
(दादू) अनभै काटै रोग कौं, अनहद उपजै आइ । (४-२०७)
सेझे का जल निर्मला, पीवै रुचि ल्यौ लाइ ॥ ५३ ॥
सोइ अनभै सोइ ऊपजी, सोई सबद तत सार ।
सुणताँ ही साहिब मिलै, मन के जाहिं बिकार ॥ ५४ ॥
औषद खाइ न पछि रहै, बिषम ब्याधि क्यों जाइ । (१-१५१)
दादू रोगी बावरा, दोस बैद कौं लाइ ॥ ५५ ॥

॥ पेटू होने का निषेद ॥

एक सेर का ठाँवड़ा[4], क्यों ही भर्‍या न जाइ ।
भूख न भागी जीव की, दादू केता खाइ ॥ ५६ ॥
पसुवाँ की नाईं भरि भरि खाइ, व्याधि घनेरी बधती[5] जाइ ।
राम रसाइन भरि भरि पीवै, दादू जोगी जुग जुग जीवै ॥५७॥
दादू चारै[6] चित दिया, चिंतामणि कौं भूलि ।
जन्म अमोलिक जात है, बैठे माँझी फूलि ॥ ५८ ॥

---

(१) झूठ । (२) पखड़ी पखड़ी । (३) इस साखी का भावार्थ यह है कि तुम जो अनेक इष्ट देवी देवताओं के बाँध रहे हो और उन से यह आस करते हो कि मुए पीछे मुक्ति हो जायगी यह तुम्हारी भूल है, भला संसार रूपी पहाड़ (पाढ़) की दाह (दुँह) में यह छोटी छोटी दवाइयाँ (अर्थात इष्ट) क्या काम दे सकती हैं, इस लिए ऐसी भारी औषधी लेव जैसा कि ५२ वीं साखी में लिखा है । (४) बरतन । (५) बढ़ती । (६) चारा या पशु तुल्य अहार में ।

भरी अधौड़ी भावठी[1], बैठा पेट फुलाइ ।
दादू सूकर स्वान ज्यों, ज्यों आवै त्यों खाइ ।। ५९ ।।
(दादू) खाटा मीठा खाइ करि, स्वादि चित दीया ।
इन में जीव बिलंबिया, हरि नाँव न लीया ।। ६० ।।
भगति न जाणै राम की, इंद्री के आधीन ।
दादू बंध्या स्वाद सौं, ता थैं नाँव न लीन्ह ।। ६१ ।।
(दादू) अपना नीका राखिये, मैं मेरा दिया बहाइ ।
तुझ अपणे सेती काज है, मैं मेरा आवै तीधर जाइ ।। ६२ ।।
जे हम जाण्या एक करि, तौ काहे लोक रिसाइ ।
मेरा था सो मैं लिया, लोगौं का क्या जाइ ।। ६३ ।।
दादू द्वै द्वै पद किये, साखी भी द्वै चारि ।
हम कौं अनभै ऊपजी, हम ज्ञानी संसारि ।। ६४ ।।
सुनि सुनि पर्चे ज्ञान के, साखी सबदी होइ ।
तब हीं आपा ऊपजे, हम सा और न कोइ ।। ६५ ।।
सो उपजी किस काम की, जे जण जण करै कलेस ।
साखी सुनि समझै साध की, ज्यों रसना रस सेस ।। ६६ ।।
(दादू) पद जोड़ै साखी कहै, बिषै न छाड़ै जीव ।
पानी घालि बिलोइये, तौ क्यों कर निकसै घीव ।। ६७ ।।
(दादू) पद जोड़े क्या पाइये, साखी कहे क्या होइ ।
सत्ति सिरोमणि साइयाँ, तत्त न चीन्हा सोइ ।। ६८ ।।
बहिबे सुणिबे मन सुखी, करिबा औरै खेल ।
बातौं निमर न भाजई, दीवा बाती तेल ।। ६९ ।।
(दादू) करिबे वाले हम नहीं, कहिबे कूँ हम सूर ।
कहिबा हम थैं निकट है, करिबा हम थैं दूर ।। ७० ।।

(१) कच्चे चमड़े की भट्ठी यानी पेट ।

(दादू) कहे कहे का होत है, कहे न सीझै काम।
कहे कहे का पाइये, जब लग रिदै न आवे राम ॥७१ ॥
राम कहूँ ते जोड़िबा, राम कहूँ ते साखि।
राम कहूँ ते गाइबा, राम कहूँ ते राखि ॥ ७२ ॥
दादू सुरता[1] घरि[2] नहीं, बकता बकै सु बादि।
बकता सुरता एक रस, कथा कहावे आदि ॥ ७३ ॥
बकता सुरता घरि नहीं, कहै सुणै को राम।
दादू यहु मन थिर नहीं, बादि बकै बेकाम ॥ ७४ ॥
देखा देखी सब चले, पार न पहुँच्या जाइ।
दादू आसण पहल कै, फिरि फिरि बैठे आइ ॥ ७५ ॥
(१०-११७)

अंतर सुरझै समझि करि, फिर न अरूझै जाइ।
बाहिर सुरझै देखताँ, बहुरि अरूझै आइ ॥ ७६ ॥
आतम लावे आप सौं, साहिब सेती नाहिं।
दादू को[3] निपजै नहीं, दून्यूँ निर्फल जाहिं ॥ ७७ ॥
तूँ मुझ कूँ मोटा[4] कहै, हौं तुझै बड़ाई मान।
साईं कूँ समझै नहीं, दादू झूठा ज्ञान ॥ ७८ ॥
सदा समीप रहै सँग सनमुख, दादू लखै न गूझ।
सुपनैं ही समझै नहीं, क्यों करि लहै अबूझ ॥ ७९ ॥
(दादू) भगत कहावैं आप कूँ, भगति न जाणैं भेव।
सुपनैं ही समझैं नहीं, कहाँ बसैं गुरदेव ॥ ८० ॥ (१-१२९)
(दादू) सेवग नाँव बुलाइये, सेवा सुपिनै नाहिं।
नाँव धराये का भया, जे एक नहीं मन माहिं ॥ ८१ ॥

---

(१) श्रोता, सुनने वाला। (२) एक चित्त। (३) कोई। (४) बड़ा।

नाँव धरावे दास का, दासातन थैं दूरि।
दादू कारज क्यौं सरै, हरि सौं नहीं हजूरि ॥ ८२ ॥
भगत न होवै भगति बिन, दासातन बिन दास।
बिन सेवा सेवग नहीं, दादू झूठी आस ॥ ८३ ॥
(दादू) राम भगति भावै नहीं, अपनी भगति का भाव।
राम भगति मुख सौं कहै, खेलै अपणाँ डाव[१] ॥ ८४ ॥
भगति निराली रहि गई, हम भूलि पड़े बन माहिं।
भगति निरंजन राम की, दादू पावै नाहिं ॥ ८५ ॥
सो दसा कतहूँ रही, जिहिं दिसि पहुँचै साध।
मैं तैं मूरखि गहि रहे, लोभ बड़ाई बाद ॥ ८६ ॥
दादू राम बिसारि करि, कीये बहु अपराध।
लाजों मारे साध सब, नाँव हमारा साध ॥ ८७ ॥
मनसा के पकवान सौं, क्यों पेट भरावै।
ज्यों कहिये त्यों कीजिये, तब हीं बनि आवै ॥ ८८ ॥
(दादू) मिसरी मिसरी कीजिये, मुख मीठा नाहीं।
मीठा तब हीं होइगा, छिटकावै माहीं ॥ ८९ ॥
(दादू) बातों ही पहुँचै नहीं, घर दूरि पयाना।
मारग पंथी उठि चलै, दादू सोइ सयाना ॥ ९० ॥
बातौं सब कुछ कीजिये, अंत कछू नहिं देखै।
मनसा बाचा कर्मना, तब लागै लेखै ॥ ९१ ॥
(दादू) कासों कहि समझाइये, सब को चतुर सुजान।
कौड़ी कुंजर आदि दै, नाहिन कोई अजान ॥ ९२ ॥
(दादू) सूकर स्वान सियाल सिंह, सर्प रहै घट माहिं।
कुंजर कीड़ी जीव सब, पाँडे जाणैं नाहिं ॥ ९३ ॥ (११-९)

(१) दाव।

(दादू) सूना घट सोधी नहीं, पंडित ब्रह्मा पूत ।
अगम[1] निगम[2] सब कथैं, घर[3] में नाचैं भूत[4] ॥ ९४ ॥
पढ़े न पावै परम गति, पढ़े न लंघै पार ।
पढ़े न पहुँचै प्राणिया, दादू पीड़ पुकार ॥ ९५ ॥
दादू निबरे[5] नाँव बिन, झूठा कथैं गियान ।
बैठे सिर खाली करैं, पंडित बेद पुरान ॥ ९६ ॥
(दादू) केते पुस्यक पढ़ि मुए, पंडित बेद पुरान ।
केते ब्रह्मा कथि गये, नाहिंन राम समान ॥ ९७ ॥
सब हम देख्या सोधि करि, बेद पुरानौं[6] माहिं ।
जहाँ निरंजन पाइये, सो देस दूरि इत नाहिं ॥ ९८ ॥
पढ़ि पढ़ि थाके पंडिता, किन हुँ न पाया पार ।
कथि कथि थाके मुनि जना, दादू नाँइ अधार ॥९९॥ (२-८७)
काजी कजा[7] न जानही, कागद हाथि कतेब ।
पढ़ताँ पढ़ताँ दिन गये, भीतर नाहीं भेद ॥ १०० ॥
मसि[8] कागद के आसरे, क्यों छूटै संसार ।
राम बिना छूटै नहीं, दादू भर्म बिकार ॥ १०१ ॥
कागद काले करि मुए, केते बेद पुरान ।
एकै अष्यर[9] पीव का, दादू पढ़ै सुजान ॥ १०२ ॥
दादू अष्यर प्रेम का, कोई पढ़ेगा एक । (३-११८)
दादू पुस्तक प्रेम बिन, केते पढ़ैं अनेक ॥ १०३ ॥
दादू पाती प्रेम की, बिरला बाँचै कोइ । (३-११९)
बेद पुरान पुस्तक पढ़े, प्रेम बिना क्या होइ ॥ १०४ ॥
(दादू) कहताँ कहताँ दिन गये, सुणताँ सुणताँ जाइ ।
दादू ऐसा को नहीं, कहि सुणि राम समाइ ॥ १०५ ॥

(१) शास्त्र । (२) पुरान आदिक । (३) घट । (४) काम क्रोध आदिक । (५) हीन, कमतर । (६) दो पुस्तकों में "कुरानौं" है । (७) शरा का मर्म । (८) सियाही । (९) अक्षर ।

मौन गहैं ते बावरे, बोलैं खरे अयान।
सहजैं राते राम सौं, दादू सोई सयान ॥ १०६ ॥

कहताँ सुणताँ दिन गये, है कछू न आवा।
दादू हरि की भगति बिन, प्राणी पछितावा ॥ १०७ ॥

दादू कथणी और कुछ, करणी करैं कुछ और।
तिन थैं मेरा जिव डरै, जिन के ठीक न ठौर ॥ १०८ ॥

अंतर गति औरै कछू, मुख रसना कुछ और।
दादू करणी और कुछ, तिन कौं नाहीं ठौर ॥ १०९ ॥

(दादू) राम मिलन की कहत हैं, करते कुछ औरै।
ऐसे पिव क्यूँ पाइये, समझि मन बौरे ॥ ११० ॥

(दादू) बगनी भंगा खाइ करि, मतवाले माँझी।
पैका नाहीं गाँठड़ी, पातिसाही खाँजी ॥ ॥ १११[१] ॥

दादू टोटा दालिदी[२], लाखौं का ब्योपार।
पैका नाहीं गाँठड़ी, सिरे[३] साहूकार ॥ ११२ ॥

(दादू) ये सब किस के पंथ में, धरती अरु असमान।
पानी पवन दिन राति का, चंद सूर रहिमान ॥ ११३ ॥

ब्रह्मा बिस्नु महेस का, कौन पंथ गुरदेव।
साईं सिरजनहार तूँ, कहिये अलख अभेव ॥ ११४ ॥

महम्मद किस के दीन में, जबराइल[४] किस राह।
इन के मुर्सद[५] पीर की, कहिये एक अलाह ॥ ११५ ॥

(दादू) ये सब किसके है रहे, यहु मेरे मन माहिं।
अलख इलाही जगत गुर, दूजा कोई नाहिं ॥ ११६ ॥

नोट—११३ से ११६ तक की साखियों की पहली कड़ी में प्रश्न है और दूसरी में उत्तर।

(१) भँगेड़ी भाँग खा कर सुध बुध भूल जाते हैं, पल्ले एक टका नहीं पर डींग पादशाही ख़ानख़ानाँ की मारते हैं। (२) दरिद्री, कंगाल। (३) भारी, औवल दर्जे के। (४) एक प्रधान फ़िरिश्ते का नाम। (५) गुरू।

दादू औरैं ही औला तकै, थीयाँ सदै बियंनि।
सो तूँ मीयाँ ना घुरै, जो मीयाँ मीयंनि ॥ ११७[१] ॥

आई रोजी ज्यों गई, साहिब का दीदार।
गहिला लोगों कारणे, देखै नहीं गँवार ॥ ११८[२] ॥

(दादू) सोई सेवग राम का, जिसैं न दूजी चिंत।
दूजा को भावे नहीं, एक पियारा मिंत ॥ ११९ ॥

फल कारनि सेवा करे, जावै त्रिभुवन राव। (८-९२)
दादू सो सेवग नहीं, खेलै अपणा डाव ॥ १२० ॥

सहकामी सेवा करे, माँगे मुग्ध गँवार। (८-९३)
दादू ऐसे बहुत हैं, फल के भूचनहार ॥ १२१ ॥

तन मन से लागा रहै, राता सिरजनहार। (८-९४)
दादू कुछ माँगे नहीं, ते बिरला संसार ॥ १२२ ॥

अपनी अपनी जाति सौं, सब को बैसे पाँति।
दादू सेवग राम का, ताके नहीं भरांति[३] ॥ १२३ ॥

चोर अन्याई मसकरा, सब मिलि बैसैं पाँति।
दादू सेवग राम का, तिन सौं करैं भरांति ॥ १२४ ॥

दादू सूप बजाया क्यों टलै, घर में बड़ी बलाइ[४]।
काल झाल इस जीव का, बातन हीं क्यूँ जाय ॥ १२५ ॥

---

(१) औरों को तो बड़ा (औला) देखता (तकै) या मानता है और सदा दूसरों ही (बियंनि) का बना रहता है (थीयाँ), लेकिन उस मालिक (मीयाँ) को नहीं चाहता जो सब मालिकों का मालिक है। (२) इस (मनुष्य) शरीर ही में मौक़ा था कि सच्चे मालिक की भक्ति कर के उस का दीदार पाता परन्तु गँवार ने संसार और कुटुम्बियों की बढ़ती की ख़ातिर इस दुर्लभ औसर को इस तरह से गँवाया जैसे कि खाना परस कर आई हुई थाली सामने से उठ जावे। (३) दुबिधा। (४) दीवाली के दूसरे दिन घर से बालाय निकालने के निमित्त सूप बजाते हैं परन्तु घट की खोट अर्थात् इंद्रियों के बिकार ऐसी तुच्छ जुगतों से नहीं जाते।

साँप गया सहनाण[1] कूँ, सब मिलि मारै लोक ।
दादू ऐसा देखिये, कुल का डगरा फोक[2] ॥ १२६ ॥

दादू दून्यूँ भरम हैं, हिंदू तुरक गँवार ।
जे दुहवाँ थैं रहित है, सो गहि तत्त बिचार ॥ १२७ ॥

अपणाँ अपणाँ करि लिया, भंजन माहैं बाहि ।
दादू एकै कूप जल, मन का भरम उठाइ ॥ १२८ ॥

(दादू) पानी के बहु नाँव धरि, नाना बिधि की जाति ।
बोलनहारा कौन है, कहौ धौं कहाँ समाति ॥ १२९ ॥

जब पूरन ब्रह्म बिचारिये, तब सकल आतमा एक ।
काया के गुन देखिये, तौ नाना बरण अनेक ॥ १३० ॥

(दादू) लीला राजा राम की, खेलैं सब ही संत ।
आपा पर एकै भया, छूटी सबै भरंत ॥ १३१[3] ॥

अपणाँ पराया खाइ बिष, देखत ही मरि जाइ । (१२-१३२)
दादू को जीवै नहीं, यहि भोरै[4] जिनि खाइ ॥ १३२ ॥

(दादू) भावै साकत भगत है, बिषै हलाहल खाइ । (१२-६७)
तहँ जन तेरा रामजी, सुपनै कदे न जाइ ॥ १३३ ॥

॥ अमिट पाप प्रचंड ॥

भाव भगति उपजै नहीं, साहिब का परसंग ।
बिषै बिकार छूटै नहीं, सो कैसा सतसंग ॥ १३४ ॥

बासन बिषै बिकार के, तिन कूँ आदर मान ।
संगी सिरजनहार के, तिन सूँ गर्ब गुमान ॥ १३५ ॥

---

(१) लीक । (२) थोथा । (३) कहते हैं कि टौंक में एक भारी उत्सव था वहाँ भोजन सामग्री भीड़ के लिये कम थी परन्तु दादू दयाल के भोग लगाने पर वह सामग्री अटूट हो गई । इस का भेद दयाल जी के एक शिष्य ने पूछा जिसके जवाब में यह साखी दादू साहिब ने कही-पं० चं० प्र० । (४) भूल से ।

अंधे कूँ दीपक दिया, तौ भी तिमर न जाइ।
सोधी नहीं सरीर को, तासनि का समझाइ॥ १३६॥
(दादू) कहिये कुछ उपगार कौं, मानैं औगुण दोष।
अंधे कूप बताइया, सत्ति न मानैं लोक॥ १३७॥
कालरि खेत न नीपजे, जे बाहे सौ बार। (१२-४६)
दादू हाना बीज का, क्या पचि मरै गँवार॥ १३८॥
(दादू) जिन कंकर पत्थर सेविया, सो अपना मूल गँवाइ।
अलख देव अंतरि बसै, क्या दूजी जागह जाइ॥ १३९॥
पत्थर पीवैं धोइ करि, पत्थर पूजैं प्राण।
अन्ति काल पत्थर भये, बहु बूड़े यहि ज्ञान॥ १४०॥
कंकर बाँध्या गाँठड़ी, हीरे के बेसास।
अंति काल हरि जौहरी, दादू सूत कपास॥ १४१॥
(दादू) पहिली पूजे ढूँढसी, अब भी ढूँढस बाणि[1]।
आगैं ढूँढस होइगा, दादू सति करि जाणि॥ १४२॥

॥ चितावनी ॥

दादू पैंडे पाप के, कदे न दीजै पाँव।
जिहिं पैंडे मेरा पिव मिलै, तिहिं पैंडे का चाव॥ १४३॥
(दादू) सुकिरत मारग चालताँ, बुरा न कबहूँ होइ।
अमृत खाताँ प्राणियाँ, मुवा न सुनिये कोइ॥ १४४॥

॥ भरम ॥

कुछ नाहीं का नाँव क्या, जे धरिये सो झूठ।
सुर नर मुनि जन बंधिया, लोका आवट कूट[2]॥ १४५॥
कुछ नाहीं का नाँव धरि, भरम्या सब संसार।
साच झूठ समझै नहीं, ना कुछ किया बिचार॥ १४६॥

(१) आदत। (२) कूटा पीसी, जनम मरन।

(दादू) कोइ दौड़े द्वारिका, कोई कासी जाहिं।
कोई मथुरा कौं चले, साहिब घट ही माहिं॥ १४७॥
पूजनहारे पासि है, देही माहैं देव। (४-२५८)
दादू ता कौं छाडि करि, बाहरि माँडी सेव॥ १४८॥
ऊपरि आलम[1] सब करे, साधू जन घट माहिं।
दादू एता अंतरा, ता थैं बनती नाहिं॥ १४९॥
दादू सब थे एक के, सो एक न जाना।
जणे जणे का ह्वै गया, यहु जगत दिवाना॥ १५०॥
झूठा साचा करि लिया, बिष अमृत जाना।
दुख कौं सुख सब को कहै, ऐसा जगत दिवाना॥ १५१॥

॥ साच ॥

सूधा मारग साच का, साचा होइ सो जाइ।
झूठा कोई ना चलै, दादू दिया दिखाइ॥ १५२॥
बाहिब सौं साचा नहीं, यहु मन झूठा होइ।
दादू झूठे बहुत हैं, साचा बिरला कोइ॥ १५३॥
(दादू) साचा अंग न ठेलिये[2], साहिब मानै नाहिं।
साचा सिर पर राखिये, मिलि रहिये ता माहिं॥ १५४॥
जे कोइ ठेलै[2] साच कौं, तौ साचा रहै समाइ[3]।
कौड़ी बर[4] क्यौं दीजिये, रत्न अमोलिक जाइ॥ १५५॥
साचे साहिब कौं मिलै, साचे मारग जाइ।
साचे सौं साचा भया, तब साचे लिये बुलाइ॥ १५६॥
दादू साचा साहिब सेविये, साची सेवा होइ।
साचा दरसन पाइये, साचा सेवग सोइ॥ १५७॥

---

(१) संसार। (२) ढकेलना, निकाल देना। (३) सिमट या खिच जाता है (४) श्रेष्ठ।

साचे का साहिब धणी, समरथ सिरजनहार।
पाखँड की यहु पिर्थमी[1], परपंच का संसार ॥ १५८ ॥
झूठा परगट साचा छानै[2], तिनकी दादू राम न मानै ॥१५९॥
कहँ आसिक अल्लाह के, मारे अपने हाथ। (३-६८)
कहँ आलम औजूद सौं, कहैं जबाँ की बात ॥ १६० ॥
(दादू) पाखँड पीव न पाइये, जे अंतरि साच न होइ।
ऊपरि थैं क्यौंहीं रहौ, भीतर के मल धोइ ॥ १६१ ॥
साच अमर जुगि जुगि रहै, दादू बिरला कोइ।
झूठ बहुत संसार में, उतपति परलय होइ ॥ १६२ ॥
दादू झूठा बदलिये, साच न बदल्या जाइ।
साचा सिर पर राखिये, साध कहै समझाइ ॥ १६३ ॥
साच न बूझै जब लगैं, तब लग लोचन अंध।
दादू मुकता छाड़ि करि, गल में घाल्या फंध ॥ १६४ ॥
साच न सूझै जब लगैं, तब लग लोचन नाहिं।
दादू निरबँध छाड़ि करि, बंध्या द्वै पष[3] माहिं ॥ १६५ ॥
दादू जे साहिब सिरजै नहीं, तौ आपे क्यौं करि होइ।
जे आपे ही ऊपजे, तौ मरि करि जीवै कोइ ॥ १६६ ॥
कर्म फिरावै जीव कूँ, कर्मों कूँ करतार।
करतार कूँ कोई नहीं, दादू फेरनहार ॥ १६७ ॥
जे यहु करता जीव था, संकट क्यूँ आया।
कर्मों के बसि क्यूँ भया, क्यूँ आप बँधाया ॥ १६८ ॥
क्यूँ सब जोनी जगत में, घर बार नचाया।
क्यूँ यह करता जीव है, पर हाथि बिकाया ॥ १६९ ॥

(१) पृथ्वी। (२) गुप्त, छिपा। (३) पक्ष, तरफ़।

दादू कृत्तम काल बसि, बंध्या गुण माहीं ।
उपजै बिनसै देखताँ, यहु करता नाहीं ॥ १७० ॥
एक साच सौं गहि गही, जीवन मरन निबाहि ।
दादू दुखिया राम बिन, भावै तीथरि जाहि ॥ १७१ ॥
(दादू) भावै तहाँ छिपाइये, साच न छाना होइ । (२-११०)
सेस रसातल गगन धू, परगट कहिये सोइ ॥ १७२ ॥
(दादू) छानै छानै कीजिये, चौड़ैं परगट होइ ।
दादू पैसि पयाल में, बुरा करै जिनि कोइ ॥ १७३ ॥
अनकीया लागै नहीं, कीया लागै आइ ।
साहिब के दरि न्याव है, जे कुछ राम रजाइ[1] ॥ १७४ ॥
सोइ जन साधू सिद्ध सो, सोइ सतबादी सूर ।
सोइ मुनियर दादू बड़े, सनमुख रहणि हजूर ॥ १७५ ॥
सोइ जन साचे सोइ सती, सोइ साधक सूजान ।
सोइ ज्ञानी सोइ पंडिता, जे राते भगवान ॥ १७६ ॥
(दादू) सोइ जोगी सोइ जंगमा, सोइ सोफी सोइ सेख ।
सोइ सन्यासी सेवड़े, दादू एक अलेख ॥ १७७ ॥
सोइ काजी मुल्ला सोई, सोइ मोमिन मुसल्मान ।
सोई सयाने सब भले, जे राते रहिमान ॥ १७८ ॥
राम नाम कूँ बणिजन बैठे, ता थैं माँड्या हाट ।
साईं सौं सौदा करैं, दादू खोलि कपाट ॥ १७९ ॥
बिच के[2] सिर खाली करैं, पूरे सुख संतोष ।
दादू सुध बुध आतमा, ताहि न दीजै दोष ॥ १८० ॥
सुध बुध सूँ सुख पाइये, कै साध बमेकी[3] होइ ।
दादू ये बिच के बुरे, दाधे रीगे[4] सोइ ॥ १८१ ॥

---

(१) रजा = मर्जी, इच्छा । (२) बीच के अर्थात अधूरे । (३) बिबेकी । (४) दाधे रीगे = जले तपे जीव जंतु की नाईं रेंगते हैं अर्थात् जीते जी मृतक तुल्य हैं ।

जिनि कोई हरि नाँव में, हम कूँ हाना बाहि[1] ।
ता थैं तुम थैं डरत हौं, क्यूँ ही टलै बलाइ ॥ १८२ ॥
जे हम छाड़ैं राम कूँ, तौ कौन गहैगा ।
दादू हम नहिं उच्चरैं[2], तौ कौन कहैगा ॥ १८३ ॥
एक राम छाड़ै नहीं, छाड़ै सकल बिकार ।
दादू सहजैं होइ सब, दादू का मत सार ॥ १८४ ॥
जे तूँ चाहे राम कूँ, तौ एक मना[3] आराध ।
दादू दूजा दूरि करि, मन इन्द्री कर साध ॥ १८५ ॥
कबीर बिचारा कहि गया, बहुत भाँति समझाइ ।
दादू दुनियाँ बावरी, ता के संगि न जाइ ॥ १८६ ॥
पावैंगे उस ठौर को, लंघैंगे यहु घाट ।
दादू क्या कहि बोलिये, अजहूँ बिच ही बाट ॥ १८७ ॥
साचा राता साच सूँ, झूठा राता झूठ ।
दादू न्याव नबेरिये[4], सब साधों कूँ पूछ ॥ १८८ ॥

॥ सच्चे साध संत के मत की एकता ॥

जे पहुँचे ते कहि गये, तिनकी एकै बाति ।
सबै सयाने एक मति, उनकी एकै जाति ॥ १८९ ॥
जे पहुँचे ते[5] पूछिये, तिन की एकै बात ।
सब साधों का एक मति, ये बिच के बारह बाट[6] ॥ १९० ॥
सबै सयाने कहि गये, पहुँचे का घर एक ।
दादू मारग माहिं के, तिन की बात अनेक ॥ १९१ ॥
सूरज सन्मुख आरसी, पावक किया प्रकास । (१-१४८)
दादू साईं साध बिच, सहजैं निपजै दास ॥ १९२ ॥

(१) हानि पहुँचावै या डालै । (२) बोलैं । (३) एक चित्त होके । (४) निबेड़ा करना, ते करना । (५) तिन से । (६) तित्तर बित्तर, बेठिकाने ।

सूरज साखीभूत है, साच करै परकास।
चोर डरै चोरी करे, रैनि तिमर का नास॥ १६३ ॥
चोर न भावै चाँदिणाँ, जिनि उजियारा होइ।
सूते का सब धन हडौं[1], मुझै न देखै कोइ॥ १६४ ॥

॥ संसकार आगम ॥

घटि घटि दादू कहि समझावै, जैसा करै सो तैसा पावै।
को काहू की सीरी नाहीं, साहिब देखै सब घट माहीं॥१६५॥

॥ इति साच को अंग समाप्त १३ ॥

१४—भेष को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः
बंदनं सर्ब साधवा, प्रणामं पारंगतः॥ १ ॥
दादू बूड़े ज्ञान सब, चतुराई जलि जाइ।
अंजन मंजन फूँकि कै, रहो राम ल्यौ लाइ॥ २ ॥
राम बिना सब फीके लागैं, करनी कथा गियान।
सकल अबिर्था[2] कोटि करि, दादू जोग धियान॥ ३ ॥
ज्ञानी पंडित बहुत हैं, दाता सूर अनेक।
दादू भेष अनंत हैं, लागि रह्या सो एक॥ ४ ॥
कोरा कलस अवाह[3] का, ऊपरि चित्र अनेक।
क्या कीजै दादू बस्त बिन, ऐसे नाना भेष॥ ५ ॥
बाहरि दादू भेष बिन, भीतर बस्त अगाध।
सो ले हिरदै राखिये, दादू सन्मुख साध॥ ६ ॥

---

(१) हरौं। (२) व्यर्थ। (३) कुम्हार का आवा।

(दादू) भाँडा भरि धरि बस्त सूँ, ज्यौं महिंगे मोल बिकाइ ।
खाली भाँडा बस्त बिन, कौड़ी बदले जाइ ॥ ७ ॥
(दादू) कनक कलस बिष सूँ भर्या, सो किस आवै काम ।
सो धनि कूटा चाम का, जा में अमृत राम ॥ ८[1] ॥
दादू देखै बस्त कौं, बासन देखै नाहिं ।
दादू भीतरि भरि धर्या, सो मेरे मन माहिं ॥ ९ ॥
(दादू) जे तूँ समझै तौ कहौं, साचा एक अलेष ।
डाल पान तजि मूल गहि, क्या दिखलावै भेष ॥ १० ॥
(दादू) सब दिखलावैं आप कूँ, नाना भेष बणाइ ।
जहँ आपा मेटन हरि भजन, तेहिं दिसि कोई न जाइ ॥११॥
सो दिसा कतहूँ रही, जेहिं दिसि पहुँचे साध ।
मैं तैं मूरिख गरि रहे, लोभ बड़ाई बाद ॥ १२ ॥
(दादू) भेष बहुत संसार में, हरि जन बिरला कोइ ।
हरि जन राता राम सूँ, दादू ऐकै सोइ ॥ १३ ॥
हीरै रीझै जौहरी, खलि रीझै संसार ।
स्वाँग साध बहु अंतरा, दादू सत्ति बिचार ॥ १४ ॥
स्वाँग साध बहु अंतरा, जेता धरनि अकास ।
साधू राता राम सूँ, स्वाँग जगत की आस ॥ १५ ॥
(दादू) स्वाँगी सब संसार है, साधू बिरला कोइ ।
जैसें चंदन बावना, बन बन कहीं न होइ[2] ॥ १६ ॥
(दादू) स्वाँगी सब संसार है, साधू कोई एक ।
हीरा दूरि दिसंतरा, कंकर और अनेक ॥ १७ ॥

(१) सोने का कलसा जिसमें बिष भरा हो बेकाम है, परन्तु कूटे चमड़े का कुप्पा भी जिस में नाम (राम) रूपी अमृत भरा हो वह धन्य (धनि) है। (२) बावना चंदन चंदनों में विशेष सुगन्धित होता है सो वह हर एक जंगल में नहीं मिल सकता।

(दादू) स्वाँगी सब संसार है, साधू सोधि सुजाण।
पारस परदेसौं भया, दादू बहुत पषाण ॥ १८ ॥
(दादू) स्वाँगी सब संसार है, साध समंदाँ पार।
अनलपंखि कहँ पाइये, पंखी कोटि हजार ॥ १९ ॥
दादू चंदन बन नहीं, सूरन के दल नाहिं।
सकल समँद हीरा नहीं, त्यूँ साधू जग माहिं ॥ २० ॥
जे साईं का है रहै, साईं तिस का होइ।
दादू दूजी बात सब, भेष न पावै कोइ ॥ २१ ॥
(दादू) स्वाँग सगाई कुछ नहीं, राम सगाई साच।
दादू नाता नाँव का, दूजै अंगि[1] न राच ॥ २२ ॥
दादू एकै आतमा, साहिब है सब माहिं।
साहिब के नाते मिलै, भेष पंथ के नाहिं ॥ २३ ॥
(दादू) माला तिलक सूँ कुछ नहीं, काहू सेती काम।
अंतरि मेरे एक है, अहि निसि उसका नाम ॥ २४ ॥
(दादू) भगत भेष धरि मिथ्या बोलै, निन्दा पर अपबाद।
साचे कूँ झूठा कहै, लागै बहु अपराध ॥ २५ ॥
(दादू) कब हूँ कोई जिनि मिलै, भगत भेष सूँ जाइ।
जीव जन्म का नास है, कहै अमृत बिष खाइ ॥ २६ ॥
(दादू) पहुँचे पूत बटाऊ है करि, नट ज्यूँ काछया भेष।
खबरि न पाई खोज की, हम कूँ मिल्या अलेष ॥ २७ ॥
(दादू) माया कारणि मूँड मुँडाया, यहु तौ जोग न होई।
पारब्रह्म सूँ परचा नाहीं, कपट न सीझै कोई ॥२८॥
पीव न पावै बावरी, रचि रचि करै सिंगार।
दादू फिरि फिरि जगत सूँ, करैगी बिभचार ॥ २९ ॥

(१) नोट एक लिपि में "अंगि" के बदले "रंग" है।

प्रेम प्रीत सनेह बिन, सब झूठे सिंगार।
दादू आतम रत नहीं, क्यूँ मानै भरतार ॥ ३० ॥
(दादू) जग दिखलावै बावरी, षोड़स करै सिंगार।
तहँ न सँवारै आप कूँ, जहँ भीतर भरतार ॥ ३१ ॥
सुध बुध जीव धिजाइ करि, माला संकल बाहि।
दादू माया ज्ञान सूँ, स्वामी बैठा खाइ ॥ ३२[1] ॥
जोगी जंगम सेवड़े, बौध सन्यासी सेख।
षटदर्सन दादू राम बिन, सबै कपट के भेख ॥ ३३ ॥
(दादू) सेख मसाइख औलिया, पैगम्बर सब पीर।
दरसन सूँ परसन नहीं, अज हूँ वैली तीर[2] ॥ ३४ ॥
(दादू) नाना भेष बनाइ करि, आपा देखि दिखाइ।
दादू दूजा दूरि करि, साहिब सूँ ल्यौ लाइ ॥ ३५ ॥
दादू देखा देखी लोक सब, केते आवैं जाहिं।
राम सनेही ना मिलै, जे निज देखै माहिं ॥ ३६ ॥
(दादू) सब देखैं अस्थूल कौं, यहु ऐसा आकार।
सूषिम सहज न सूझई, निराकार निरधार ॥ ३७ ॥
(दादू) बाहर का सब देखिये, भीतर लख्या न जाइ।
बाहरि दिखावा लोक का, भीतरि राम दिखाइ ॥ ३८ ॥
(दादू) यहु परख सराफी ऊपली[3], भीतरि की यहु नाहिं।
अंतरि की जानैं नहीं, ताथैं खोटा[4] खाहिं ॥ ३९ ॥
(दादू) झूठा राता झूठ सूँ, साचा राता साच।
एता अंध न जानही, कहँ कंचन कहँ काच ॥ ४० ॥

---

(१) भेषधारी स्वामी बने हुए जीवों के गले में कंठी की साँकर (संकल) डालकर और माया मन्त्र दे कर उन की सुध बुध का दबा देते हैं और आप बैठे माल चाभते हैं। (२) इस तरफ़। (३) ऊपरी। (४) धोखा।

(दादू) सचु बिन साईं ना मिलै, भावै भेष बनाइ।
भावै करवत उरध-मुखि[1], भावै तीरथ जाइ ॥ ४१ ॥
(दादू) साचा हरि का नाँव है, सो ले हिरदे राखि।
पाखँड परपँच दूरि करि, सब साधौं की साखि ॥ ४२ ॥
हिरदे की हरि लेइगा, अंतरजामी राइ।
साच पियारा राम कूँ, कोटिक करि दिखलाइ ॥ ४३ ॥
दादू मुख की ना गहै, हिरदे की हरि लेइ।
अंतरि सूधा एक सूँ, तौ बोल्याँ दोस न देइ ॥ ४४ ॥
सब चतुराई देखिये, जे कुछ कीजै आन।
मन गहि राखै एक सूँ, दादू साध सुजान ॥ ४५ ॥
सबद सुई सूरति धागा, काया कंथा[2] लाइ।
दादू जोगी जुगि जुगि पहिरै, कबहूँ फाटि न जाइ ॥ ४६ ॥
ज्ञान गुरू की गूदड़ी, सबद गुरू का भेष।
अतीत हमारी आतमा, दादू पंथ अलेष ॥ ४७ ॥
इसक अजब अबदाल[3] है, दरदवंद दरवेस।
दादू सिक्का सबर है, अकलि पीर उपदेस ॥ ४८ ॥
(दादू) सतगुर माला तन दिया, पवन सुरति सूँ पोइ।
बिन हाथों निस दिन जपै, परम जाप यूँ होइ ॥ ४९ ॥

॥ इति भेष को अंग समाप्त १४ ॥

———

(१) काशी करवत अर्थात उलटे लटके हुए आरे से सिर कटा देना। (२) गुदड़ी। (३) "अबदाल" शब्द के मानी फ़ारसी में फ़क़ीर या साधू के हैं और यहाँ खपते भी हैं परन्तु पं० चंद्रिका प्रसाद ने इसका अर्थ सिद्धि शक्ति और करामात लिखा है।

१५—साध को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं , नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा , प्रणामं पारंगतः ॥१॥
(दादू) निराकार मन सुरति सौं, प्रेम प्रीति सौं सेव ।
जे पूजै आकार कौं, तौ साधू परतषि देव ॥ २ ॥
(दादू) भोजन दीजै देह कौं, लीया मन बिसराम ।
साधू के मुख मेलिये , पाया आतम राम ॥ ३ ॥
ज्यौं यहु काया जीव की , त्यौं साईं के साध ।
दादू सब संतोखिये , माहैं आप अगाध ॥ ४ ॥

॥ सतसंग महिमा ॥

साधू जन संसार में , भव जल बोहिथ[1] अंग ।
दादू केते ऊधरे , जेते बैठे संग ॥ ५ ॥
साधू जन संसार में , सीतल चंदन बास ।
दादू केते ऊधरे , जे आये उन पास ॥ ६ ॥
साधू जन संसार में , हीरे जैसा होइ ।
दादू केते ऊधरे , संगति आये सोइ ॥ ७ ॥
साधू जन संसार में , पारस परगट गाइ ।
दादू केते ऊधरे , जेते परसे आइ ॥ ८ ॥
रूख बिरष बनराइ सब , चंदन पास होइ ।
दादू बास लगाइ करि , किये सुगंधे सोइ ॥ ९ ॥
जहाँ अरँड अरु आक थे , तहँ चंदन ऊग्या माहिं ।
दादू चंदन करि लिया , आक कहै को नाहिं ॥ १० ॥

---

(१) नाव ।

साध नदी जल राम रस, तहाँ पखालै अंग।
दादू निर्मल मल गया, साधू जन के संग॥ ११॥
साधू बरखै राम रस, अमृत बाणी आइ।
दादू दरसन देखताँ, त्रिबिधि ताप तन जाइ॥ १२॥
संसार बिचारा जात है, बहिया लहर तरंग।
भेरै[1] बैठा ऊबरै, सत साधू के संग॥ १३॥
दादू नेड़ा परम पद, साधू संगति माहिं।
दादू सहजैं पाइये, कबहूँ निर्फल नाहिं॥ १४॥
दादू नेड़ा परम पद, करि साधू का संग।
दादू सहजैं पाइये, तन मन लागै रंग॥ १५॥
दादू नेड़ा परम पद, साधू संगति होइ।
दादू सहजैं पाइये, स्याबत[2] सनमुख सोइ॥ १६॥
दादू नेड़ा परम पद, साधू जन के साथ।
दादू सहजैं पाइये, परम पदारथ हाथ॥ १७॥
साध मिलै तब ऊपजै, हिरदै हरि का भाव।
दादू संगति साध की, जब हरि करै पसाव[3]॥ १८॥
साध मिलै तब ऊपजै, हिरदै हरि का हेत।
दादू संगति साध की, कृपा करै तब देत॥ १९॥
साध मिलै तब ऊपजै, प्रेम भगति रुचि होइ।
दादू संगति साध की, दया करि देवै सोइ॥ २०॥
साध मिलै तब ऊपजै, हिरदै हरि की प्यास।
दादू संगति साध की, अविगत पुरवै आस॥ २१॥
साध मिलै तब हरि मिलै, तब सुख आनन्द मूर।
दादू सङ्गति साध की, राम रह्या भरपूर॥ २२॥

(१) बेड़ा, नाव। (२) साबित, स्थिर। (३) दात।

परम कथा उस एक की, दूजा नाहीं आन।
दादू तन मन लाइ करि, सदा सुरति रस पान ॥ २३ ॥
प्रेम कथा हरि की कहै, करै भगति ल्यौ लाइ।
पिवै पिलावै राम रस, सो जन मिलवो आइ ॥ २४ ॥
(दादू) पिवै पिलावै राम रस, प्रेम भगति गुण गाइ।
नित प्रति कथा हरि की करै, हेत सहित ल्यौ लाइ ॥ २५ ॥
आन कथा संसार की, हमहिं सुणावै आइ।
तिस का मुख दादू कहै, दई[1] न दिखाई ताहि ॥ २६ ॥
(दादू) मुख दिखलाई साध का, जे तुम हीं मिलवै आइ।
तुम माहीं अंतर करै, दई न दिखाई ताहि ॥ २७ ॥
जब दरवौ तब दीजियौ, तुम पैं मागौं येहु।
दिन प्रति दरसन साध का, प्रेम भगति दिढ़ देहु ॥ २८ ॥
साध सपीड़ा मन करै, सतगुरु सबद सुणाइ।
मीराँ[2] मेरा मिहरि करि, अंतर बिरह उपाइ[3] ॥ २९ ॥
ज्यौं ज्यौं होवै त्यौं कहै, घटि बधि[4] कहै न जाइ।
दादू सो सुध आतमा, साधू परसै आइ ॥ ३० ॥
साहिब सौं सनमुख रहै, सतसंगति में आइ।
दादू साधू सब कहैं, सो निरफल क्यूँ जाइ ॥ ३१ ॥
ब्रह्म गाइ[5] त्रय लोक में, साधू अस्थन[6] पान।
मुख मारग अमृत झरै, कत ढूँढै दादू आन ॥ ३२ ॥
दादू पाया प्रेम रस, साधू संगति माहिं।
फिर फिरि देखै लोक सब, यहु रस कतहूँ नाहिं ॥ ३३ ॥

---

(१) ईश्वर। (२) हे मेरे मालिक। (३) उपजा कर। (४) घटा बढ़ा कर। (५) गऊ। (६) थन।

(दादू) जिस रस कूँ मुनियर मरैं, सुर नर करैं कलाप[१] ।
सो रस सहजैं पाइये, साधू संगति आप ॥ ३४ ॥
संगति बिन सीझै नहीं, कोटि करै जे कोइ ।
दादू सतगुर साध बिन, कबहूँ सुद्ध न होइ ॥ ३५ ॥
दादू नेड़ा दूर थैं, अबिगत का आराध ।
मनसा बाचा कर्मना, दादू संगति साध ॥ ३६ ॥
सर्ग न सीतल होइ मन, चन्द न चन्दन पास ।
सीतल सङ्गति साध को, कीजै दादूदास ॥ ३७ ॥
दादू सीतल जल नहीं, हेम न सीतल होइ ।
दादू सीतल संत जन, राम सनेही सोइ ॥ ३८ ॥
दादू चन्दन कदि कह्या, अपणा प्रेम प्रकास ।
दह दिसि परगट है रह्या, सीतल गन्ध सुबास ॥ ३९ ॥
दादू पारस कदि कह्या, मुझ थी कंचन होइ ।
पारस परगट है रह्या, साच कहै सब कोइ ॥ ४० ॥
तन नहिं भूला मन नहिं भूला, पंच न भूला प्राण ।
साध सबद क्यूँ भूलिये, रे मन मूढ़ अजाण ॥ ४१ ॥
रतन पदारथ माणिक मोती, हीरों का दरिया ।
चिंतामणि चित राम धन, घट अमृत भरिया ॥ ४२ ॥
समरथ सूरा साध सो, मन मस्तक धरिया ।
दादू दरसन देखताँ, सब कारिज सरिया ॥ ४३ ॥
धरती अम्बर राति दिन, रबि ससि नावैं सीस ।
दादू बलि बलि वारणे, जे सुमिरैं जगदीस ॥ ४४ ॥
चंद सूर सिजदा करैं, नाँव अलह का लेइँ ।
दादू जिमीं असमान सब, उन पाँवों सिर देइँ ॥ ४५ ॥

---

(१) कल्पना, लालसा ।

जे जन राते राम सूँ, तिन की मैं बलि जाँउ।
दादू उन पर वारणे, जे लागि रहे हरि नाँउ ॥ ४६ ॥
जे जन हरि के रँग रँगे, सो रँग कदे न जाइ।
सदा सुरंगे संत जन, रँग में रहे समाइ ॥ ४७ ॥
दादू राता राम का, अबिनासी रँग माहिं।
सब जग धोवैं धोइ मरे, तौ भी खूटै[1] नाहिं ॥ ४८ ॥
साहिब किया सो क्यों मिटै, सुंदर सोभा रंग।
दादू धोवैं बावरे, दिन दिन होइ सुरङ्ग ॥ ४९ ॥
परमारथ कूँ सब किया, आप सवारथ नाहिं।
परमेसुर परमारथी, कै साधू कलि माहिं ॥ ५० ॥
पर उपगारी संत सब, आये यहि कलि माहिं।
पिवैं पिलावैं राम रस, आप सवारथ नाहिं ॥ ५१ ॥
पर उपगारी सन्त जन, साहिब जी तेरे।
जाती देखी आतमा, राम कहि टेरे ॥ ५२ ॥
चन्द सूर पावक पवन, पाणी का मत सार।
धरती अम्बर राति दिन, तरवर फलैं अपार ॥ ५३ ॥
छाजन भोजन परमारथी, आतम देव अधार।
साधू सेवग राम के, दादू पर उपगार ॥ ५४ ॥
जिस का तिस कूँ दीजिये, सुकिरति पर उपगार।
साधू सेवग सो भला, सिर नहिं लेवै भार ॥ ५५ ॥
परमारथ कूँ राखिये, कीजे पर उपगार।
दादू सेवग सो भला, निरञ्जन[2] निरकार[3] ॥ ५६ ॥
सेवा सुकिरति सब गया, मैं मेरा मन माहिं।
दादू आपा जब लगैं, साहिब मानै नाहिं ॥ ५७ ॥

(१) छूटै। (२) निर्माया। (३) निराकार, अरूप।

साध सिरोमणि सोधि ले, नदी पूरि परि आइ।
सजीवनि साम्हाँ चढ़ै, दूजा बहिया जाइ॥ ५८[1] ॥
जिन के मस्तक मणि[2] बसै, सो सकल सिरोमणि अंग।
जिन के मस्तक मणि नहीं, ते बिष भरे भवंग॥ ५९ ॥
दादू इस संसार में, ये द्वै रतन अमोल।
इक साईं अरु संत जन, इन का मोल न तोल॥ ६० ॥
दादू इस संसार में, ये द्वै रहे लुकाइ।
राम सनेही सन्त जन, औ बहुतेरा आइ॥ ६१ ॥
सगे हमारे साध हैं, सिर पर सिरजनहार।
दादू सतगुर सो सगा, दूजा धन्ध बिकार॥६२॥ (१-१४०)
जिन के हिरदे हरि बसै, सदा निरंतर नाँउ।
दादू साचे साध की, मैं बलिहारी जाउँ॥ ६३ ॥
साचा साध दयाल घट, साहिब का प्यारा।
राता माता राम रस, सो प्राण हमारा॥ ६४ ॥
(दादू) फिरता चाक कुम्हार का, यूँ दीसै संसार।
साधू जन निहचल भये, जिन के राम अधार॥ ६५ ॥
जलती बलती आतमा, साध सरोवर जाइ।
दादू पीवै राम रस, सुख में रहै समाइ॥ ६६ ॥
काँजी[3] माहैं मेलि[4] करि, पावै सब संसार।
करता केवल निर्मला, को साधू पीवणहार॥ ६७ ॥
(दादू) असाध मिलै अंतर पड़ै, भाव भगति रस जाइ।
साध मिलै सुख ऊपजै, आनन्द अङ्ग न माइ[5]॥ ६८ ॥

---

(१) जैसे जीती मछली नदी में उलटी धारा पर चढ़ती चली जाती है पर मरी मछली धारा के साथ बह जाती है ऐसे ही जीते जागते पुरुष अर्थात् साधजन भवसागर के प्रवाह के विरुद्ध चलते हैं और मुर्दा-दिल संसारी उसमें बह जाते हैं। (२) भक्ति रूपी रत्न। (३) रस या मट्ठे में राई आदि मसाला डाल कर एक तरह की पतली खटाई बनाते हैं। (४) मिलाना। (५) समाय।

(दादू) साधू संगति पाइये, राम अमी फल होइ।
संसारी सङ्गति पाइये, बिष फल देवै सोइ ॥ ६९ ॥
दादू सभा सन्त की, सुमती उपजै आइ।
साकत की सभा बैसताँ, ज्ञान काया थैं जाइ ॥ ७० ॥
(दादू) सब जग दीसै एकला, सेवग स्वामी दोइ।
जगत दुहागी राम बिन, साध सुहागी सोइ ॥ ७१ ॥
(दादू) साधू जन सुखिया भये, दुनियाँ कूँ बहु दंद[1]।
दुनी दुखी हम देखताँ, साधन सदा अनन्द ॥ ७२ ॥
दादू देखत हम सुखी, साईं के सङ्गि लागि।
यौं सो सुखिया होइगा, जा के पूरे भाग ॥ ७३ ॥
(दादू) मीठा पीवै राम रस, सो भी मीठा होइ।
सहजैं कड़वा मिटि गया, दादू निर्बिष सोइ ॥ ७४ ॥
(दादू) अंतरि एक अनन्त सूँ, सदा निरन्तर प्रीति।
जिहिं प्राणी प्रीतम बसै, सो बैठा त्रिभवन जोति ॥ ७५ ॥
(दादू) मैं दासी तिहँ दास की, जिहँ सङ्ग खेलै पीव।
बहुत भाँति करि वारणै, ता परि दीजै जीव ॥ ७६ ॥
(दादू) लीला राजा राम की, खेलैं सब ही सन्त।
आपा पर एकै भया, छूटी सबै भरंत ॥ ७७ ॥ (१३-१३१)
(दादू) आनन्द सदा अडोल सूँ, राम सनेही साध।
प्रेमी प्रीतम कूँ मिलै, यहु सुख अगम अगाध ॥ ७८ ॥
यहु घट दीपक साध का, ब्रह्म जोति परकास।
दादू पंखी सन्त जन, तहाँ परै निज दास ॥७९॥ (१२-११६)
घर बन माहैं राखिये, दीपक जोति जगाइ।
दादू प्राण पतङ्ग सब, जहँ दीपक तहँ जाइ ॥ ८० ॥

(१) द्वंद = झगड़े, बखेड़े।

घर बन माहैं राखिये, दीपक जलता होइ।
दादू प्राण पतंग सब, जाइ मिलैं सब कोइ॥ ८१॥
घर बन माहैं राखिये, दीपक प्रगट प्रकास।
दादू प्राण पतंग सब, आइ मिलैं उस पास॥ ८२॥
घर बन माहैं राखिये, दीपक जोति सहेत।
दादू प्राण पतंग सब, आइ मिलैं उस हेत॥ ८३॥
जिहि घट परगट राम है, सो घट तज्या न जाय।
नैनों माहैं राखिये, दादू आप नसाइ[1]॥ ८४॥
जिहि घटि दीपक राम का, तिहिं घट तिमर न होइ।
उस उजियारे जोति के, सब जग देखै सोइ॥ ८५॥
(४-१६६, १२-११२)

कबहुँ न बिहड़ै[2] सो भला, साधू दिढ़-मति होइ।
दादू हीरा एक रस, बाँधि गाँठड़ी सोइ॥ ८६॥
ग्रंथ[3] न बाँधै गाँठड़ी, नहिं नारी सूँ नेह।
मन इंद्री इस्थिर करै, छाडि सकल गुण देह॥ ८७॥
निराकार सूँ मिलि रहै, अखंड भगति करि लेह।
दादू क्यूँ कर पाइये, उन चरणों की खेह॥ ८८॥
साध सदा संजम रहै, मैला कदे न होइ।
दादू पंक[4] परसै नहीं, कर्म न लागै कोइ॥ ८९॥
साध सदा संजम रहै, मैला कदे न होइ।
सुन्नि सरोवर हंसला, दादू बिरला कोइ॥ ९०॥
साहिब का उनहार[5] सब, सेवग माहैं होइ।
दादू सेवग साध सो, दूजा नाहीं कोइ॥ ९१॥

---

(१) आपा को मेट कर। (२) बिछुड़ै, बदलै। (३) ग्रंथ के अर्थ गाँठ और धन माल के भी हैं। (४) कीचड़। (५) सदृश, रूप।

(दादू) जब लग नैन न देखिये, साध कहैं ते अंग ।
तब लग क्यूँ कर मानिये, साहिब का परसंग ॥ ९२ ॥

(दादू) सोइ जन साधू सिद्ध सो, सोई सकल सिर मौर ।
जिहिं के हिरदे हरि बसै, दूजा नाहीं और ॥ ९३ ॥

(दादू) औगुन छाड़ै गुण गहै, सोई सिरोमणि साध ।
गुण औगुण थैं रहित है, सो निज ब्रह्म अगाध ॥ ९४ ॥

(दादू) सींधव[1] फटक पषाण का, ऊपरि एकै रंग ।
पाणी माहैं देखिये, न्यारा न्यारा अंग ॥ ९५ ॥

(दादू) सींधव के आपा नहीं, नीर षीर[2] परसंग ।
आपा फटक पषाण के, मिलै न जल के संग ॥ ९६ ॥

(दादू) सब जग फटक पषाण है, साधू सींधव होइ ।
सींधव एकै ह्वै रह्या, पाणी पत्थर दोइ ॥ ९७ ॥

साधू जन उस देस का, को आया यहि संसार ।
दादू उस कूँ पूछिये, प्रीतम के समचार ॥ ९८ ॥

समाचार सत पीव के, को साध कहैगा आइ ।
दादू सीतल आतमा, सुख में रहै समाइ ॥ ९९ ॥

साध सबद सुख बरखि है, सीतल होइ सरीर ।
दादू अंतर आतमा, पीवै हरि जल नीर ॥ १०० ॥

दादू दत[3] दरबार का, को साधू बाँटै आइ ।
तहाँ राम रस पाइये, जहँ साधू तहँ जाइ ॥ १०१ ॥

(दादू) सुता[4] सनेही राम का, सो मुझ मिलवहु आणि ।
तिस आगैं हरि गुण कथूँ, सुनत न करई काणि[5] ॥ १०२ ॥

---

(१) सैन्धव=पहाड़ी नोन जिस को सेंधा नोन भी कहते हैं। (२) दूध। (३) दात, दान। (४) श्रोता। (५) कान=लाज, शर्म।

(दादू) सब ही मृतक समान हैं, जीया तब ही जाणि।
दादू छाँटा[1] अमी का, को साधू बाहै[2] आणि ॥ १०३ ॥
(प्रश्न) सबही मिर्त्तक ह्वै रहे, जीवैं कौन उपाइ।
(उत्तर) दादू अमृत राम रस, को साधू सींचै आइ ॥ १०४ ॥
(प्रश्न) सब ही मिर्त्तक माहिं हैं, क्यों करि जीवैं सोइ।
(उत्तर) दादू साधू प्रेम रस, आणि पिलावै कोइ ॥ १०५ ॥
(प्रश्न) सब ही मिर्त्तक देखिये, केहि बिधि जीवै जीव।
(उत्तर) साधू सुधा रस आणि करि, दादू बरिखै पीव ॥ १०६ ॥
हरि जल बरिखै बाहिरा, सूकै काया खेत।
दादू हरिया होइगा, सींचनहार सुचेत ॥ १०७[3] ॥
गंगा जमुना सरसुती, मिलैं जब सागर माहिं।
खारा पानी ह्वै गया, दादू मीठा नाहिं ॥ १०८ ॥
दादू राम न छाँड़िये, गहिला तजि संसार।
साधू संगति सोधि ले, कुसङ्गति सङ्ग निवार ॥ १०९ ॥
(दादू) कुसङ्गति सब परहरी, मात पिता कुल कोइ।
सजन सनेही बंधवा, भावै आपा होइ ॥ ११०[4] ॥
अज्ञान मूर्ख हितकारी, सज्जनो समो रिपुः।
ज्ञात्वा त्यजंति ते, निरामयी मनो जितः ॥ १११[5] ॥

---

(१) छींट। (२) डालै। (३) हरि जल अर्थात् अमी रूपी सदोपदेश की बाहरी वर्षा से काम न सरेगा सूखा हुआ खेत काया का जभी हरा होगा जब सींचने वाला (उपदेशक) पूरा सचेत हो जो उसका असर अन्तर में धसाने की समर्थता रखता हो। पं० चं० प्र० ने बाहिरा के अर्थ वायु सम्बन्धी लिखे हैं और सींचनहार के अर्थ साधक के जो समझ में नहीं आते। (४) साधू अपने समस्त कुटुम्ब को और आपे को त्याग देता है क्योंकि उन का साथ कुसंग है। (५) ज्ञानी पुरुष जो निष्कपट और मन को जीते हुए हैं अज्ञानी और मूरख मित्र और सज्जन शत्रु दोनों को एक सा समझ कर त्याग देते हैं।

कुसंगति केते गये, तिन का नाँव न ठाँव।
दादू ते क्यों ऊधरैं, साध नहीं जिस गाँव ॥ ११२ ॥
भाव भगति का भंग करि, बटपारे मारैं बाट।
दादू द्वारा मुकति का, खोले जड़ैं कपाट ॥ ११३ ॥

॥ सतसंग महात्म ॥

साध सँगति अंतर पड़े, तौ भागैगा किस ठौर।
प्रेम भगति भावै नहीं, यहु मन का मत और ॥ ११४ ॥
(दादू) राम मिलन के कारणे, जे तूँ खरा उदास।
साधू सङ्गति सोधि ले, राम उन्हौं के पास ॥ ११५ ॥
ब्रह्मा सङ्कर सेस मुनि, नारद ध्रू सुकदेव।
सकल साध दादू सही, जे लागे हरि सेव ॥ ११६ ॥
साध कँवल हरि बासना, सन्त भँवर सँग आइ।
दादू परिमल ले चले, मिले राम कूँ जाइ ॥ ११७ ॥
(दादू) सहजैं मेला होइगा, हम तुम हरि के दास।
अन्तर-गति तौ मिलि रहे, फुनि[1] परगट परकास ॥ ११८ ॥
आतम माहैं राम है, पूजा ता को होइ। (४-२६२)
सेवा बंदन आरती, साध करैं सब कोइ ॥ ११९ ॥
सन्त उतारैं आरती, तन मन मंगलचार। (४-१६६)
दादू बलि बलि वारने, तुम परि सिरजनहार ॥ १२० ॥
(दादू) मम सिर मोटे भाग, साधौं का दरसन किया।
कहा करै जम काल, राम रसायन भर पिया ॥ १२१ ॥
(दादू) एता अविगत आप थैं, साधौं का अधिकार।
चौरासी लख जीव का, तन मन फेरि सँवार ॥ १२२ ॥

---

(१) पुनि।

विष का अमृत करि लिया, पावक का पाणी।
बाँका सूधा करि लिया, सो साध बिनाणी[1] ॥ १२३ ॥
दादू ऊरा[2] पूरा करि लिया, खारा मीठा होइ।
फूटा सारा करि लिया, साध बमेकी[3] सोइ ॥ १२४ ॥
बंध्या मुक्ता करि लिया, उरझ्या सुरझि समान।
बैरी मीता करि लिया, दादू उत्तिम ज्ञान ॥ १२५ ॥
झूठा साचा करि लिया, काचा कंचन सार।
मैला निर्मल करि लिया, दादू ज्ञान बिचार ॥ १२६ ॥
काया कर्म लगाइ करि, तीरथ धोवै आइ।
तीरथ माहैं कीजिये, सो कैसे करि जाइ ॥ १२७ ॥
जहँ तिरिये तहँ डूबिये, मन में मैला पोइ।
जहँ छूटै तहँ बंधिये, कपट न सीझै कोइ ॥ १२८ ॥
दादू जब लग जीविये, सुमिरण संगति साध।
दादू साधू राम बिन, दूजा सब अपराध ॥ १२९ ॥

॥ इति साध को अंग समाप्त ॥ १५ ॥

१६—मधि[4] को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुरु देवतः।
वंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
(दादू) द्वैपष[5] रहिता सहज सो, सुख दुख एक समाण।
मरै न जीवै सहज सो, पूरा पद निर्बाण ॥ २ ॥
सहज रूप मन का भया, जब द्वै द्वै मिटी तरंग। (१०-५०)
ताता सीला सम भया, तब दादू एकै अंग ॥ ३ ॥

---

(१) बिज्ञानी। (२) कम। (३) बिबेकी। (४) मध्य। (५) पक्ष।

सुख दुख मन मानै नहीं, राम रंग राता।
दादू दून्यूँ छाड़ि सब, प्रेम रस माता ॥ ४ ॥
मति मोटी[1] उस साध की, द्वै पष रहत समान।
दादू आपा मेटि करि, सेवा करै सुजान ॥ ५ ॥
कछु न कहावै आप कौं, काहू संगि न जाइ।
दादू निर्पष ह्वै रहै, साहिब सौं ल्यौ लाइ ॥ ६ ॥
सुख दुख मन मानै नहीं, आपा पर सम भाइ।
सो मन मन करि सेविये, सब पूरण ल्यौ लाइ ॥ ७ ॥
ना हम छाड़ैं ना गहैं, ऐसा ज्ञान बिचार।
मद्धि भाइ[2] सेवैं सदा, दादू मुकति दुवार ॥ ८ ॥
सहज सुन्नि मन राखिये, इन दून्यूँ के माहिं। (७-६)
लै समाधि रस पीजिये, तहाँ काल भय नाहिं ॥ ९ ॥
आपा मेटै मृत्तिका[3], आपा धरै अकास।
दादू जहँ जहँ द्वै नहीं, मद्धि निरंतर बास ॥ १० ॥
नहीं मृतक नहिं जीवता, नहिं आवै नहिं जाइ। (६-२२)
नहिं सूता नहिं जागता, नहिं भूखा नहिं खाइ ॥ ११ ॥
दादू इस आकार थैं, दूजा सूषिम लोक।
ता थैं आगैं और है, तहवाँ हरषि न सोक ॥ १२ ॥
(दादू) हद्द छाड़ि बेहद्द में, निर्भय निर्पष होइ।
लागि रहै उस एक सौं, जहाँ न दूजा कोइ ॥ १३ ॥
(दादू) दूजै अंतर होत है, जिनि आणै मन माहिं। (८-६३)
तहँ ले मन को राखिये, जहँ कुछ दूजा नाहिं ॥ १४ ॥

(१) बड़ी, श्रेष्ठ। (२) मध्य भाव। (३) मृत्तिका = मिट्टी, अर्थात मिट्टी की बनी हुई देह।

निराधार घर कीजिये, जहँ नहिं धरणि अकास ।
दादू निहचल मन रहै, निर्गुण के बेसास ॥ १५ ॥
मन चित मनसा आतमा, सहज सुरति ता माहिं । (४-२६६)
दादू पंचूँ पूरि ले, जहँ धरती अंबर नाहिं ॥ १६ ॥
अधर चाल कबीर की, आसंघी[1] नहिं जाइ ।
दादू डाकै मिरग ज्यूँ, उलटि पड़ै भुइँ आइ ॥ १७ ॥
दादू रहणि कबीर की, कठिन बिषम यहु चाल ।
अधर एक सौं मिलि रह्या, जहाँ न झंपै[2] काल ॥ १८ ॥
निराधार निज भगति करि, निराधार निज सार ।
निराधार निज नाँव ले, निराधार निरकार ॥ १९ ॥
निराधार निज राम रस, को साधू पीवणहार ।
निराधार निर्मल रहै, दादू ज्ञान बिचार ॥ २० ॥
जब निराधार मन रहि गया, आतम के आनन्द ।
दादू पीवै राम रस, भेटै परमानन्द ॥ २१ ॥
दुहु बिच राम अकेला आपै, आवण जाण न देई ।
जहँ के तहँ सब राखे दादू, पारि पहूँते[3] सेई ॥ २२ ॥
चलु दादू तहँ जाइये, जहँ मरै न जीवै कोइ ।
आवागवन भय को नहीं, सदा एक रस होइ ॥ २३ ॥
चलु दादू तहँ जाइये, जहँ चंद सूर नहिं जाइ ।
राति दिवस का गम नहीं, सहजैं रह्या समाइ ॥ २४ ॥
चलु दादू तहँ जाइये, माया मोह थैं दूरि ।
सुख दुख को ब्यापै नहीं, अबिनासी घर पूरि ॥ २५ ॥
चलु दादू तहँ जाइये, जहँ जम जोरा को नाहिं ।
काल मीच लागै नहीं, मिलि रहिये ता माहिं ॥ २६ ॥

(१) निरंतर, बेरोक, सुगम । (२) देखै । (३) पहुँचता है ।

एक देस हम देखिया, तहँ रुत[1] नहिं पलटै कोइ।
हम दादू उस देस के, जहँ सदा एक रस होइ॥ २७॥
एक देस हम देखिया, जहँ बस्ती ऊजड़ नाहिं।
हम दादू उस देस के, सहज रूप ता माहिं॥ २८॥
एक देस हम देखिया, नहिं नेड़े नहिं दूरि।
हम दादू उस देस के, रहे निरंजन पूरि॥ २९॥
एक देस हम देखिया, जहँ निस दिन नाहीं घाम।
हम दादू उस देस के, जहँ निकट निरंजन राम॥ ३०॥
बारह मासी नीपजै, तहाँ किया परवेस।
दादू सूका ना पड़ै, हम आये उस देस॥ ३१॥
जहँ बेद कुरान का गमि नहीं, तहाँ किया परवेस।
तहँ कुछ अचिरज देखिया, यहु कुछ औरै देस॥ ३२॥
ना घरि रह्या न बनि गया, ना कुछ किया कलेस। (१-७४)
दादू मन हीं मन मिल्या, सतगुर के उपदेस॥ ३३॥
काहे दादू घरि रहै, काहे बन खँडि जाइ।
घर बन रहिता राम है, ता ही सौं ल्यौ लाइ॥ ३४॥
(दादू) जिनि प्राणी करि जाणिया, घर बन एक समान।
घर माहैं बन ज्यौं रहै, सोई साध सुजान॥ ३५॥
सब जग माहैं एकला, देह निरन्तर बास।
दादू कारणि राम के, घर बन माहिं उदास॥ ३६॥
घर बन माहैं सुख नहीं, सुख है साईं पास।
दादू ता सौं मन मिल्या, इन थैं भया उदास॥ ३७॥

---

(१) ऋतु।

ना घरि भला न बन भला , जहाँ नहीं निज नाँव । (२-७८)
दादू उनमान मन रहै , भला त सोई ठाँव ॥ ३८ ॥
बैरागी बन में बसै , घरबारी घर माहिं ।
राम निराला रहि गया , दादू इन में नाहिं ॥ ३९ ॥
दीन दुनी सदिकै करूँ , टुक देखण दे दीदार । (३-४०)
तन मन भी छिन छिन करूँ, भिस्त दोजग भी वार ॥ ४० ॥
दादू जीवण मरण का , मुझ पछितावा नाहिं ।
मुझ पछितावा पीव का , रह्या न नैनहुँ माहिं ॥ ४१ ॥
सुरग नरक संसय नहीं , जीवण मरण भय नाहिं ।
राम बिमुख जे दिन गये , सो सालैं मन माहिं ॥ ४२ ॥
सुरग नरक सुख दुख तजे, जीवण मरण नसाइ ।
दादू लोभी राम का , को आवै को जाइ ॥ ४३ ॥

॥ संत मत की महिमा ॥

(दादू) हिन्दू तुरक न होइबा , साहिब सेती काम ।
षट दरसन[1] के संग न जाइबा, निर्पष[2] कहिबा राम ॥४४॥
षट दरसन दून्यूँ नहीं , निरालंब निज बाट ।
दादू एकै आसिरे , लंघै औघट घाट ॥ ४५ ॥
(दादू) ना हम हिन्दू होहिंगे, ना हम मूसलमान ।
षट दरसन में हम नहीं , हम राते रहिमान ॥ ४६ ॥
जोगी जंगम सेवड़े , बोध सन्यासी सेख । (१४-३२)
षट दरसन दादू राम बिन, सबै कपट के भेख ॥ ४७ ॥
दादू अलह राम का , द्वै पष थैं न्यारा ।
रहिता गुन आकार का , सो गुरू हमारा ॥ ४८ ॥

---

(१) छह शास्त्र अर्थात् साँख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, वेदांत ।
(२) निर्पच्छ ।

(दादू) मेरा तेरा बावरे, मैं तैं की तजि बाणि[1]।
जिन यहु सब कुछ सिरजिया, करि ताही का जाणि ॥ ४९ ॥
(दादू) करणी हिंदू तुरक की, अपणी अपणी ठौर।
दुहँ बिच मारग साध का, यहु संतौं की रह और ॥ ५० ॥
दादू हिन्दू तुरक का, द्वै पष पंथ निवारि।
संगति साचे साध की, साईं कौं संभारि ॥ ५१ ॥
(दादू) हिन्दू लागे देहुरै[2], मूसलमान मसीति[3]।
हम लागे इक अलेष सौं, सदा निरंतर प्रीति ॥ ५२ ॥
न तहाँ हिन्दू देहुरा, न तहाँ तुरक मसीति।
दादू आपै आप है, नहीं तहाँ रह रीति ॥ ५३ ॥
यहु मसीति यहु देहुरा, सतगुर दिया दिखाइ। (१-७५)
भीतरि सेवा बंदगी, बाहरि काहे जाइ ॥ ५४ ॥
दून्यूँ हाथी ह्वै रहे, मिलि रस पिया न जाइ।
दादू आपा मेटि करि, दून्यूँ रहे समाइ ॥ ५५ ॥
भय भीत भयानक ह्वै रहे, देख्या निर्पष अंग।
दादू एकै ले रह्या, दूजा चढ़ै न रंग ॥ ५६[4] ॥
जानै बूझै साच है, सब को देखण धाइ।
चाल नहीं संसार को, दादू गह्या न जाइ ॥ ५७[4] ॥
(दादू) पष काहू के ना मिलै, निर्पष निर्मल नाँव।
साईं सौं सनमुख सदा, मुकता सब ही ठाँव ॥ ५८ ॥

---

(१) आदत। (२) देवल। (३) मसजिद। (४) नं० ५६ व ५७ साखियों का यह अभिप्राय है कि सन्त मत का निर्पच्छ अंग देख कर सब रोब मानते और थर्राते हैं— सब देखने को तो दौड़ते हैं और उस की सचाई का भी निश्चय होता है परन्तु लोक रीति की टेक बस उस को धारण नहीं करते।

(दादू) जब थैं हम निर्पष भये, सबै रिसाने लोक ।
सतगुरु के परसाद थैं, मेरे हरष न सोक ॥ ५९ ॥
निर्पष ह्वै करि पष गहै, नरक पड़ैगा सोइ ।
हम निर्पष लागे नाँव सौं, कर्ता करै सो होइ ॥ ६० ॥
(दादू) पष काहू के ना मिलै, निहकामी निर्पष साध ।
एक भरोसे राम के, खेलै खेल अगाध ॥ ६१ ॥
दादू पषा पषी संसार सब, निर्पष बिरला कोइ ।
सोई निर्पष होइगा, जाके नाँव निरंजन होइ ॥ ६२ ॥
अपने अपने पंथ की, सब को कहै बढ़ाइ ।
ता थैं दादू एक सौं, अंतरगति ल्यौ लाइ ॥ ६३ ॥
दादू द्वै पष दूरि करि, निर्पष निर्मल नाँव ।
आपा मेटै हरि भजै, ता की मैं बलि जाँव ॥ ६४ ॥
दादू तजि संसार सब, रहै निराला होइ ।
अबिनासी के आसरे, काल न लागै कोइ ॥ ६५ ॥
कलिजुग कूकर कलिमुहाँ, उठि उठि लागै धाइ ।
दादू क्यों करि छूटिये, कलिजुग बड़ी बलाइ ॥ ६६ ॥
काला मुँह संसार का, नीले कीये पाँव ।
दादू तीनि तलाक[1] दे, भावै तीधर जाव ॥ ६७ ॥
दादू भाव हीन जे पिरथमी, दया बिहूणा देस ।
भगति नहीं भगवंत की, तहँ कैसा परवेस ॥ ६८ ॥
जे बोलै तौ चुप कहैं, चुप तौ कहैं पुकार ।
दादू क्योंकरि छूटिये, ऐसा है संसार ॥ ६९ ॥

---

(१) तिलांजुली दे ।

न जाणौं हाँजी चुप्प गहि , मेटि अग्नि की झाल[1] ।
सदा सजीवन सुमिरिये , दादू बंचै काल ॥ ७० ॥
पंथि चलैं ते प्राणिया , तेता कुल ब्यौहार ।
निर्पष साधू सो सही , जिन कै एक अधार ॥ ७१ ॥
दादू पंथौं परि गये , बपुरे बारह बाट ।
इन के संगि न जाइये , उलटा अविगत घाट ॥ ७२ ॥
(दादू) जागे कौं आया कहैं, सूते कौं कहैं जाइ ।
आवण जाणा झूठ है , जहँ का तहाँ समाइ ॥ ७३ ॥

॥ इति मधि को अंग समाप्त ॥ १६ ॥

१७—इति सारग्राही को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं , नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा , प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
दादू साधू गुण गहै , औगुण तजै बिकार ।
मान सरोवर हंस ज्यूँ , छाडि नीर गहि सार ॥ २ ॥
हंस गियानी सो भला , अंतरि राखै एक ।
बिष में अमृत काढ़ि ले , दादू बड़ा बमेक[2] ॥ ३ ॥
पहिली न्यारा मन करै , पीछै सहज सरीर ।
दादू हंस बिचार सौं , न्यारा कीया नीर ॥ ४ ॥
आपै आप प्रकासिया , निर्मल ज्ञान अनंत ।
षीर नीर न्यारा किया , दादू भजि भगवंत ॥ ५ ॥

---

(१) संसारी झगड़ों की तपन से बचने के लिये भर सक तो मौन गहै, या कह दे कि मैं नहीं जानता, या हाँ में हाँ मिला कर अपनी जान छुड़ावै ।
(२) बिबेक ।

षीर नीर का संत जन, न्याव नवेरै आइ।
दादू साधू हंस बिन, भेल सभेलै[1] जाइ॥ ६॥
(दादू) मन हंसा मोती चुणै, कंकर दीया डारि।
सतगुर कहि समझाइया, पाया भेद बिचारि॥ ७॥
दादू हंस मोती चुणै, मानसरोवर जाइ।
बगुला छीलरि[2] बापुड़ा, चुणि चुणि मछली खाइ॥ ८॥
दादू हंस मोती चुगै, मानसरोवर न्हाइ।
फिर फिरि बैसै बापुड़ा, काग करंकाँ[3] आइ॥ ६॥
दादू हंस परेखिये, उत्तिम करणी चाल।
बगुला बैसै ध्यान धरि, परतषि कहिये काल॥ १०॥
उज्जल करणी हंस है, मैली करणी काग।
मद्धिम करणी छाडि सब, दादू उत्तिम भाग॥ ११॥
(दादू) निर्मल करणो साध की, मैली सब संसार।
मैली मद्धिम ह्वै गये, निरमल सिरजनहार॥ १२॥
(दादू) करणी ऊपरि जाति है, दूजा सोच निवार।
मैली मद्धिम ह्वै गये, उज्जल ऊँच बिचार॥ १३॥
उज्जल करणी राम है, दादू दूजा धन्ध।
का कहिये समझै नहीं, चारौं लोचन[4] अंध॥ १४॥
(दादू) गऊबच्छ का ज्ञान गहि, दूध रहै ल्यौ लाइ।
सींग पूँछ पग परिहरै, अस्थन लागै धाइ॥ १५॥

---

(१) मिला मिलाया, बिना सफाई हुए। (२) तलैया। (३) कौवे की तरह सूखी चमड़ी अर्थात् असार भोगों में लगा रहता है। (४) चारों लोचन अर्थात् दो बाहरी आँख जो चेहरे पर दिखती हैं, एक अंतरी चच्छु जिसको शिव-नेत्र या तीसरा-तिल कहते हैं और चौथा उस के ऊपर अंतरी चच्छु सहसदल कँवल के स्थान का जिस के खुलने पर ज्योति निरंजन का दर्शन होता है। पंडित चंद्रिकाप्रसाद का लेख कि तीसरे और चौथे चच्छु श्रुति और स्मृति हैं संतमत के विरुद्ध है।

(दादू) काम गाइ के दूध सूँ, हाड़ चाम सूँ नाहिं।
इहि बिधि अमृत पीजिये, साधू के मुख माहिं॥ १६ ॥
(दादू) काम धणी के नाँव सूँ, लोगन सूँ कुछ नाहिं।
लोगन सूँ मन ऊपली[1], मन की मन हीं माहिं॥ १७ ॥
जा के हिरदै जैसी होइगी, सो तैसी ले जाइ।
दादू तूँ निर्दोष रहु, नाँव निरन्तर गाइ॥ १८ ॥
(दादू) साध सबै करि देखणाँ, असाध न दीसै कोइ।
जिहिं के हिरदै हरि नहीं, तिहिं तन टोटा[2] होइ॥ १६ ॥
साधू संगति पाइये, तब द्वंदर[3] दूरि नसाइ।
दादू बोहिथ[4] बैसि करि, डूंडै[5] निकट न जाइ॥ २० ॥
जब परम पदारथ पाइये, तब कंकर दीया डारि।
दादू साचा सों मिले, तब कूड़ा काच निवारि॥ २१ ॥
जब जीवन मूरी[6] पाइये, तब मरिबा कौण बिसाहि[7]।
दादू अमृत छाड़ि करि, कौण हलाहल खाहि॥ २२ ॥
जब मान सरोवर पाइये, तब छीलर कूँ छिटकाइ।
दादू हंसा हरि मिले, तब कागा गये बिलाइ॥ २३ ॥
जहँ दिनकर तहँ निस नहीं, निस तहँ दिनकर नाहिं।
दादू एकै द्वै नहीं, साधन के मत माहिं॥ २४ ॥
(दादू) एकै घोड़े चढ़ि चलै, दूजा कोतिल[8] होइ।
दुहँ घोड़ौं चढ़ि बैसताँ, पारि न पहुँता कोइ॥ २५ ॥

॥ इति सारग्राही को अंग समाप्त १७ ॥

---

(१) ऊपरी। (२) घाटा। (३) द्वंद्व=दुई। (४) बड़ी नाव। (५) डोंगी या छोटी नाव। (६) मूल। (७) मोल ले। (८) कोतल=बिना सवारी के। भाव यह कि परमारथ की मुख्यता रक्खे हुए स्वारथ भी करते रहो यदि दोनों में एक सा बरतोगे तो पार नहीं होगे।

१८—बिचार को अंग

(दा) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर वतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥१॥
(दादू) जल में गगन गगन में जल है, फुनि वै गगन निरालं।
ब्रह्म जीव इहिं बिधि रहै, ऐसा भेद बिचारं ॥ २ ॥
ज्यूँ दरपन में मुख देखिये, पानी में प्रतिब्यंब।
ऐसे आतम राम है, दादू सबही संग ॥ ३ ॥
जब दरपन माहैं देखिये, तब अपना सूझै आप।
दरपन बिन सूझै नहीं, दादू पुन्य रु[1] पाप ॥ ४ ॥
जीयें[2] तेल तिलन्नि में, जीयें गंध फुलन्नि।
जीयें माखण षीर में, ईयें[3] रब[4] रूहन्नि[5] ॥ ५ ॥
ईयें रब रूहन्नि में, जीयें रूह रगन्नि[6]।
जीयें जेरौ[7] सूर में, ठंढो चंद्र बसन्नि[8] ॥ ६ ॥
(दादू) जिन यह दिल मंदिर किया, दिल मंदिर में सोइ।
दिल माहैं दिलदार है, और न दूजा कोइ ॥ ७ ॥
मीत तुम्हारा तुम्ह कनैं, तुम हीं लेहु पिछाणि।
दादू दूरि न देखिये, प्रतिब्यंब ज्यूँ जाणि ॥ ८ ॥
प्रश्न—(दादू) नाल कँवल जल ऊपजै, क्यूँ जुदा जल माहिं।
उत्तर—चन्दहिं हित चित प्रीतड़ी, यूँ जल सेती नाहिं[9] ॥६॥
दादू एक बिचार सूँ, सब थैं न्यारा होइ।
माहैं है पर मन नहीं, सहज निरंजन सोइ ॥ १० ॥

---

(१) रु = और। (२) जैसे। (३) ऐसे। (४) मालिक। (५) सुरतों में। (६) नाड़ियों में। (७) प्रकाश। (८) रहती है। (९) कुमोदनी की प्रीत जल से नहीं है, बलिक चंद्रमा से है इस लिये वह जल से अलग रहती है।

प्रश्न--(दादू) गुण निर्गुण मन मिलि रह्या, क्यूँ बेगर[1] ह्वै जाइ।
उत्तर--जहँ मन नाहीं सो नहीं, जहँ मन चेतन सो आहि ॥११॥
दादू सब ही ब्याधि की, औषधि एक बिचार।
समझै थैं सुख पाइये, कोइ कुछ कहौ गँवार ॥ १२ ॥
(दादू) इक निर्गुण इक गुण मई, सब घटि ये द्वै ज्ञान।
काया का माया मिलै, आतम ब्रह्म समान ॥ १३ ॥
(दादू) कोटि अचारी एक बिचारी, तऊ न सरभरि[2] होइ।
आचारी सब जग भर्‌या, बिचारी बिरला कोइ ॥ १४ ॥
(दादू) घट में सुख आनन्द है, तब सब ठाहर होइ।
घट में सुख आनन्द बिन, सुखी न देख्या कोइ ॥ १५ ॥
काया लोक अनन्त सब, घट में भारी भीर।
जहाँ जाइ तहँ संग सब, दरिया पैली तीर[3] ॥ १६ ॥
काया माया ह्वै रही, जोधा बहु बलवंत।
दादू दुस्तर क्यूँ तिरै, काया लोक अनन्त ॥ १७ ॥
मोटी माया तजि गये, सूषिम लीयें जाइ।
दादू को छूटै नहीं, माया बड़ी बलाइ ॥ १८ ॥
दादू सूषिम माहिं ले, तिन का कीजै त्याग।
सब तजि राता राम सौं, दादू यहु बैराग ॥ १९ ॥
गुणातीत सो दरसनी, आपा धरै उठाइ।
दादू निर्गुण राम गहि, डोरी लागा जाइ ॥ २० ॥
प्यंड मुक्ति सब को करै, प्राण मुक्ति नहिं होइ।
प्राण मुक्ति सतगुर करै, दादू बिरला कोइ ॥ २१ ॥

---

(१) बेगाना, बेग़रज़। (२) सरवरि=बराबरी। (३) पैली तीर=दूसरी तरफ़ या किनारे पर ; उस पार।

प्रश्न—(दादू) षुध्या त्रिषा क्यूँ भूलिये, सीत तपति क्यूँ जाइ ।
क्यूँ सब छूटै देह गुण, सतगुरु कहि समझाइ ॥ २२ ॥
उत्तर—माहीं थैं मन काढ़ि करि, ले राखै निज ठौर ।
दादू भूलै देह गुण, बिसरि जाइ सब और ॥ २३ ॥
नाँव भुलावे देह गुण, जीव दसा सब जाइ ।
दादू छाड़ै नाँव कूँ, तौ फिरि लागै आइ ॥ २४ ॥
(दादू) दिन दिन राता राम सूँ, दिन दिन अधिक सनेह ।
दिन दिन पीवै राम रस, दिन दिन दर्पण देह ॥ २५ ॥
(दादू) दिन दिन भूलै देह गुण, दिन दिन इंद्री नास ।
दिन दिन मन मनसा मरै, दिन दिन होइ प्रकास ॥ २६ ॥
देह रहै संसार में, जीव राम के पास ।
दादू कुछ ब्यापै नहीं, काल झाल दुख त्रास ॥ २७ ॥
काया की संगति तजै, बैठा हरि पद माहिं ।
दादू निर्भय ह्वै रहै, कोइ गुण ब्यापै नाहिं ॥ २८ ॥
काया माहैं भय घणा, सब गुण ब्यापैं आइ ।
दादू निर्भय घर किया, रहे नूर में जाइ ॥ २९ ॥
खड़ग धार बिष ना मरै, कोइ गुण ब्यापै नाहिं ।
राम रहै त्यूँ जन रहै, काल झाल जल माहिं ॥ ३० ॥
सहज बिचार सुख में रहै, दादू बड़ा बमेक[1] ।
मन इंद्री पसरैं नहीं, अंतरि राखै एक ॥ ३१ ॥
मन इंद्री पसरैं नहीं, अहि निसि एकै ध्यान ।
पर उपगारी प्राणिया, दादू उत्तिम ज्ञान ॥ ३२ ॥
(दादू) आपा उरझैं उरझिया, दीसै सब संसार । (१-१३२)
आपा सुरझैं सुरझिया, यहु गुर ज्ञान बिचार ॥ ३३ ॥

(१) बिबेक ।

(दादू) मैं नाहीं तब नाँव क्या, कहा कहावै आप।
साधौ कहौ बिचारि करि, मेटहु तन की ताप ॥ ३४ ॥
जब समझ्या तब सुरझिया, उलटि समाना सोइ।
कछू कहावै जब लगैं, तब लगि समझ न होइ ॥ ३५ ॥
जब समझ्या तब सुरझिया, गुरमुखि ज्ञान अलेख।
उर्ध कँवल में आरसी, फिरि करि आपा देख ॥ ३६ ॥
प्रेम भगति दिन दिन बधै[1], सोई ज्ञान बिचार।
दादू आतम सोधि करि, मथि करि काढ़्या सार ॥ ३७ ॥
(दादू) जिहि बिरियाँ यहु सब कुछ भया, सो कुछ करौ बिचार।
काजी पंडित बावरे, क्या लिखि बंधे भार ॥ ३८ ॥
(दादू) जब यहु मन हीं मन मिल्या, तब कुछ पाया भेद।
दादू ले करि लाइये, क्या पढ़ि मरिये बेद ॥ ३९ ॥
पाणी पावक पावक पाणी, जाणै नहीं अजाण।
आदि अंत बिचारि करि, दादू जाण सुजाण ॥ ४० ॥
सुख माहैं दुख बहुत है, दुख माहैं सुख होइ।
दादू देखि बिचारि करि, आदि अंत फल दोइ ॥ ४१ ॥
मीठा खारा खारा मीठा, जाणै नहीं गँवार।
आदि अंत गुण देखि करि, दादू किया बिचार ॥ ४२ ॥
कोमल कठिन कठिन है कोमल, मूरिख मर्म न बूझै।
आदि अंत बिचारि करि, दादू सब कुछ सूझै ॥ ४३ ॥
पहिली प्राण[2] बिचारि करि, पीछै पग दीजै।
आदि अंत गुण देखि करि, दादू कुछ कीजै ॥ ४४ ॥

---

(१) बढ़ै। (२) स्वासा।

पहिली प्राण बिचारि करि, पीछै चलिये साथ।
आदि अंत गुण देखि करि, दादू घाली हाथ ॥ ४५ ।
पहिली प्राण बिचारि करि, पीछै कुछ कहिये।
आदि अंत गुण देखि करि, दादू निज गहिये ॥ ४६ ॥
पहिली प्राण बिचारि करि, पीछै आवै जाइ।
आदि अंत गुण देख करि, दादू रहै समाइ ॥ ४७ ॥
(दादू) सोचि करै सो सूरमा, करि सोचै सो कूर।
करि सोच्याँ मुख स्याम है, सोच कर्‌याँ मुख नूर ॥ ४८ ॥
जो मति पीछैं ऊपजै, सो मति पहिली होइ।
कबहुँ न होवै जी दुखी, दादू सुखिया सोइ ॥ ४९ ॥
आदि अंत गाहन किया, माया ब्रह्म बिचार।
जहाँ का तहाँ ले धर्‌या, दादू देत न बार ॥ ५० ॥

॥ इति बिचार को अंग समाप्त ॥ १८ ॥

१९—बेसास[1] को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
(दादू) सहजैं सहजैं होइगा, जे कुछ रचिया राम।
काहे कौं कलपै मरै, दुखी होत बेकाम ॥ २ ॥
साईं किया सो है रह्या, जे कुछ करै सो होइ।
करता करै सो होत है, काहे कलपै कोइ ॥ ३ ॥
(दा कहै) जे तें किया सो है रहा, जे तूँ करै सो होइ।
करण करावण एक तू, दूजा नाहीं कोइ ॥ ४ ॥

(१) बिश्वास।

(दादू) सोई हमारा साइयाँ, जे सब का पूरणहार ।
दादू जीवण मरण का, जा के हाथ विचार ॥ ५ ॥
(दादू) सर्ग भवन पाताल मधि, आदि अंत सब सिष्ट ।
सिरजि सबन कौं देत है, सोई हमारा इष्ट ॥ ६ ॥
(दादू) करणहार करता पुरिष, हम कौं कैसी चिंत ।
सब काहू की करत है, सो दादू का मिंत ॥ ७ ॥
(दादू) मनसा बाचा कर्मणा, साहिब का बेसास ।
सेवग सिरजनहार का, करै कौन की आस ॥ ८ ॥
स्रम[1] न आवै जीव कूँ, अणकीया सब होइ ।
दादू मारग मिहर का, बिरला बूझै कोइ ॥ ९ ॥
(दादू) उद्दिम औगुण को नहीं, जे करि जाणै कोइ ।
उद्दिम में आनन्द है, जे साईं सेती होइ ॥ १० ॥
(दादू) पूरणहारा पूरसी, जो चित रहसी ठाम ।
अंतर थैं हरि उमँगसी, सकल निरंतर राम ॥ ११ ॥
पूरिक पूरा पासि है, नाहीं दूरि गँवार ।
सब जानत है बावरे, देवे कूँ हुसियार ॥ १२ ॥
दादू च्यंता राम कूँ, समरथ सब जाणै ।
दादू राम सँभालिये, च्यंता जिनि आणै ॥ १३ ॥
(दादू) च्यंता कीयाँ कुछ नहीं, च्यंता जिव कूँ खाइ ।
हूणा था सो ह्वै रह्या, जाणा है सो जाइ ॥ १४ ॥
(दादू) जिन पहुँचाया प्राण कूँ, उदर उर्धमुख षीर ।
जठर अगनि में राखिया, कोमल काया सरीर ॥ १५ ॥

---

(१) श्रम, परिश्रम ।

सो समरथ संगी सँगि रहै, बिकट घाट घट भीर।
सो साईं सूँ गहगही[१], जिनि भूलै मन बीर ॥ १६ ॥
गोबिंद के गुण चीत करि, नैन बैन पग सीस।
जिन मुख दीया कान कर, प्राणनाथ जगदीस ॥ १७ ॥
तन मन सौंज सँवारि सब, राखै बिसवा बीस।
सो साहिब सुमिरै नहीं, दादू भानि हदीस[२] ॥ १८ ॥
(दादू) सो साहिब जिनि बीसरै, जिन घट दीया जीव।
गर्भ बास में राखिया, पालै पोखै पीव। १६ ॥
दादू राजिक[३] रिजक[४] लीये खड़ा, देवै हाथौं हाथ।
पूरिक पूरा पासि है, सदा हमारे साथ ॥ २० ॥
हिरदय राम सँभालि ले, मन राखै बेसास।
दादू समरथ साइयाँ, सब की पूरै आस ॥ २१ ॥
दादू साईं सबन कूँ, सेवग ह्वै सुख देइ।
अया मूढ़ मति[५] जीव की, तौ भी नाँव न लेइ ॥ २२ ॥
(दादू) सिरजनहारा सबन का, ऐसा है समरत्थ।
सोई सेवग ह्वै रह्या, जहँ सकल पसारै हत्थ ॥ २३ ॥
धनि धनि साहिब तू बड़ा, कौन अनूपम रीति।
सकल लोक सिर साइयाँ, ह्वै करि रह्या अतीत[६] ॥ २४ ॥
(दादू) हूँ बलिहारी सुरत की, सब की करै सँभाल।
कीड़ी कुंजर पलक में, करता है प्रतिपाल ॥ २५ ।
(दादू) छाजन[७] भोजन सहज में, सइयाँ देइ सो लेइ।
ता थें अधिका और कुछ, सो तूँ काँइ करेइ[८] ॥ २६ ॥

---

(१) पकड़, लगन। (२) पैग़म्बर के बचन को तोड़ कर यानी निरादर कर के। (३) रोज़ी देने वाला। (४) रोज़ी। (५) बकरा जैसी जड़ बुद्धि। (६) जो पार हो गया है। (७) छाया, घर। ८) क्या करेगा।

दादू टूका सहज का, संतोषी जन खाइ।
मिरतक भोजन गुरमुखी, काहे कलपै जाइ॥ २७॥
दादू भाड़ा[1] देह का, तेता सहजि बिचारि।
जेता हरि बिच अंतरा, तेता सबै निवारि॥ २८[2]॥
दादू जल दल राम का, हम लेवैं परसाद।
संसार का समझै नहीं, अबिगत भाव अगाध॥ २९॥
परमेसुर के भाव का, एक कणुका[3] खाइ।
दादू जेता पाप था, भरम करम सब जाइ॥ ३०॥
(दादू) कौण पकावै कौण पीसै, जहाँ तहाँ सीधा ही दीसै॥ ३१॥
(दादू) जे कुछ खुसी खुदाइ की, होवैगा सोई।
पचि पचि कोई जिनि मरै, सुणि लीज्यौ लोई॥ ३२॥
(दादू) छूटि खुदाइ कहीं को नाहीं, फिरिहौ पिरथी सारी।
दूजी दहणि दूरि करि बौरे, साधू सबद बिचारी॥ ३३॥
(दादू) बिना राम कहीं को नहीं, फिरिहौ देस बिदेसा।
दूजी दहणि दूरि करि बौरे, सुणि यहु साध सँदेसा॥ ३४॥
(दादू) सिदक सबूरी साच गहि, स्याबित राखि अकीन।
साहिब सौं दिल लाइ रहु, मुरदा ह्वै मसकीन[4]॥ ३५॥
(दादू) अणबंछूया[5] टूका खात है, मर्महि लागा मन।
नाँव निरंजन लेत है, यों निर्मल साधू जन॥ ३६॥
अणबंछूया आगैं पड़ै, खिर्‌या[6] बिचारि रखाइ।
दादू फिरै न तोड़ता, तरवर ताकि न जाइ॥ ३७॥

---

(१) भाड़ा=किराया। (२) जितना शरीर के गुजारे के लिए दर्कार है उसको सहज रीत से ग्रहन करै परन्तु ज़रूरत से ज़ियादा की चाह न करै जिस से मालिक से दूरी पैदा हो। (३) किनका मात्र। (४) दीन, आधीन। (५) अनिच्छित। (६) झड़ा हुआ।

अणबंछ्या, आगैं पड़ै, पीछैं लेइ उठाइ।
दादू के सिर दोस यहु, जे कुछ राम रजाइ[1] ॥ ३८ ॥
अणबंछी अजगैब[2] की, रोजी गगन गिरास।
दादू सति कर लीजिये, सो साईं के पास ॥ ३९ ॥
मीठे का सब मीठा लगै, भावै बिष भरि देइ।
दादू कड़वा ना कहै, अमृत करि करि लेइ ॥ ४० ॥
बिपति भली हरि नाँव सूँ, काया कसौटी दुक्ख।
राम बिना किस काम का, दादू सम्पति सुक्ख ॥ ४१ ॥
दादू एक बेसास बिन, जियरा डावाँडोल।
निकटि निधि दुख पाइये, चिंतामणी अमोल ॥ ४२ ॥
(दादू) बिन बेसासी जीयरा, चंचल नाहीं ठौर।
निहचय निहचल ना रहै, कछू और की और ॥ ४३ ॥
(दादू) होणा था सो ह्वै रह्या, सर्ग न बांछी धाइ।
नरक कनै[3] थीं[4] ना डरी, हुआ सो होसी आइ ॥ ४४ ॥
(दादू) होणा था सो ह्वै रह्या, जिन बांछै सुख दुक्ख।
सुख माँगे दुख आइसी, पै पिव न बिसारी मुक्ख ॥ ४५ ॥
(दादू) होण था सो ह्वै रह्या, जे कुछ कीया पीव।
पल बधै[5] ना छिन घटै, ऐसी जाणी जीव ॥ ४६ ॥
(दादू) होणा था सो ह्वै रह्या, और न होवै आइ।
लेणा था सो ले रह्या, और न लीया जाइ ॥ ४७ ॥
ज्यूँ रचिया त्यूँ होइगा, काहे कूँ सिर लेह।
साहिब ऊपर राखिये, देखि तमासा येह ॥ ४८ ॥

---

(१) मरज़ी, इच्छा। (२) आकाशवृत्ति। (३) पास। (४) से।
(५) बढ़।

ज्यूँ जाणै त्यूँ राखियो, तुम सिर ढाली[1] राइ[2]।
दूजा को देखौं नहीं, दादू अनत न जाइ ॥ ४९ ॥
ज्यूँ तुम भावै त्यूँ खुसी, हम राजी उस बात।
दादू के दिल सिदक[3] सूँ, भावै दिन कूँ रात ॥ ५० ॥
(दादू) करणहार जे कुछ किया, सो बुरा न कहणा जाइ।
सोई सेवग संत जन, रहिबा राम रजाइ ॥ ५१ ॥
(दादू) करणहार जे कुछ किया, सोई हूँ करि जाणि। (६-२६)
जे तूँ चतुर सयाणा जाणराइ, तौ याही परवाणि ॥ ५२ ॥
दादू करता हम नहीं, करता औरै कोइ।
करता है सो करैगा, तूँ जिनि करता होइ ॥ ५३ ॥
कासी तजि मगहर[4] गया, कबीर भरोसे राम।
सैंदेही[5] साईं मिल्या, दादू पूरे काम ॥ ५४ ॥
दादू रोजी राम है, राजिक[6] रिजिक[7] हमार।
दादू उस परसाद सूँ, पोष्या सब परिवार ॥ ५५ ॥
पंच सँतोषे एक सूँ, मन मतवाला माहिं।
दादू भागो भूख सब, दूजा भावै नाहिं ॥ ५६ ॥
दादू साहिब मेरे कप्पड़े, साहिब मेरा खाण[8]।
साहिब सिर का ताज है, साहिब प्यंड पराण ॥ ५७ ॥
साईं सत संतोष दे, भाव भगति बेसास।
सिदक सबूरी साच दे, माँगै दादूदास ॥ ५८ ॥

॥ इति बेसास को अंग समाप्त ॥ १६ ॥

---

(१) डाली। (२) हे मेरे राजा या स्वामी; और "राइ" का अर्थ सलाह भी हो सकता है। (३) सिदक़=सच्चा। (४) मशहूर है कि मगहर में मरने से आदमी गदहे का जनम पाता है परंतु कबीर साहिब ने जान बूझ कर अपना शरीर वहीं त्याग किया। (५) सदेह या इसी चोले में। (६) अन्नदाता। (७) रोज़ी। (८) खाना।

अणबंछ्या, आगैं पड़ै, पीछैं लेइ उठाइ।
दादू के सिर दोस यहु, जे कुछ राम रजाइ[1] ॥ ३८ ॥
अणबंछी अजगैब[2] की, रोजी गगन गिरास।
दादू सति कर लीजिये, सो साईं के पास ॥ ३९ ॥
मीठे का सब मीठा लगै, भावै बिष भरि देइ।
दादू कड़वा ना कहै, अमृत करि करि लेइ ॥ ४० ॥
बिपति भली हरि नाँव सूँ, काया कसौटी दुक्ख।
राम बिना किस काम का, दादू सम्पति सुक्ख ॥ ४१ ॥
दादू एक बेसास बिन, जियरा डावाँडोल।
निकटि निधि दुख पाइये, चिंतामणी अमोल ॥ ४२ ॥
(दादू) बिन बेसासी जीयरा, चंचल नाहीं ठौर।
निहचय निहचल ना रहै, कछू और की और ॥ ४३ ॥
(दादू) होणा था सो ह्वै रह्या, सर्ग न बांछी धाइ।
नरक कने[3] थीं[4] ना डरी, हुआ सो होसी आइ ॥ ४४ ॥
(दादू) होणा था सो ह्वै रह्या, जिन बांछै सुख दुक्ख।
सुख माँगे दुख आइसी, पै पिव न बिसारी मुक्ख ॥ ४५ ॥
(दादू) होण था सो ह्वै रह्या, जे कुछ कीया पीव।
पल बधै[5] ना छिन घटै, ऐसी जाणी जीव ॥ ४६ ॥
(दादू) होणा था सो ह्वै रह्या, और न होवै आइ।
लेणा था सो ले रह्या, और न लीया जाइ ॥ ४७ ॥
ज्यूँ रचिया त्यूँ होइगा, काहे कूँ सिर लेह।
साहिब ऊपर राखिये, देखि तमासा येह ॥ ४८ ॥

---

(१) मरजी, इच्छा। (२) आकाशवृत्ति। (३) पास। (४) से।
(५) बढ़।

ज्यूँ जाणै त्यूँ राखियो, तुम सिर डाली[1] राइ[2]।
दूजा को देखौं नहीं, दादू अनत न जाइ ॥ ४९ ॥
ज्यूँ तुम भावे त्यूँ खुसी, हम राजी उस बात।
दादू के दिल सिदक[3] सूँ, भावै दिन कूँ रात ॥ ५० ॥
(दादू) करणहार जे कुछ किया, सो बुरा न कहणा जाइ।
सोई सेवग संत जन, रहिबा राम रजाइ ॥ ५१ ॥
(दादू) करणहार जे कुछ किया, सोई हूँ करि जाणि। (६-२६)
जे तूँ चतुर सयाणा जाणराइ, तौ याही परवाणि ॥ ५२ ॥
दादू करता हम नहीं, करता औरै कोइ।
करता है सो करैगा, तूँ जिनि करता होइ ॥ ५३ ॥
कासी तजि मगहर[4] गया, कबीर भरोसे राम।
सैंदेही[5] साईं मिल्या, दादू पूरे काम ॥ ५४ ॥
दादू रोजी राम है, राजिक[6] रिजिक[7] हमार।
दादू उस परसाद सूँ, पोष्या सब परिवार ॥ ५५ ॥
पंच सँतोषे एक सूँ, मन मतवाला माहिं।
दादू भागो भूख सब, दूजा भावै नाहिं ॥ ५६ ॥
दादू साहिब मेरे कप्पड़े, साहिब मेरा खाण[8]।
साहिब सिर का ताज है, साहिब प्यंड पराण ॥ ५७ ॥
साईं सत संतोष दे, भाव भगति बेसास।
सिदक सबूरी साच दे, माँगै दादूदास ॥ ५८ ॥

॥ इति बेसास को अंग समाप्त ॥ १९ ॥

---

(१) डाली। (२) हे मेरे राजा या स्वामी; और "राइ" का अर्थ सलाह भी हो सकता है। (३) सिदक़ = सच्चा। (४) मशहूर है कि मगहर में मरने से आदमी गदहे का जनम पाता है परंतु कबीर साहिब ने जान बूझ कर अपना शरीर वहीं त्याग किया। (५) सदेह या इसी चोले में। (६) अन्नदाता। (७) रोजी। (८) खाना।

२०—पीव पिछाण को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥

सारौं[1] के सिर देखिये, उस पर कोई नाहिं।
दादू ज्ञान बिचारि करि, सो राख्या मन माहिं ॥ २ ॥
सब लालौं सिर लाल है, सब खूबौं सिर खूब।
सब पाकौं सिर पाक है, दादू का महबूब[2] ॥ ३ ॥
परब्रह्म परापरं, सो मम देव निरंजनं। (१-२)
निराकारं निर्मलं, तस्य दादू बंदनं ॥ ४ ॥
एक तत्त ता ऊपरि इतनी, तीनि लोक ब्रह्मंडा।
धरती गगन पवन अरु पाणी, सप्त दीप नौ खंडा ॥ ५ ॥
चंद सूर चौरासी लख, दिन अरु रैणी, रचिले सप्त समंदा।
सवा लाख मेर गिर परबत, अठारह भार तीरथ बरत
ता ऊपर मंडा।
चौदह लोक रहैं सब चरना[3], दादूदास तास घरि बंदा ॥६॥
(दादू) जिनि यहु एती करि धरी, थंभ[4] बिन राखी।
सो हम कूँ क्यूँ बीसरे, संत जन साखी ॥ ७ ॥
(दादू) जिन प्राण प्यंड हम कूँ दिया, अंतर सेवैं ताहि।
जे आवे औसाण सिरि, सोई नाँव सँबाहि ॥८॥ (२-२४)
(दादू) जिन मुझ कूँ पैदा किया, मेरा साहिब सोइ।
मैं बंदा उस राम का, जिन सिरज्या सब कोइ ॥ ९ ॥

---

(१) सब। (२) प्रीतम। (३) एक लिपि और एक पुस्तक के पाठ में "चरना" की जगह "रचना" है। (४) खम्भा, सहारा।

(दादू) एक सगा संसार में, जिन हम सिर्जे सोइ।
मनसा बाचा कर्मना, और न दूजा कोइ ॥ १० ॥
जे था कंत कबीर का, सोई बर बरिहौं।
मनसा बाचा कर्मना, मैं और न करिहौं ॥ ११ ॥
(दादू) सब का साहिब एक है, जा का परगट नाँव।
दादू साईं सोधि ले, ता की मैं बलि जाँव ॥ १२ ॥
साचा साईं सोधि करि, साचा राखी भाव।
दादू साचा नाँव ले, साचे मारग आव ॥ १३ ॥
साचा सतगुरु सोधि ले, साचे लीजै साध। (१-५४)
साचा साहिब सोधि करि, दादू भगति अगाध ॥ १४ ॥
जामै[1] मरै सो जीव है, रमिता राम न होइ।
जामण मरण थैं रहित है, मेरा साहिब सोइ ॥ १५ ॥
उठै न बैसै एक रस, जागै सोवै नाहिं।
मरै न जीवै जगत गुर, सब उपजि खपै उस माहिं ॥ १६ ॥
ना वहु जामै ना मरै, ना आवै गर्भ बास।
दादू ऊँधे[2] मुख नहीं, नर्क कुंड दस मास ॥ १७ ॥
किरतम नहीं सो ब्रह्म है, घटै बधै नहिं जाइ।
पूरण निहचल एक रस, जगति न नाचै आइ ॥ १८ ॥
उपजै बिनसै गुण धरै, यहु माया का रूप।
दादू देखत थिर नहीं, षिण छाँही षिण धूप ॥ १९ ॥
जे नाहीं सो ऊपजै, है सो उपजै नाहिं।
अलख आदि अनादि है, उपजै माया माहिं ॥ २० ॥
प्रश्न—जे यहु करता जीव था, संकट क्यूँ आया।
कर्मों के बसि क्यूँ भया, क्यूँ आप बँधाया ॥ २१ ॥

(१) उगै, जन्मै। (२) औंधे।

क्यूँ सब जोनी जगत में, घर बार नचाया ।
क्यूँ यह करता जीव है, पर हाथ बिकाया ॥ २२ ॥
उत्तर —दादू किरतम काल बसि, बंध्या गुण माहीं ।
उपजै बिनसै देखताँ, यहु करता नाहीं ॥ २३ ॥
जाती[1] नूर अलाह का, सिफातो[2] अरवाह ।
सिफाती[2] सिजदा करै, जाती बेपरवाह ॥ २४ ॥
वार पार नहिं नूर का, दादू तेज अनंत । (४-१०४)
कीमति नहिं करतार की, ऐसा है भगवंत ॥ २५ ॥
निरसंध नूर अपार है, तेज पुंज सब माहिं । (४-१०५)
दादू जोति अनंत है, आगौ पीछौ नाहिं ॥ २६ ॥
खंड खंड निज ना भया, इक लस एकै नूर । (४-१०६)
ज्यूँ था त्यूँ हीं तेज है, जोति रही भर पूर ॥ २७ ॥
परम तेज परकास है, परम नूर नीवास । (४-१०७)
परम जोति आनंद में, हंसा दादूदास ॥ २८ ॥
परम तेज परापरं, परम जोति परमेसुरं ।
स्वयं ब्रह्म सदई सदा, दादू अबिचल इस्थिरं ॥ २९ ॥
आदि अंत आगैं रहै, एक अनूपम देव । (४-२५४)
निराकार निज निर्मला, कोई न जाणै भेव ॥ ३० ॥
अबिनासी अपरंपरा, वार पार नहिं छेव । (४-२५५)
सो तूँ दादू देखिले, उर अंतरि करि सेव ॥ ३१ ॥
अबिनासी साहिब सति है, जे उपजै बिनसै नाहिं ।
जेता कहिये काल मुख, सो साहिब किस माहिं ॥ ३२ ॥
साईं मेरा सत्ति है, निरंजन निराकार ।
दादू बिनसै देखताँ, झूठा सब आकार ॥ ३३ ॥

---

(१) निर्गुण । (२) सर्गुण ।

राम रटनि छाडै नहीं, हरि लय लागा जाइ।
बीचैं ही अटकै नहीं, कला कोटि दिखलाइ ॥ ३४ ॥
उरैं[1] ही अटकै नहीं, जहाँ राम तहँ जाइ।
दादू पावै परम सुख, बिलसै बस्त अघाइ ॥ ३५ ॥
(दादू) उरैं ही उरझे घणे, मूए गल दे पास।
ऐन अंग जहँ आप था, तहाँ गये निज दास ॥ ३६ ॥
सेवा का सुख प्रेम रस, सेज सुहाग न देइ।
दादू बाहै[2] दास कूँ, कहै दूजा सब लेइ ॥ ३७ ॥
पर पुरिषा सब परिहरै, सुंदरि देखै जागि। (८-३८)
अपणा पीव पिछाणि करि, दादू रहिये लागि ॥ ३८ ॥
आन पुरिष हूँ बहनड़ी[3], परम पुरिष भरतार।
हूँ अबला समझौं नहीं, तूँ जाणै करतार ॥ ३९ ॥
लोहा माटी मिलि रह्या, दिन दिन काई खाइ।
दादू पारस राम बिन, कतहूँ गया बिलाइ ॥ ४० ॥
लोहा पारस परसि करि, पलटै अपणा अंग।
दादू कंचन ह्वै रहै, अपणे साईं संग ॥ ४१ ॥
(दादू) जिहिं पर सें पलटै प्राणिया, सोई निज करि लेह।
लोहा कंचन ह्वै गया, पारस का गुण येह ॥ ४२ ॥
आपा नाहीं बल मिटै, त्रिविधि तिमरि नहिं होइ।
दादू यहु गुण ब्रह्म का, सुन्नि समाना सोइ ॥ ४३ ॥
(दादू) माया का गुण बल करै, आपा उपजै आइ।
राजस तामस सातगी, मन चंचल ह्वै जाइ ॥ ४४ ॥
दह दिसि फिरै सो मन है, आवै जाइ सो पवन।
राखणहारा प्राण है, देखणहारा ब्रह्म ॥ ४५ ॥

॥ इति पीव पिछाण को अंग समाप्त ॥ २० ॥

(१) इस ओर। (२) सींचै। (३) बहिन।

२१—समर्थाई को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
(दादू) कर्ता करै त निमष[1] में, कोड़ी कुंजर होइ ।
कुंजर थैं कीड़ी करै, मेटि न सक्कै कोइ ॥ २ ॥
(दादू) कर्ता करै त निमष में, राई मेर[2] समान ।
मेर कौं राई करै, तौ को मेटै फुरमान[3] ॥ ३ ॥
(दादू) कर्ता करै त निमष में, जल माहैं थल थाप ।
थल माहैं जलहर करै, ऐसा समरथ आप ॥ ४ ॥
(दादू) कर्ता करै त निमष में, ठालो[4] भरे भँडार ।
भरिया गहि ठालो करै, ऐसा सिरजनहार ॥ ५ ॥
(दादू) धरती कौं अम्बर[5] करै, अम्बर धरती होइ ।
निस अँधियारी दिन करै, दिन कूँ रजनी सोइ ॥ ६ ॥
मिरतक काढ़ि मसाण थें, कहु कौण चलावै ।
अविगत गति नहिं जाणिये, जग आण दिखावै ॥ ७ ॥
(दादू) गुपत गुण परगट करै, परगट गुपत समाइ ।
पलक माहिं भानै घड़ै[6], ता की लखी न जाइ ॥ ८ ॥
(दादू) सोई सही साबित हुआ, जा मस्तकि कर देइ ।
गरीब निवाजै देखताँ, हरि अपणा करि लेइ ॥ ९ ॥
(दादू) सब ही मारग साइयाँ, आगैं एक मुकाम ।
सोई सनमुख करि लिया, जाही सेती काम ॥ १० ॥
मीराँ मुझ सूँ मिहरि करि, सिर पर दीया हाथ ।
दादू कलियुग क्या करै, साईं मेरा साथ ॥ ११ ॥

---

(१) छिन । (२) पहाड़ । (३) हुक्म, आज्ञा । (४) खाली । (५) आकाश । (६) गढ़ै ।

(दादू) समृथ सब बिधि साइयाँ, ता की मैं बलि जाउँ।
अंतर एक जु सो बसै, औराँ चित्त न लाउँ ॥ १२ ॥
दादू मारग मेहर का, सुखी सहज सौं जाइ।
भौसागर थैं काढ़ि करि, अपणे लिये बुलाइ ॥ १३ ॥
दादू जे हम चितवैं, सो कछू न होवै आइ।
सोई करता सत्ति है, कुछ औरै करि जाइ ॥ १४ ॥
एकूँ लेइ बुलाइ करि, एकूँ देइ पठाइ।
दादू अद्भुत साहिबी, क्यूँ ही लखी न जाइ ॥ १५ ॥
ज्यूँ राखै त्यूँ रहैंगे, अपणे बलि नाहीं।
सबै तुम्हारे हाथि है, भाजि कत जाहीं ॥ १६ ॥
(दादू) डोरी हरि कै हाथि है, गल माहैं मेरै।
बाजीगर का बंदरा, भावै तहँ फेरै ॥ १७ ॥
ज्यूँ राखै त्यूँ रहैंगे, मेरा क्या सारा।
हुक्मी सेवग राम का, बन्दा बेचारा ॥ १८ ॥
साहिब राखै तौ रहै, काया माहैं जीव।
हुक्मी बन्दा उठि चलै, जबहिं बुलावै पीव ॥ १९ ॥
खंड खंड परकास है, जहाँ तहाँ भरपूर।
दादू करता करि रह्या, अनहद बाजैं तूर ॥ २० ॥
दादू दादू कहत है, आपै सब घट माहिं।
अपणी रुचि आपै कहै, दादू थैं कुछ नाहिं ॥ २१ ॥
हम थैं हुआ न होइगा, ना हम करणे जोग।
ज्यूँ हरि भावै त्यूँ करै, दादू कहैं सब लोग ॥ २२ ॥
दादू दूजा क्यूँ कहै, सिर परि साहिब एक।
सो हम कूँ क्यूँ बीसरै, जे जुग जाहिं अनेक ॥ २३ ॥

आप अकेला सब करै, औरूँ के सिर देइ ।
दादू सोभा दास कूँ, अपणा नाँव न लेइ ॥ २४ ॥
आप अकेला सब करै, घट में लहरि उठाइ ।
दादू सिर दे जीव के, यूँ न्यारा ह्वै जाइ ॥ २५ ॥
ज्यूँ यहु समझै त्यूँ कहै, यहु जीव अज्ञानी ।
जेती बाबा तैं कही, इन एक न मानी ॥ २६ ॥
(दादू) परचा माँगै लोग सब, कहैं हम कूँ कुछ दिखलाइ ।
समरथ मेरा साइयाँ, ज्यूँ समझै त्यूँ समझाइ ॥२७॥
दादू तन मन लाइ करि, सेवा दिढ़ करि लेइ ।
ऐसा समरथ राम है, जे माँगै सो देइ ॥ २८ ॥
समरथ सो सेरी[1] समझाइनैं, करि अणकरता होइ ।
घटि घटि ब्यापक पूरि सब, रहै निरंतर सोइ ॥ २९ ॥
रहै नियारा सब करै, काहू लिप्त न होइ ।
आदि अंत भानै घड़ै[2], ऐसा समरथ सोइ ॥ ३० ॥
सुरम[3] नहीं सब कुछ करै, यौं कल धरी बणाइ ।
कौतिगहारा ह्वै रह्या, सब कुछ होता जाइ ॥ ३१ ॥
लिपै छिपै नहि सब करै, गुण नहिं ब्यापै कोइ ।
दादू निहचल एक रस, सहजैं सब कुछ होइ ॥ ३२ ॥
बिन गुण ब्यापे सब किया, समरथ आपै आप ।
निराकार न्यारा रहै, दादू पुन्न न पाप ॥ ३३ ॥
समिता के घरि सहज में, दादू दुबिधा नाहिं ।
साईं समरथ सब किया, समझि देखि मन माहिं ॥ ३४ ॥

---

(१) सेरी=मार्ग या रहनी—अर्थ यह कि हे समरथ सो मार्ग मुझे समझाओ कि जिससे आप सब करते हुए भी अकरता हो। (२) गढ़ै। (३) श्रम, परिश्रम।

पदा कीया घाट घड़ि, आपै आप उपाइ।
हिकमति हुनर कारीगरी, दादू लखी न जाइ ॥ ३५ ॥
जंत्र बजाया साजि करि, कारीगर करतार।
पंचौं का रस नाद है, दादू बोलणहार ॥ ३६ ॥
पंच ऊपना[1] सबद थैं, सबद पंच सौं होइ।
साईं मेरे सब किया, बूझै बिरला कोइ ॥ ३७ ॥
है तौ रती नहीं तौ नाहीं, सब कुछ उतपति होइ।
हुक्मैं हाजिर सब किया, बूझै बिरला कोइ ॥ ३८ ॥
नहीं तहाँ तैं सब किया, आपै आप उपाइ।
निज तत न्यारा ना किया, दूजा आवै जाइ ॥ ३९ ॥
नहीं तहाँ तैं सब किया, फिरि नाहीं है जाइ।
दादू नाहीं होइ रहु, साहिब सौं ल्यौ लाइ ॥ ४० ॥
(दादू) खालिक[2] खेलै खेल करि, बूझै बिरला कोइ।
ले करि सुखिया ना भया, दे करि सुखिया होइ ॥ ४१ ॥
देबे की सब भूख है, लेबे की कुछ नाहिं।
साईं मेरे सब किया, समझि देखि मन माहिं ॥ ४२ ॥
(दादू) जे साहिब सिरजय नहीं, तौ आपै क्यौंकरि होइ।
जे आपै ही ऊपजै, तौ मरि करि जीवै कोइ ॥ ४३ ॥
कर्म फिरावै जीव कौं, कर्मौं कौं करतार।
करतार कौं कोई नहीं, दादू फेरनहार ॥ ४४ ॥

॥ इति समर्थाई को अंग समाप्त ॥ २१ ॥

२२—सबद को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥

---

(१) उत्पन्न हुआ। (२) कर्त्ता।

(दादू) सबदैं बंध्या सब रहै, सबदैं सब ही जाइ ।
सबदैं ही सब ऊपजै, सबदैं सबै समाइ ॥ २ ॥
(दादू) सबदैं ही सचु पाइये, सबदैं ही संतोष ।
सबदैं ही इस्थिर भया, सबदैं भागा सोक ॥ ३ ॥
(दादू) सबदैं ही सूषिम भया, सबदैं सहज समान ।
सबदैं ही निर्गुण मिलै, सबदैं निर्मल ज्ञान ॥ ४ ॥
(दादू) सबदैं ही मुक्ता भया, सबदैं समझै प्राण ।
सबदैं ही सूझै सबै, सबदैं सुरझै जाण ॥ ५ ॥
(दादू) ओंकार थैं ऊपजै, अरस परस संजोग ।
अंकुर बीज द्वै पाप पुन, यहि बिधि जोग रु भोग ॥ ६ ॥
ओंकार थैं ऊपजै, बिनसै बहुत बिकार ।
भाव भगति लै थिर रहै, दादू आतम सार ॥ ७ ॥
पहली कीया आप थैं, उतपत्ती ओंकार ।
ओंकार थैं ऊपजै, पंच तत्त आकार ॥ ८ ॥
पंच तत्त थैं घट भया, बहु बिधि सब बिस्तार ।
दादू घट थैं ऊपजै, मैं तैं बरण बिचार ॥ ९ ॥
एक सबद सब कुछ किया, ऐसा समरथ सोइ ।
आगैं पीछैं तौ करै, जे बल-हीणा होइ ॥ १०[१] ॥
निरंजन निराकार है, ओंकार आकार ।
दादू सब रँग रूप सब, सब बिधि सब बिस्तार ॥ ११ ॥
आदि सबद ओंकार है, बोलै सब घट माहिं ।
दादू माया बिस्तरी, परम तत्त यहु नाहिं ॥ १२ ॥

---

(१) अकबर शाह ने सवाल किया था कि पहले पानी पैदा हुआ या हवा, जमीन या आसमान, मर्द या औरत, इसी का जवाब साखी नं० १० में है—पं० चं० प्र० ।

पैदा कीया घाट घड़ि, आपै आप उपाइ। (२१-३५)
हिकमत हुनर कारीगरी, दादू लखी न जाइ ॥ १३ ॥
जंत्र बजाया साजि करि, कारीगर करतार। (२१-३६)
पंचौं का रस नाद है, दादू बोलणहार ॥ १४ ॥
पंच ऊपना सबद थैं, सबद पंच सौं होइ। (२१-३७)
साईं मेरे सब किया, बूझै बिरला कोइ ॥ १५ ॥
(दादू) एक सबद सौं ऊनवै[1], बर्षन लागै आइ।
एक सबद सौं बीखरै, आप आप कौ जाइ ॥ १६ ॥
(दादू) साध सबद सौं मिलि रहै, मन राखै बिलमाइ।
साध सबद बिन क्यूँ रहै, तबहीं बीखरि जाइ ॥ १७ ॥
(दादू) सबद जरै सो मिलि रहै, एकै रस पूरा।
काइर भाजै जीव ले, पग माँडै सूरा ॥ १८ ॥
सबद बिचारै करणी करै, राम नाम निज हिरदै धरै।
माया माहैं सोधै सार, दादू कहै लहै सो पार ॥ १९ ॥
(दादू) काहे कौड़ी खरचिये, जे पैकै[2] सीझै काम।
सबदौं कारिज सिध भया, तौ सुरम[3] न दीजे राम ॥ २० ॥
(दादू) सबद बाण गुर साध के, दूरि दिसंतर जाइ। (१-२८)
जेहिं लागे सो ऊबरे, सूते लिये जगाइ ॥ २१ ॥
(दादू) राम रिदै रस भेलि करि, को साधू सबद सुणाइ।
जाणौ कर दीपक दिया, भरम तिमर सब जाइ ॥ २२ ॥
दादू बाणी प्रेम की, कवल बिगासैं होइ।
साध सबद माता रहै, तिन सबदौं मोह्या मोहिं ॥ २३ ॥
(दादू) हरि भुरकी[4] बाणी साध की, सो परियौ मेवे सीस।
छूटै याया मोह थैं, प्रेम भजन जगदीस ॥ २४ ॥

---

(१) उनय या लटक आवै जैसे बरसने वाले बादल। (२) अनायास—पं० चं० प्र०। (३) श्रम, परिश्रम। (४) चुटकी, मंत्र-प्रयोग।

(दादू) भुरकी राम है, सबद कहै गुर ज्ञान।
तिन सबदौं मन मोहिया, उनमन लागा ध्यान ॥ २५ ॥
दादू बाणी ब्रह्म की, अनभै घट परकास। (४-२०८)
राम अकेला रहि गया, सबद निरंजन पास ॥ २६ ॥
सब्दौं माहैं राम धन, जे कोइ लेइ बिचारि।
दादू इस संसार में, कबहुँ न आवै हारि ॥ २७ ॥
(दादू) राम रसाइन भरि धर्‌या, साधन सबद मँझारि।
कोइ पारिख पीवै प्रीत सौं, समझै सबद बिचारि ॥ २८ ॥
सबद सरोवर[1] सूभर[2] भर्‌या, हरि जल निर्मल नीर।
दादू पीवै प्रीत सौं, तिन के अखिल[3] सरीर ॥ २९ ॥
सबदौं माहैं राम रस, साधौं भरि दीया।
आदि अंत सब संत मिलि, यौं दादू पीया ॥ ३० ॥
पाणी माहीं राखिये, कनक कलंक न जाइ।
दादू साचा सबद दे[4], ताइ आगन में बाहि ॥ ३१ ॥
कारिज को सीझै नहीं, मीठा बोलै बीर।
दादू साचे सबद बिन, कटै न तन की पीर ॥ ३२ ॥
(दादू) गुण तजि निर्गुण बोलिये, तेता बोल अबोल।
गुण गहि आपा बोलिये, तेता कहिये बोल ॥ ३३ ॥
साचा सबद कबीर का, मीठा लागै मोहिं।
दादू सुनताँ परम सुख, केता आनँद होइ ॥ ३४ ॥

॥ इति सबद को अंग समाप्त ॥ २२ ॥

---

(१) तालाब। (२) शुभ्र = प्रकाशमान। (३) सारा। (४) एक लिपि और एक पुस्तक में "साचा सबद दे" की जगह "गुर के ज्ञान सौं" है जैसा कि गुरदेव के अंग की साखी नम्बर १०५ में है।

२३—जीवत मृतक को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं , नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा , प्रणामं पारंगतः ॥१॥

धरती मत आकास का , चंद सूर का लेइ ।
दादू पानी पवन का , राम नाम कहि देइ ॥ २[1] ॥

दादू धरती ह्वै रहै , तजि कूड़ कपट हंकार ।
साईं कारण सिरि सहै , ता कौं परतषि[2] सिरजनहार ॥३॥

जीवत माटी ह्वै रहै , साईं सनमुख होइ ।
दादू पहिली मरि रहै , पीछै तौ सब कोइ ॥ ४ ॥

आपा गर्ब गुमान तजि , मद मंछर हंकार ।
गहै गरीबी बन्दगी , सेवा सिरजनहार ॥ ५ ॥

मद मंछर आपा नहीं , कैसा गर्ब गुमान ।
सुपिनै ही समझै नहीं , दादू क्या अभिमान ॥ ६ ॥

झूठा गर्ब गुमान तजि , तजि आपा अभिमान ।
दादू दीन गरीब ह्वै , पाया पद निर्बान ॥ ७ ॥

(दादू) भाव भगति दीनता अंग ।
प्रेम प्रीति सदा तिहि संग ॥ ८ ॥

(दादू) सिदक सबूरी साच गहि, साबित राखि अकीन (१९-३५)
साहिब सौं दिल लाइ रहु , मुरदा ह्वै मसकीन ॥ ९ ॥

तब साहिब कूँ सिजदा किया, तब सिर धर्‌या उतारि ।
यौं दादू जीवत मरै , हिरस हवा कूँ मारि ॥ १० ॥

---

(१) धरती का गुण छमा, आकाश की निर्लेपता, चन्द्रमा की शीतलता, सूर्य्य का तेज, पानी की निर्मलता, पवन की अनाशक्ति—इन गुनों को मनुष्य धारन करै और राम नाम का भजन करता रहै—पं० चं० प्र० । (२) प्रत्यच्छ ।

राव रंक सब मरहिंगे, जीवै नाहीं कोइ।
सोई कहिये जीवता, जे मरजीवा होइ ॥ ११ ॥
(दादू) मेरा बैरी मैं मुवा, मुझै न मारै कोइ।
मैं हीं मुझ कौं मारता, मैं मरजीवा होइ ॥ १२ ॥
दादू आपा जब लगैं, तब लग दूजा होइ। (४-४७)
जब यहु आपा मिटि गया, तब दूजा नाहीं कोइ ॥१३॥
बैरी मारे मरि गये, चित थैं बिसरे नाहिं।
दादू अजहूँ साल है, समझि देख मन माहिं ॥ १४ ॥
(दादू) तौ तूँ पावै पीव कौं, जे जीवत मिरतक होइ।
आप गँवाये पिव मिलै, जानत है सब कोइ ॥ १५ ॥
(दादू) तौ तूँ पावै पीव कौं, आपा कछू न जाण।
आपा जिस थैं ऊपजै, सोई सहज पिछाण ॥ १६ ॥
(दादू) तौ तूँ पावै पीव कौं, मैं मेरा सब खोइ।
मैं मेरा सहजैं गया, तब निर्मल दरसन होइ ॥ १७ ॥
मैं हीं मेरे पोट[1] सिर, मरिये ता के भार।
दादू गुर परसाद सौं, सिर थैं धरी उतार ॥ १८ ॥
मेरे आगे मैं खड़ा, ता थैं रह्या लुकाइ।
दादू परगट पीव है, जे यहु आपा लाइ ॥ १९ ॥
(दादू) जीवत मिरतक होइ करि, मारग माहैं आव।
पहिला सीस उतारि करि, पीछे धरिये पाँव ॥ २० ॥
दादू मारग साध का, खरा दुहेला जाण।
जीवत मिरतक ह्वै चलै, राम नाम नीसाण ॥ २१ ॥
दादू मारग कठिन है, जीवत चलै न कोइ।
सोई चलिहै बापुरा, जे जीवत मिरतक होइ ॥ २२ ॥

---

(१) एक लिपि और एक पुस्तक में "मोट" है।

मिरतक होवै सो चलै, नीरंजन की बाट।
दादू पावै पीव कौं, लंघै औघट घाट॥ २३॥
(दादू) मिरतक तब ही जाणिये, जब गुण इंद्री नाहिं।
जब मन आपा मिटि गया, तब ब्रह्म समाना माहिं॥ २४॥
(दादू) जीवत ही मरि जाइये, मरि माहैं मिलि जाइ।
साइँ का सँग छाडि करि, कौन सहै दुख आइ॥ २५॥
(दादू) कदि यहु आपा जाइगा, कदि यहु बिसरै और। (१-६१)
कदि यहु सूषिम होइगा, कदि यहु पावै ठौर॥ २६॥
(दादू) आपा कहाँ दिखाइये, जे कुछ आपा होइ।
यहु तौ जाता देखिये, रहता चीन्हौ सोइ॥ २७॥
दादू आप छिपाइये, जहाँ न देखै कोइ।
पिव कौं देखि दिखाइये, त्यौं त्यौं आनँद होइ॥ २८॥
(दादू) अंतरगति आपा नहीं, मुख सौं मैं तैं होइ।
दादू दोस न दीजिये, यौं मिलि खेलैं दोइ॥ २९॥
जे जन आपा मेटि करि, रहे राम ल्यौ लाइ।
दादू सब ही देखताँ, साहिब सौं मिलि जाइ॥ ३०॥
गरीब गरीबी गहि रह्या, मसकीनो मसकीन।
दादू आपा मेटि करि, होइ रह्या लैलीन॥ ३१॥
मैं हौं मेरी जब लगै, तब लग बिलसै खाइ।
मैं नाहीं मेरी मिटै, तब दादू निकटि न जाइ॥ ३२॥
दादू मना मनी सब ले रहे, मनी न मेटी जाइ।
मना मनी जब मिटि गई, तब हीं मिलै खुदाइ॥ ३३॥
दादू मैं मैं जालि दे, मेरे लागो आगि।
मैं मैं मेरा दूरि करि, साहिब के सँगि लागि॥ ३४॥

दादू खोई आपणी, लज्या कुल की कार।
मान बड़ाई पति गई, तब सनमुख सिरजनहार॥ ३५ ॥

(दादू) मैं नाहीं तब एक है, मैं आई तब दोइ।
मैं तैं पड़दा मिटि गया, तब ज्यौं था त्यौं ही होइ॥ ३६ ॥

नूर सरीखा करि लिया, बंदौं का बन्दा।
दादू दूजा को नहीं, मुझ सरिखा गंदा॥ ३७[१] ॥

दादू सीख्यूँ[२] प्रेम न पाइये, सीख्यूँ प्रीति न होइ।
सीख्यूँ दर्द न ऊपजे, जब लग आप न खोइ॥ ३८ ॥

कहिबा सुणिबा गति भया, आपा पर का नास।
दादू मैं तैं मिटि गया, पूरण ब्रह्म प्रकास॥ ३९ ॥

(दादू) साईं कारण माँस का, लोही[३] पानी होइ।
सूकै आटा अस्थि[४] का, दादू पावै सोइ॥ ४० ॥

तन मन मैदा पीसि करि, छानि छानि ल्यौ लाइ।
यौं बिन दादू जीव का, कबहूँ साल न जाइ॥ ४१ ॥

पीसे ऊपरि पीसिये, छाने ऊपरि छान।
तौ आतम कण[५] ऊबरै, दादू ऐसी जान॥ ४२ ॥

पहिली तन मन मारिये, इन का मरदै मान।
दादू काढ़ै जंत्र में, पीछै सहज समान॥ ४३ ॥

काटे ऊपर काटिये, दाधे[६] कौं दौं[७] लाइ।
दादू नीर न सींचिये, तौ तरवर बधता[८] जाइ॥ ४४ ॥

(दादू) सब कौं संकट एक दिन, काल गहेगा आइ।
जीवत मिरतक ह्वै रहै, ता के निकट न जाइ॥ ४५ ॥

---

(१) जिस में दासानुदासता का भाव आया वह प्रकाश स्वरूप हो गया और जिस में आपा [मुझ] लगा है वह महा मलीन बना है। (२) सीखने से। (३) लोहू। (४) हड्डी। (५) बीज, सार वस्तु। (६) जले हुए। (७) आग। (८) बढ़ता।

जीवत मिरतक ह्वै रहै, सब को बिरकत होइ।
काढ़ौ काढ़ौ सब कहै, नाँव न लेवे कोइ॥ ४६॥
सारा गहिला ह्वै रहै, अंतरजामी जाणि।
तौ छूटै संसार थैं, रस पीवै सारँगपाणि[1]॥ ४७॥
गुँगा गहिला बावरा, साईं कारण होइ।
दादू दिवाना ह्वै रहै, ता कौं लखै न कोइ॥ ४८॥
जीवत मिरतक साध की, बाणी का परकास।
दादू मोहे राम जी, लीन भये सब दास॥ ४९॥
(दादू) जे तूँ मोटा मीर है, सब जीवों में जीव।
आपा देखि न भूलिये, खरा दुहेला पीव॥ ५०॥
आपा मेटि समाइ रहु, दूजा धंधा बाद।
दादू काहे पचि मरै, सहजैं सुमिरण साध॥ ५१॥
(दादू) आपा मेटै एक रस, मन इस्थिर लैलीन।
अरस परस आनँद करै, सदा सुखी सो दीन॥ ५२॥
दादू है को भय घणा, नाहीं कौं कुछ नाहिं। (४-४९)
दादू नाहीं होइ रहु, अपणे साहिब माहिं॥ ५३॥
(दादू) मैं नाहीं तहँ मैं गया, एकै दूसर नाहिं। (४-४५)
नाहीं कौं ठाहर घणी, दादू निज घर माहिं॥ ५४॥
जहाँ राम तहँ मैं नहीं, मैं तहँ नाहीं राम। (४-४४)
दादू महल बारीक है, द्वै कौं नाहीं ठाम॥ ५५॥
बिरह अगिन का दाग दे, जीवत मिरतक गोर। (३-९७)
दादू पहिली घर किया, आदि हमारी ठौर॥ ५६॥
नहीं तहाँ थैं सब किया, फिर नाहीं ह्वै जाइ। (२१-४०)
दादू नाहीं होइ रहु, साहिब सौं ल्यौ लाइ॥ ५७॥

---

(१) दो लिपियों में "सारँगप्राणि" है परन्तु "सारँगपाणि" अर्थात् हाथ (पाणि) में धनुष (सारँग) रखने वाले ठीक जान पड़ता है।

हमौं हमारा करि लिया, जीवत करणी सार।
पीछै संसा को नहीं, दादू अगम अपार ॥ ५८ ॥
माटी माहैं ठौर करि, माटी माटी माहिं।
दादू सम कर राखिये, द्वै पष[1] दुबिधा नाहिं ॥ ५६ ॥

॥ इति जीवत मृतक को अंग समाप्त ॥ २३ ॥

२४—सूरा तन को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
साचा सिर सौं खेल है, यह साधू जन का काम।
दादू मरणा आसँघै[2], सोई कहैगा राम ॥ २ ॥
राम कहैं ते मरि कहैं, जीवत कह्या न जाइ।
दादू ऐसैं राम कहि, सती सूर सम भाइ ॥ ३ ॥
जब दादू मरिबा गहै, तब लोगौं की क्या लाज।
सती राम साचा कहै, सब तजि पति सैं काज ॥ ४ ॥
(दादू) हम काइर कढ़बा[3] करि रहे, सूर निराला होइ।
निकसि खड़ा मैदान में, ता सम और न कोइ ॥ ५ ॥
मडा[4] न जीवै तौ संगि जलै, जीवै तौ घर आण।
जीवन मरणा राम सैं, सोई सती करि जाण ॥ ६ ॥
जन्म लगैं बिभचारणी, नख सिख भरी कलंक।
पलक एक सनमुख जली, दादू धोये अंक ॥ ७ ॥
स्वाँग सती का पहरि करि, करै कुटुम्ब का सोच।
बाहरि सूरा देखिये, दादू भीतरि पोच[5] ॥ ८ ॥
(दादू) सती त सिरजनहार सौं, जलै बिरह की झाल।
ना वहु मरै न जलि बुझै, ऐसैं संगि दयाल ॥ ६ ॥

---
(१) पक्ष। (२) हिम्मत से। (३) चलने की तैयारी। (४) मरा। (५) पूच, कायर।

(दादू) जे मुझ होते लाख सिर, तौ लाखौं देती वारि।
सह[1] मुझ दीया एक सिर, सोई सौंपै नारि ॥ १० ॥
सती जलि कोइला भई, मुए मडे की लार।
यौं जे जलती राम सौं, साचे सँगि भर्तार ॥ ११ ॥
मुए मडे सौं हेत क्या, जे जिव की जाणै नाहिं।
हेत हरी सौं कीजिये, जे अंतरजामी माहिं ॥ १२ ॥
सूरा चढ़ि संग्राम कौं, पाछा पग क्यौं देइ।
साहिब लाजै भाजताँ, धृग जीवन दादू तेइ ॥ १३ ॥
सेवक सूरा राम का, सोई कहैगा राम।
दादू सूर सन्मुख रहै, नहिं काइर का काम ॥ १४ ॥
काइर काम न आवई, यहु सूरे का खेत।
तन मन सौंपै राम कौं, दादू सीस सहेत ॥ १५ ॥
जब लग लालच जीव का, तब लग निर्भय हुआ न जाइ।
काया माया मन तजै, तब चौड़े रहै बजाइ ॥ १६ ॥
(दादू) चौड़े में आनंद है, नाँव धर्‌या रणजीत।
साहिब अपणा करि लिया, अंतरगति की प्रीत ॥ १७ ॥
(दादू) जे तुझ काम करीम[2] सौं, तौ चौहटे चढ़ि करि नाच।
झूठा है सो जाइगा, निहचै रहसी साच ॥ १८ ॥
राम कहैगा एक को[3], जे जीवत मिरतक होइ।
दादू ढूँढ़े पाइये, कोटी[4] मध्ये कोइ ॥ १९ ॥
सूरा पूरा संत जन, साईं कौं सेवै।
दादू साहिब कारणै, सिर अपणा देवै ॥ २० ॥
सूरा झूझै[5] खेत में, साईं सन्मुख आइ।
सूरे कौं साईं मिलै, तब दादू काल न खाइ ॥ २१ ॥

---

(१) शाह, मालिक। (२) दाता, दयाल। (३) कोई। (४) करोड़। (५) जूझै=लड़ै।

मरिबे ऊपर एक पग, करता करै सो होइ।
दादू साहिब कारणै, तालाबेली[1] मोहिं॥ २२॥
दादू अंग न खैंचिये, कहि समझाऊँ तोहि।
मोहिं भरोसा राम का, बंका बाल न होइ॥ २३॥
बहुत गया थोड़ा रहा, अब जिव सोच निवार।
दादू मरणा माँडि[2] रहु, साहिब के दरबार॥ २४॥
जीवूँ का संसा पड़्या, को का कूँ तारै।
दादू सोई सूरिवाँ[3], जे आप उबारै॥ २५॥
जे निकसै संसार थैं, साईं की दिसि धाइ।
जे कबहुँ दादू बाहुड़ै, तौ पीछैं मार्‍या जाइ॥ २६॥
(दादू) कोइ पीछैं हेला जिनि करै, आगैं हेला आव।
आगैं एक अनूप है, नहिं पीछैं का भाव॥ २७॥
पीछैं कौं पग ना भरै, आगैं कौं पग देइ।
दादू यहु मत सूर का, अगम ठौर कौं लेइ॥ २८॥
आगा चलि पीछा फिरै, ता का मूँह मदीठ[4]।
दादू देखै दोइ दल, भागै देकर पीठ॥ २९॥
दादू मरणा माँडि करि, रहै नहीं ल्यौ लाइ।
काइर भाजै जीव ले, आरणि[5] छाडे जाइ॥ ३०॥
सूरा होइ सुमेर उलंघै, सब गुण बंध्या छूटै।
दादू निर्भय ह्वै रहै, काइर तिणा न टूटै॥ ३१॥
सर्प केसरि काल कुंजर, बहु जोध मारग माहिं[6]।
कोटि में कोइ एक ऐसा, मरण आसँघि[7] जाहिं॥ ३२॥

---

(१) तड़प, बेकली। (२) मँड रह, मुस्तैद रह। (३) सूरमा। (४) देखने योग्य नहीं। (५) रण, लड़ाई। (६) संत पंथ में साँप, सिंह, काल, हाथी, आदि दूत विघ्न-कारक हैं। (७) हिम्मत से।

(दादू) जब जागै तब मारिये, बैरी जिय के साल ।
मनसा डायनि काम रिपु, क्रोध महाबलि काल ॥ ३३ ॥
पंच चोर चितवत रहीं , माया मोह बिष झाल ।
चेतन पहरै आपणौ , कर गहि खड़ग सँभाल ॥ ३४ ॥
काया कबज कमान करि , सार सबद करि तीर ।
दादू यहु सर साँधि करि , मारै मोटे मीर ॥ ३५ ॥
काया कठिन कमान है , खाँचै बिरला कोय ।
मारै पंचों मिरगला , दादू सूरा सोइ ॥ ३६ ॥
जे हरि कोप करै इन ऊपरि, तौ काम कटक दल जाहिं कहाँ ।
लालच लोभ क्रोध कत भाजे, प्रगट रहे हरि जहाँ तहाँ ॥३७॥
तब साहिब कौं सिजदा किया, जब सिर धर्‌या उतारि ।
यौं दादू जीवत मरै , हिर्स हवा कौं मारि ॥३८॥ (२३-१०)
(दादू) तन मन काम करीम के, आवै तौ नीका ।
जिस का तिस कौं सौंपिये , सोच क्या जी का ॥ ३९ ॥
जे सिर सौंप्या राम कौं , सो सिर भया सनाथ ।
दादू दे ऊरण[1] भया , जिस का तिस के हाथ ॥ ४० ॥
जिस का है तिस कौं चढ़ै , दादू ऊरण होइ ।
पहिली देवै सो भला , पीछै तौ सब कोइ ॥ ४१ ॥
साईं तेरे नाँव परि , सिर जीव करूँ कुरबान ।
तन मन तुम परि वारणौ , दादू प्यंड पराण ॥ ४२ ॥
अपणे साईं कारणे , क्या क्या नहिं कीजै ।
दादू सब आरंभ तजि , अपणा सिर दीजै ॥ ४३ ॥
सिर के साटै लीजिये , साहिब जी का नाँव ।
खेलै सीस उतारि करि , दादू मैं बलि जाँव ॥ ४४ ॥

(१) उऋन, बेबाक़ ।

खेलै सीस उतारि करि, अधर एक सौं आइ ।
दादू पावै प्रेम रस, सुख में रहै समाइ ॥ ४५ ॥
(दादू) मरणे थीं तूँ मति डरै, सब जग मरता जोइ ।
मिलि करि मरणा राम सौं, तौ कलि अजरावर[1] होइ ॥४६॥
(दादू) मरणे थीं तूँ मति डरै, मरणा अंति निदान ।
रे मन मरणा सिरजिया, कहि ले केवल राम ॥ ४७ ॥
दादू मरणे थीं तूँ मति डरै, मरणा पहुँच्या आइ ।
रे मन मेरा राम कहि, बेगा बार न लाइ ॥ ४८ ॥
(दादू) मरणे थीं तूँ मति डरै, मरणा आजि कि काल्हि ।
मरणा मरणा क्या करै, बेगा राम सँभालि ॥ ४९ ॥
दादू मरणा खूब है, निपट बुरा बिभचार ।
दादू पति कौं छाडि करि, आन भजै भर्तार ॥ ५० ॥
दादू तन थैं कहा डराइये, जे बिनसि जाइ पल बार ।
काइर हुआँ न छूटिये, रे मन हो हुसियार ॥ ५१ ॥
दादू मरणा खूब है, मरि माहैं मिलि जाइ ।
साहिब का सँग छाडि करि, कौन सहै दुख आइ ॥ ५२ ॥
(दादू) माहैं मन सौं झूझि करि, ऐसा सूरा बीर ।
इन्द्री अरि[2] दल भानि सब, यौं कलि हुआ कबीर ॥ ५३ ॥
साईं कारण सीस दे, तन मन सकल सरीर ।
दादू प्राणी पंच दे, यौं हरि मिल्या कबीर ॥ ५४ ॥
सबै कसौटी सिर सहै, सेवग साईं काज ।
दादू जीवनि क्यौं तजै, भाजैं हरि कौं लाज ॥ ५५ ॥
साईं कारण सब तजै, जन का ऐसा भाव ।
दादू राम न छाडिये, भावै तन मन जाव ॥ ॥ ५६ ॥

---

(१) अमर । (२) शत्रु, बैरी ।

दादू सेवग सो भला, सेवै तन मन लाइ।
दादू साहिब छाडि करि, काहू संग न जाइ॥ ५७॥
पतिव्रता पति पीव कौं, सेवै दिन अरु रात।
दादू पति कूँ छाडि करि, काहू संगि न जात॥ ५८॥
दादू मरिबो एकजु बार, अमर झुकेड़े[1] मारिये।
तौ तिरिये संसार, आतम कारज सारिये॥ ५९॥
दादू जे तूँ प्यासा प्रेम का, तौ जीवन की क्या आस।
सिर के साटै पाइये, तौ भरि भरि पीवै दास॥ ६०॥
मन मनसा जीते नहीं, पंच न जीते प्राण।
दादू रिप[2] जीते नहीं, कहैं हम सूर सुजाण॥ ६१॥
मन मनसा मारे नहीं, काया मारण जाहि।
दादू बाँबी मारिये, सर्प मरै क्यौं माँहि॥ ६२॥
दादू पाखर पहरि करि, सब को झूझण जाइ।
अंगि उघाड़ै सूरिवाँ, चोट मुँहै मुँह खाइ॥ ६३॥
जब झूझै तब जाणिये, काछि खड़े क्या होइ।
चोट मुँहै मुँह खाइगा, दादू सूरा सोइ॥ ६४॥
सूरा तन सहजैं सदा, साच सेल[3] हथियार।
साहिब के बल जूझताँ, केते किये सुमार॥ ६५॥
(दादू) जब लग जिय लागै नहीं, प्रेम प्रीति के सेल।
तब लग पिव क्यौं पाइये, नहिं बाजीगर का खेल॥ ६६॥
(दादू) जे तूँ प्यासा प्रेम का, तो किस कौं सैंतै[4] जीव।
सिर कै साटै लीजिये, जे तुझ प्यारा पीव॥ ६७॥

---

(१) झूले की पेंग। (२) रिपु=बैरी। (३) भाला। (४) बचाकर रखता है।

(दादू) महा जोध मोटा बली, सो सदा हमारी भीर[१] ।
सब जग रूठा क्या करै, जहाँ तहाँ रणधीर ॥ ६८ ॥
दादू रहते पहते राम जन, तिन भी माँड्या झूझ ।
साचा मुँह मोड़ै नहीं, अर्थ इता[२] ही बूझ ॥ ६९ ॥
दादू काँधै सबल के, निरबाहैगा ओर ।
आसणि अपणे ले चल्या, दादू निहचल ठौर ॥ ७० ॥
(दादू) क्या बल कहा पतंग का, जलत न लागै बार ।
बल तौ हरि बलवंत का, जीवै जिहिं आधार ॥ ७१ ॥
राखणहारा राम है, सिर ऊपर मेरे ।
दादू केते पचि गये, बैरी बहुतेरे ॥ ७२ ॥
(दादू) बलि तुम्हारे बापजी, गिणत न राणा राव ।
मीर मलिक परधान पति, तुम बिन सबही बाव[३] ॥ ७३ ॥
दादू राखी राम परि, अपणी आप सँबाहि[४] ।
दूजा को देखूँ नहीं, ज्यों जाणै त्यौं निर्बाहि ॥ ७४ ॥
तुम बिन मेरे को नहीं, हम कौं राखणहार ।
जे तूँ राखै साइयाँ, तौ कोई न सक्कै मार ॥ ७५ ॥
सब जग छाडै हाथ थ, तुम जिनि छाडहु राम ।
नहिं कुछ कारिज जगत सौं, तुम हीं सेती काम ॥ ७६ ॥
(दादू) जाते जिव थैं तो डरूँ, जे जिव मेरा होइ ।
जिन यहु जीव उपाइया, सार करैगा सोइ ॥ ७७ ॥
(दादू) जिन कौं साईं पधरा[५], तिन बंका[६] नाहीं कोइ ।
सब जग रूठा क्या करै, राखणहारा सोइ ॥ ७८ ॥
(दादू) साचा साहिब सिर ऊपरैं, ततो[७] न लागै बाव ।
चरण कँवल की छाया रहै, कीया बहुत पसाव[८] ॥ ७९ ॥

---

(१) पक्ष पर । (२) इतना । (३) हवा । (४) खींच कर । (५) अनुकूल, सहायक ।
(६) टेढ़ा । (७) गरम । (८) दया ।

(दादू कहै) जे तूँ राखै साइयाँ, तो मारि न सक्कै कोइ।
बाल न बंका करि सकै, जे जग बैरी होइ॥ ८० ॥
दादू राखणहारा राखै, तिसैं कौण मारै।
उसे कौण डबोवै, जिसैं साईं तारै।
कहै दादू सो कबहुँ न हारै, जे जन साईं सँभारै॥ ८१ ॥
निर्भय बैठा राम जपि, कबहूँ काल न खाइ।
जब दादू कुंजर चढ़ै, तब सुनहा[1] झखि[2] जाइ॥ ८२ ॥
काइर कूकर कोटि मिलि, भौंकै अरु भागै।
दादू गरुवा गुरुमुखी, हस्ती नहिं लागै॥ ८३ ॥

॥ इति सूरा तन को अंग समाप्त ॥ २४ ॥

२५—काल को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः॥ १ ॥
काल न सूझै कंध पर, मन चितवै बहु आस।
दादू जिव जाणै नहीं, कठिन काल की पास[3]॥ २ ॥
(दादू) काल हमारे कंध चढ़ि, सदा बजावै तूर।
काल हरण करता पुरिष, क्यौं न सँभालै सूर॥ ३ ॥
जहँ जहँ दादू पग धरै, तहाँ काल का फंध।
सिर ऊपर साँधे[4] खड़ा, अजहुँ न चेतै अंध॥ ४ ॥
(दादू) काल गिरासन का कहिये, काल रहित कहि सोइ।
काल रहित सुमिरण सदा, बिना गिरासन होइ॥ ५[5] ॥

---

(१) कुत्ता। (२) झाँक। (३) फाँस। (४) कमान खींचे। (५) काल के खाजा तो सभी जीव हैं उन का क्या जिक्र, काल-रहित अर्थात काल के गिरास से बचे हुए वही जन हैं जो सदा सुमिरन में लौलीन रहते हैं।

दादू मरिये राम बिन, जीजै राम सँभाल।
अमृत पीवै आतमा, यौं साधू बंचै काल ॥ ६ ॥
दादू यहु घट काचा जल भर्‍या, बिनसत नाहीं बार।
यहु घट फूटा जल गया, समझत नहीं गँवार ॥ ७ ॥
फूटी काया जाजरी, नव ठाहर काणी[1]।
ता मैं दादू क्यौं रहै, जीव सरीखा पाणी ॥ ८ ॥
बाव भरी इस खाल का, झूठा गर्ब गुमान।
दादू बिनसै देखताँ, तिस का क्या अभिमान ॥ ९ ॥
(दादू) हम तौ मूए माहिं ह, जीवण कार भरम्म।
झूठे का क्या गर्बबा[2], पाया मुझ मरम्म ॥ १० ॥
यहु बन हरिया देखि करि, फूल्यौ फिरै गँवार।
दादू यहु मन मिरगला, काल अहेड़ी लार ॥ ११ ॥
सबहीं दीसै काल मुखि, आपै गहि करि दीन्ह।
बिनसै घट आकार का, दादू जे कुछ कीन्ह ॥ १२ ॥
काल कीट[3] तन काठ कौं, जुरा[4] जनम कूँ खाइ।
दादू दिन दिन जीव की, आव[5] घटंती जाइ ॥ १३ ॥
काल गिरासै जीव कौं, पल पल साँसै साँस।
पग पग माहैं दिन घड़ी, दादू लखै न तास ॥ १४ ॥
पग पलक की सुध नहीं, साँस सबद क्या होइ।
कर मुख माहैं मेलताँ, दादू लखै न कोइ ॥ १५ ॥
दादू काया कारवीं[6], देखत हीं चलि जाइ।
जब लग साँस सरीर में, राम नाम ल्यौ लाइ ॥ १६ ॥
दादू काया कारवीं, मोहिं भरोसा नाहिं।
आसण कुंजर सिरि छतर, बिनसि जाहिं षिण माहिं ॥१७॥

---

(१) छेददार। (२) गर्व, घमंड। (३) कीड़ा। (४) जरा-बुढ़ापा। (५) आयु, उमर। (६) पथिक, फ़ारसी में कारवाँ मुसाफिरों के झुण्ड को कहते हैं।

दादू काया कारवीं, पड़त न लागै बार ।
बोलणहारा महल में, सो भी चालणहार ॥ १८ ॥
दादू काया कारवीं, कदे न चालै संग ।
कोटि बरस जे जीवणा, तऊ होइला भंग ॥ १९ ॥
कहताँ सुनताँ देखताँ, लेताँ देताँ प्राण ।
दादू सो कत हूँ गया, माटी धरी मसाण ॥ २० ॥
सींगी नाद न बाजहीं, कत गये सो जोगी ।
दादू रहते मढ़ी में, करते रस भोगी ॥ २१ ॥
दादू जियरा जाइगा, यहु तन माटी होइ ।
जे उपज्या सो बिनसिहै, अमर नहीं कलि कोइ ॥ २२ ॥
दादू देही देखताँ, सब किसही की जाइ ।
जब लग साँस सरीर में, गोबिंद के गुण गाइ ॥ २३ ॥
दादू देही पाहुणी, हंस बटाऊ[1] माहिं ।
का जाणौं कब चालसी, मोहिं भरोसा नाहिं ॥ २४ ॥
दादू सब को पाहुणा, दिवस चारि संसार ।
औसरि औसरि सब चले, हम भी इहै बिचार ॥ २५ ॥
सब को बैठे पंथ सिरि, रहे बटाऊ होइ ।
जे आये ते जाहिंगे, इस मारग सब कोइ ॥ २६ ॥
बेग बटाऊ पंथ सिरि, अब बिलँब न कीजै ।
दादू बैठा क्या करै, राम जपि लीजै ॥ २७ ॥
संझ्या चलै उतावला[2], बटाऊ बनखँड माहिं ।
बरियाँ[3] नाहीं ढील की, दादू बेगि घरि जाहिं ॥ २८ ॥
दादू करह[4] पलानि करि, को चेतन चढ़ि जाइ ।
मिलि साहिब दिन देखताँ, साँझ पड़ै जिनि आइ ॥ २९ ॥

(१) पथिक । (२) जल्दी, तेज़ । (३) समय । (४) ऊँट ।

पंथ दुहेला[१] दूरि घर, संग न साथी कोइ ।
उस मारग हम जाहिंगे, दादू क्यौं सुख सोइ ॥ ३० ॥
लंघण खे लक घणा, कपर चाढ़ी चींह ।
अलाह पाँधी पंथ में, विहंदा ऊहे कींअ ॥ ३१[२] ॥
(दादू) हँसताँ रोवताँ पाहुणा, काहू छाडि न जाइ ।
काल खड़ा सिर ऊपरै, आवणहारा आइ ॥ ३२ ॥
(दादू) जोरा बैरी काल है, सो जीव न जानै ।
सब जग सूता नींदड़ी, इस तानै बानै[३] ॥ ३३ ॥
दादू करणी काल की, सब जग परलै होइ ।
राम बिमुख सब मरि गये, चेति न[४] देखै कोइ ॥ ३४ ॥
साहिब कौं सुमिरै नहीं, बहुत उठावै भार ।
दादू करणी काल की, सब परलै संसार ॥ ३५ ॥
सूता काल जगाइ करि, सब पैसैं मुख माहिं ।
दादू अचिरज देखिया, कोई चेतै नाहिं ॥ ३६ ॥
सब जीव बिसाहैं[५] काल कौं, करि करि कोटि उपाइ ।
साहिब कौं समझैं नहीं, यौं परलय ह्वै जाइ ॥ ३७ ॥
दादू कारण काल के, सकल सँवारैं आप ।
मीच बिसाहैं मरण कौं, दादू सोग सँताप ॥ ३८ ॥
दादू अमृत छाडि करि, बिषै हलाहल खाइ ।
जीव बिसाहै काल कौं, मूढ़ा मरि मरि जाइ ॥ ३९ ॥

---

(१) कठिन । (२) इस साखी को शोध कर सिन्ध के प्रसिद्ध विद्वान मास्टर झम्मटमल ने अर्थ लगाया है—लंघण = पार करना । लक = हल कर पार होने योग्य नदी के हिस्से । कपर = कराड़ा, घाटा । चाढ़ी = चढ़ाई । चींह = ऊँची अड़बड़ अलाह = ए खुदा । पाँधी = पथिक । विहंदा = बैठे, ठिठके । आहीन = हैं—अनेक घाटियाँ पार करने को हैं, चढ़ाई ऊँची और अड़बड़ है, पथिक जो रास्ते में हैं क्या चुप बैठ रहेंगे । (३) तीर । (४) एक लिपि और एक पुस्तक में "चेति न" की जगह "चेतनि" है । (५) मोल लें ।

निर्मल नाँव बिसारि करि, दादू जिव जंजाल।
नहीं तहाँ थैं करि लिया, मनसा माहैं काल ॥ ४० ॥
सब जग छेली[1] काल कसाई, कर्द[2] लिये कंठ काटै।
पंच तत्त की पंच पंखरी, खंड खंड करि बाँटै ॥ ४१ ॥
काल झाल में जग जलै, भाजि न निकसै कोइ।
दादू सरणैं साच कै, अभय अमर पद होइ ॥ ४२ ॥
सब जग सूता नींद भरि, जागै नाहीं कोइ।
आगै पीछै देखिये, परतषि परलै होइ ॥ ४३ ॥
ये सज्जन दुर्जन भये, अंति काल की बार।
दादू इन में को नहीं, बिपति बटावणहार ॥ ४४ ॥
संगी सज्जन आपणा, साथी सिरजनहार।
दादू दूजा को नहीं, इहि कलि इहि संसार ॥ ४५ ॥
ये दिन बीते चलि गये, वे दिन आये धाइ।
राम नाम बिन जीव कौं, काल गरासे जाइ ॥ ४६ ॥
जे उपज्या सो बिनसिहै, जे दीसै सो जाइ।
दादू निर्गुण राम जपि, निहचल चित्त लगाइ ॥ ४७ ॥
जे उपज्या सो बिनसिहै, कोई थिर न रहाइ।
दादू बारी आपणी, जे दीसै सो जाइ ॥ ४८ ॥
(दादू) सब जग मरि मरि जात है, अमर उपावणहार।
रहता रमता राम है, बहता सब संसार ॥ ४९ ॥
दादू कोई थिर नहीं, यहु सब आवै जाइ।
अमर पुरिष आपै रहै, कै साधू ल्यौ लाइ ॥ ५० ॥
यहु जग जाता देखि करि, दादू करी पुकार।
घड़ी महूरत चालणाँ, राखै सिरजनहार ॥ ५१ ॥

---

(१) बकरी। (२) छुरी।

(दादू) बिष सुख माहैं खेलताँ, काल पहूँत्या[1] आइ ।
उपजै बिनसै देखताँ, यहु जग यौंही जाइ ॥ ५२ ॥

राम नाम बिन जीव जे, केते मुए अकाल ।
मीच बिना जे मरत हैं, ता थैं दादू साल[2] ॥ ५३ ॥

सर्प सिंह हस्ती घणा, राकस भूत परेत ।
तिस बन में दादू पड़्या, चेतै नहीं अचेत ॥ ५४ ॥

पूत पिता थैं बीछुट्या, भूलि पड़्या किस ठौर ।
मरै नहीं उर फाटि करि, दादू बड़ा कठोर ॥ ५५ ॥

जे दिन जाइ सो बहुरि न आवै, आव[3] घटै तन छीजै ।
अंति काल दिन आइ पहूँत्या, दादू ढील न कीजै ॥ ५६ ॥

दादू औसर चलि गया, बरियाँ गई बिहाइ ।
कर छिटकें कहँ पाइये, जन्म अमोलिक जाइ ॥ ५७ ॥

दादू गाफिल ह्वै रह्या, गहिला हुआ गँवार ।
सो दिन चीति न आवई, सोवै पाँव पसार ॥ ५८ ॥

(दादू) काल हमारा कर गहे, दिन दिन खैंचत जाइ ।
अजहुँ जीव जागै नहीं, सोवत गई बिहाइ ॥ ५९ ॥

सूता आवै सूता जाइ, सूता खेलै सूता खाइ ।
सूता लेवै सूता देवै, दादू सूता जाइ ॥ ६० ॥

दादू देखत ही भया, स्याम बरण थैं सेत ।
तन मन जोबन सब गया, अजहुँ न हरि सौं हेत ॥ ६१ ॥

(दादू) झूठे के घर देखि करि, झूठे पूछे जाइ ।
झूठे झूठा बोलते, रहे मसाणों आइ ॥ ६२ ।

(दादू) प्राण पयाणा करि गया, माटी धरी मसाण ।
जालणहारे देखि करि, चेतैं नहीं अजाण ॥ ६३ ॥

---

(१) पहुँचा । (२) काँटा, कष्ट । (३) उमर ।

(दादू) केइ जाले केइ जालिये, केई जालण जाहिं।
केई जालण की करैं, दादू जीवण नाहिं ॥ ६४ ॥
केइ गाड़े केइ गाड़िये, केई गाड़न जाहिं।
केई गाड़न की करैं, दादू जीवण नाहिं ॥ ६५॥
(दादू कहै) उठ रे प्राणी जाग जिव, अपना सजन सँभाल।
गाफिल नींद न कीजिये, आइ पहूँत्या काल ॥ ६६ ॥
समर्थ की सरणा तजै, गहै आन की ओट।
दादू बलिवँत काल की, क्यों करि बंचै चोट ॥ ६७ ॥
अबिनासी के आसरै, अजरावर की ओट।
दादू सरणै साच के, कदे न लागै चोट ॥ ६८ ॥
मूसा भागा मरण थैं, जहाँ जाइ तहँ गोर[1] ।
दादू सर्ग पयाल सब, कठिन काल का सोर ॥ ६९ ॥
सब मुख माहैं काल के, माँड्या माया जाल।
दादू गोर मसाण में, झंखै सरग पयाल ॥ ७० ॥
दादू मँडा मसाण का, केता करै डफान[2]।
मिरतक मुरदा गोर का, बहुत करै अभिमान ॥ ७१ ॥
राजा राणा राव मैं, मैं खानों सिरि खान[3] ।
माया मोह पसारै एता, सब धरती असमान ॥ ७२ ॥
पंच तत्त का पूतला, यहु पिंड सँवारा।
मंदिर माटी मास का, बिनसत नहिं बारा ॥ ७३ ॥
हाड़ चाम का प्यंजरा, बिचि बोलणहारा।
दादू ता में पैसि करि, बहु किया पसारा ॥ ७४ ॥
बहुत पसारा करि गया, कुछ हाथि न आया।
दादू हरि की भगति बिन, प्राणी पछिताया ॥ ७५ ॥

(१) क़बर। (२) दंभ, गुमान। (३) सरदार।

माणस जल का बुदबुदा, पानी का पोटा।
दादू काया कोटि में, मैं बासी मोटा ॥ ७६ ॥
बाहरि गढ़ निर्भय करै, जीवे के ताईं।
दादू माहैं काल है, सो जाणै नाहीं ॥ ७७ ॥
(दादू) साचै मत साहिब मिलै, कपट मिलैगा काल।
साचै परम पद पाइये, कपट काया में साल ॥ ७८ ॥
मनहीं माहैं मीच है, सारौं के सिर साल।
जे कुछ ब्यापै राम बिन, दादू सोई काल ॥ ७९ ॥
(दादू) जेती लहरि बिकार की, काल कँवल में सोइ।
प्रेम लहरि सो पीव की, भिन्न भिन्न यौं होइ ॥ ८० ॥
(दादू) काल रूप माहैं बसै, कोई न जाणै ताहि।
यह कूड़ी[1] करणी काल है, सब काहू कूँ खाइ ॥ ८१ ॥
(दादू) बिष अमृत घट में बसै, दून्यूँ एकै ठाँव।
माया बिषै बिकार सब, अमृत हरि का नाँव ॥ ८२ ॥
(दादू) कहाँ महम्मद मीर था, सब नबियौं सिरताज।
सो भी मरि माटी हुआ, अमर अलह का राज ॥ ८३ ॥
केते मरि माटी भये, बहुत बड़े बलवंत।
दादू केते है गये, दाना देव अनंत ॥ ८४ ॥
(दादू) धरती करते एक डग, दरिया करते फाल।
हाँकौं परबत फाड़ते, सो भी खाये काल ॥ ८५ ॥
(दादू) सब जग कंपै काल थैं, ब्रह्मा बिसुन महेस।
सुर नर मुन जन लोक सब, सर्ग रसातल सेस ॥ ८६ ॥
चंद सूर धर पवन जल, ब्रह्मंड खँड परवेस।
सो काल डरै करतार थैं, जै जै तुम आदेस[2] ॥ ८७ ॥

---

(१) झूठी। (२) प्रणाम।

पवना पानी धरती अंबर, बिनसै रवि ससि तारा।
पंच तत्त सब माया बिनसै, मानिष[1] कहा बिचारा॥ ८८॥
दादू बिनसैं तेज के, माटी के किस माहिं।
अमर उपावणहार है, दूजा कोई नाहिं॥ ८९॥
प्राण पवन ज्यों पातला, काया करै कमाइ। (४-१९९)
दादू सब संसार में, क्यों हीं गह्या न जाइ॥ ९०॥
नूर तेज ज्यौं जोति है, प्राण प्यंड यौं होइ। (४-२००)
दिष्टि मुष्टि आवै नहीं, साहिब के बसि सोइ॥ ९१॥
मन हीं माहैं ह्वै मरै, जीवै मन हीं माहिं।
साहिब साखीभूत है, दादू दूसर नाहिं॥ ९२॥
आपै मारै आप कौं, आप आप कौं खाइ। (१२-६०)
आपै अपणा काल है, दादू कहि समझाइ॥ ९३॥
आपै मारै आप कौं, यहु जीव बिचारा। (१२-५९)
साहिब राखणहार है, सो हितू हमारा॥ ९४॥
दीसै माणस प्रत्यष काल।
ज्यौं करि त्यौं करि दादू टाल॥ ९५॥

॥ इति काल को अंग समाप्त॥ २५॥

२६—सजीवन को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः॥ १॥
(दादू) जे तूँ जोगी गुरमुखी, तौ लेना तत्त बिचारि।
गहि आवध[2] गुर ज्ञान का, काल पुरिष कौं मारि॥ २॥

---

(१) मनुष्य। (२) शस्त्र।

नाद बिंद सौं घट भरै, सो जोगी जीवै।
दादू काहे कौं मरै, राम रस्स पीवै॥ ३॥
साधू जन की बासना, सबद रहै संसार।
दादू आतम ले मिलै, अमर उपावणहार॥ ४॥
राम सरीखे ह्वै रहै, यहु नाहीं उनहार[1]।
दादू साधू अमर है, बिनसै सब संसार॥ ५॥
जे कोइ सेवै राम कौं, तौ राम सरीखा होइ।
दादू नाम कबीर ज्यौं, साखी बोलै सोइ॥ ६॥
अथि न आया सो गया, आया सो क्यौं जाइ।
दादू तन मन जीवताँ, आपा ठौर लगाइ॥ ७॥
पहिली था सो अब भया, अब सो आगैं होइ। (७-८)
दादू तीनौं ठौर की, बूझै बिरला कोइ॥ ८॥
जे जन बेधे प्रीति सौं, ते जन सदा सजीव।
उलटि समाने आप में, अंतर[2] नाहीं पीव॥ ९॥
(दादू कहै) सब रँग तेरे तैं रँगे, तूँ ही सब रँग माहिं।
सब रँग तेरे तैं किये, दूजा कोई नाहिं॥ १०॥
छूटै दंद तौ लागै बंद, लागै बंद तौ अमर कंद,
अमर कंद दादू आनन्द॥ ११॥
प्रश्न--कहँ जम जौरा भंजिये, कहाँ काल कौ डंड।
कहाँ मीच कौं मारिये, कहाँ जुरा सत खंड॥ १२॥
उत्तर--अमर ठौर अबिनासी आसन, तहाँ निरंजन लागि रहे।
दादू जोगी जुग जुग जीवै, काल ब्याल[3] सब सहजि गये॥ १३
रोम रोम लै लाइ धुनि, ऐसैं सदा अखंड।
दादू अबिनासी मिलै, तौ जम कौं दीजै डंड॥ १४॥

(१) सदृश। (२) भेद, दूरी। (३) साँप।

(दादू) जुरा काल जामण मरण, जहाँ जहाँ जिव जाइ ।
भगति परायण[1] लीन मन , ता कौं काल न खाइ ॥१५॥
मरणा भागा मरण थैं , दुक्खैं नाठा दुक्ख ।
दादू भय सौं भय गया , सुक्खैं छूटा सुक्ख ॥ १६ ॥
जीवत मिलै सो जीवते , मूएँ मिलि मरि जाइ ।
दादू दून्यूँ देखि करि , जहँ जाणौ तहँ लाइ ॥ १७ ॥
दादू साधन सब किया , जब उनमन लागा मन ।
दादू इस्थिर आतमा , यों जुग जुग जीवै जन ॥ १८ ॥
रहते सेती लागि रहु , तौ अजरावर होइ ।
दादू देखि बिचारि करि , जुदा न जीवै कोइ ॥ १९ ॥
जेती करणी काल की , तेती परिहरि प्राण ।
दादू आतम राम सौं , जे तूँ खरा सुजाण ॥ २० ॥
बिष अमृत घट में बसै , बिरला जाणै कोइ ।
जिन बिष खाया ते मुए , अमर अमी सौं होइ ॥ २१ ॥
दादू सब ही मरि रहे , जीवै नाहीं कोइ ।
सोई कहिये जीवता , जे कलि अजरावर होइ ॥ २२ ॥
देह रहै संसार में , जीव राम के पास । (१८-२७)
दादू कुछ ब्यापै नहीं , काल झाल दुख त्रास ॥ २३ ॥
काया की संगति तजै , बैठा हरि पद माहिं ।
दादू निर्भय है रहै , कोइ गुण ब्यापै नाहिं ॥ २४ ॥
दादू तजि संसार सब , रहै निराला होइ । (१८-२८)
अबिनासी कै आसिरे , काल न लागै कोइ ॥ २५ ॥
जागहु लागहु राम सौं , रैनि बिहानी जाइ ।
सुमिर सनेही आपणा , दादू काल न खाइ ॥ २६ ॥

(१ निमग्न, ग़र्क़ ।

(दादू) जागहु लागहु राम सौं, छाड़हु बिषय बिकार ।
जीवहु पीवहु राम रस , आतम साधन सार ॥ २७ ॥
मरै त पावै पीव कौं , जीवत बंचै[1] काल ।
दादू निर्भय नाँव ले , दून्यौं हाथि दयाल ॥ २८ ॥
दादू मरणे कौं चल्या , सजीवन के साथि ।
दादू लाहा मूल सौं , दून्यौं आये हाथि ॥ २९ ॥
दादू जाता देखिये , लाहा मूल गँवाइ ।
साहिब की गति अगम है, सो कुछ लखी न जाइ ॥ ३० ॥
साहिब मिलै त जीविये , नहीं त जीवै नाहिं ।
भावै अनँत उपाव करि , दादू मूवौं माहिं ॥ ३१ ॥
सजीवन साधै नहीं , ता थैं मरि मरि जाइ ।
दादू पीवै राम रस , सुख में रहै समाइ ॥ ३२ ॥
दिन दिन लहुड़े[2] हूँहिं सब , कहैं मोटा होता जाइ ।
दादू दिन दिन ते बढ़ैं , जे रहे राम ल्यौ लाइ ॥ ३३ ॥
ना जाणौं हाँजी चुप्प गहि, मेटि अग्नि की झाल । (१६-७०)
सदा सजीवन सुमिरिये , दादू बंचै काल ॥ ३४ ॥
(दादू) जीवत छूटै देह गुण , जीवत मुकता होइ ।
जीवत काटै कर्म सब , मुकति कहावै सोइ ॥ ३५॥
(दादू) जीवत ही दूतर[3] तिरै, जीवत लंघै पार ।
जीवत पाया जगत गुर , दादू ज्ञान बिचार ॥ ३६ ॥
जीवत जगपति कौं मिलै , जीवत आतम राम ।
जीवत दरसन देखिये , दादू मन बिसराम ॥ ३७ ॥
जीवत पाया प्रेम रस , जीवत पिया अघाइ ।
जीवत पाया स्वाद सुख , दादू रहे समाइ ॥ ३८ ॥

(१) ठगै । (२) उमर में छोटा ।(३) दुखिया ।

जीवत भागे भरम सब, छूटे करम अनेक।
जिवत मुकत सदगति भये, दादू दरसन एक ॥ ३९ ॥
जीवत मेला ना भया, जीवत परस न होइ।
जीवत जगपति ना मिले, दादू बूड़े सोइ ॥ ४० ॥
जीवत दूतर ना तिरे, जिवत न लंघे पार।
जीवत निर्भय ना भये, दादू ते संसार ॥ ४१ ॥
जीवत परगट ना भया, जीवत परचा नाहिं।
जिवत न पाया पीव कौं, बूड़े भौजल माहिं ॥ ४२ ॥
जीवत पद पाया नहीं, जीवत मिले न जाइ।
जीवत जे छूटे नहीं, दादू गये बिलाइ ॥ ४३ ॥
दादू छूटै जीवताँ, मूआँ छूटै नाहिं।
मूआँ पीछैं छूटिये, तौ सब आये उस माहिं ॥ ४४ ॥
मूआँ पीछैं मुकति बतावैं, मूआँ पीछैं मेला।
मूआँ पीछैं अमर अभै पद, दादू भूले गहिला ॥ ४५ ॥
मूआँ पीछैं बैकुंठ बासा, मुआँ सुरग पठावैं।
मूआँ पीछैं मुकति बतावैं, दादू जग बौरावैं ॥ ४६ ॥
मूआँ पीछैं पद पहुँचावैं, मूआँ पीछैं तारैं।
मूआँ पीछैं सद्गति होवैं, दादू जीवत मारैं ॥ ४७ ॥
मूआँ पीछैं भगति बतावैं, मूआँ पीछै सेवा।
मूआँ पीछैं संजम राखैं, दादू दोजग देवा ॥ ४८ ॥
(दादू) धरती क्या साधन किया, अंबर कौन अभ्यास।
रबि ससि किस आरंभ थैं, अमर भये निज दास ॥ ४९ ॥
साहिब मारे ते मुए, कोई जीवै नाहिं।
साहिब राखे ते रहे, दादू निज घर माहिं ॥ ५० ॥

जे जन राखे रामजी, अपणे अंगि लगाइ।
दादू कुछ व्यापै नहीं, जे कोटि काल झखि जाइ ॥ ५१॥

॥ इति संजीवन को अंग समाप्त ॥ २६ ॥

२७—पारिख को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥

(दादू) मन चित आतम देखिये, लागा है किस ठौर।
जहँ लागा तैसा जाणिये, का देखै दादू और ॥ २ ॥

दादू साध परेखिये, अंतर आतम देख।
मन माहैं माया रहै, कै आपै आप अलेख ॥ ३ ॥

दादू मन को देखि करि, पीछै धरिये नाँव।
अंतरगति की जे लखैं, तिन की मैं बलि जाँव ॥ ४ ॥

(दादू) बाहिर का सब देखिये, भीतर लख्या न जाय। (१४-३७)
बाहिर दिखावा लोक का, भीतर राम दिखाइ ॥ ५ ॥

यहु परख सराफी ऊपली, भीतर की यहु नाहिं।
अंतर की जाणैं नहीं, ता थैं खोटा[1] खाहिं ॥ ६ ॥

(दादू) जे नाहीं सो सब कहै, है सो कहै न कोइ।
खोटा खरा परेखिये, तब ज्यों था त्यों ही होइ ॥ ७ ॥

दह दिसि फिरै सो मन है, आवै जाइ सो पवन। (२०-४५)
राखणहारा प्राण है, देखणहारा ब्रह्म ॥ ८ ॥

घट की भानि[2] अनीति सब, मन की मेटि उपाधि।
दादू परिहर पंच की, राम कहै ते साध ॥ ९ ॥

---

(१) भटक – एक लिपि में "चोटा" है। (२) तोड़।

अरथ आया तब जाणिये, जब अनरथ छूटै।
दादू भाँडा भरम का, गिरि चौड़ै फूटै ॥ १० ॥
(दादू) दूजा कहिबे कौं रह्या, अंतर डार्‍या धोइ।
ऊपर की ये सब कहैं, माहिं न देखै कोइ ॥ ११ ॥
(दादू) जैसे माहैं जिव रहै, तैसी आवै बास।
मुखि बोलै तब जाणिये, अंतर का परकास ॥ १२ ॥
दादू ऊपर देखि करि, सब को राखै नाँव।
अंतरगति की जे लखैं, तिन की मैं बलि जाँव ॥ १३ ॥
तन मन आतम एक है, दूजा सब उनहार।
दादू मूल पाया नहीं, दुबिधा भरम बिकार ॥ १४ ॥
काया के सब गुण बँधे, चौरासी लख जीव।
दादू सेवग सो नहीं[1], जे रँग राते पीव ॥ १५ ॥
काया के बसि जीव सब, ह्वै गये अनँत अपार।
दादू काया बसि करै, निरंजन निराकार ॥ १६ ॥
पूरण ब्रह्म बिचारिये, तब सकल आतमा एक।
काया के गुण देखिये, तौ नाना बरण अनेक ॥ १७ ॥
मति बुधि बिबेक बिचार बिन, माणस पसू समान।
समझाया समझै नहीं, दादू परम[2] गियान ॥ १८ ॥
सब जिव प्राणी भूत है, साध मिलै तब देव।
ब्रह्म मिलै तब ब्रह्म है, दादू अलख अभेव ॥ १९ ॥

---

(१) नहीं=नहीं बँधे। (२) एक लिपि में "परम" की जगह "सिखवत" है।

दादू बंध्या जीव है, छूटा ब्रह्म समान।
दादू दोनौं देखिये, दूजा नाहीं आन ॥ २० ॥
करमों के बस जीव है, करम रहित सो ब्रह्म।
जहँ आतम तहँ परआतमा, दादू भागा भर्म ॥ २१ ॥
काचा उछलै ऊफरणै, काया हाँडी माहिं।
दादू पाका मिलि रहै, जीव ब्रह्म द्वै नाहिं ॥ २२ ॥
(दादू) बाँधे सुर नवाये बाजैं, एह्वा सोधि रु लीज्यौ।
राम सनेही साधू हाथैं, बेगा मोकलि दीज्यौ ॥ २३[1] ॥
प्राण जौहरी पारिखू, मन खोटा ले आवै।
खोटा मन के माथै मारै, दादू दूरि उड़ावै ॥ २४ ॥
सवरण हैं नैना नहीं, ता थैं खोटा खाहिं।
ज्ञान बिचार न ऊपजै, साच झूठ समझाहिं ॥ २५ ॥
दादू साचा लीजिये, झूठा दीजै डारि।
साचा सनमुख राखिये, झूठा नेह निवारि ॥ २६ ॥
साचे कौं साचा कहै, झूठे कौं झूठा।
दादू दुबिधा को नहीं, ज्यौं था त्यौं दीठा ॥ २७ ॥
(दादू) हीरे कौं कंकर कहैं, मूरिष लोग अजान।
दादू हीरा हाथि ले, परखैं साध सुजान ॥ २८ ॥
हीरा कौड़ी ना लहै, मूरिष हाथ गँवार। (४-१६१)
पाया पारिख जौहरी, दादू मोल अपार ॥ २९ ॥
अंधे हीरा परखिया, कीया कौड़ी मोल। (४-१६२)
दादू साधू जौहरी, हीरे मोल न तोल ॥ ३० ॥
सगुरा निगुरा परखिये, साध कहैं सब कोइ।
सगुरा साचा निगुरा झूठा, साहिब के दरि होइ ॥ ३१ ॥

---

(१) एह्वा = ऐसा ; सोधि = खोज ; मोकलि दीज्यौ = भेज दो।

(दादू) सगुरा सति संजम रहै, सनमुख सिरजनहार।
निगुरा लोभी लालची, भूँचै[1] बिषै बिकार ॥ ३२ ॥
खोटा खरा परेखिये, दादू कसि कसि लेइ।
साचा है सो राखिये, झूठा रहण न देइ ॥ ३३ ॥
खोटा खरा करि देवै पारिख, तो कैसैं बनि आवै।
खरे खोटे का न्याव नबेरै, साहिब के मन भावै ॥ ३४ ॥
(दादू) जिन्हैं ज्यौं कही तिन्हैं त्यों मानी, ज्ञान विचार न कीन्हा।
खोटा खरा जिव परखि न जाणौं, झूठ साँच करि लीन्हा ॥३५॥
जे निधि कहीं न पाइये, सो निधि घर घर आहि।
दादू महँगे मोल बिन, कोइ न लेवै ताहि ॥ ३६ ॥
खरी कसौटी कीजिये, बाणी बधती[2] जाइ।
दादू साचा परखिये, महँगे मोल बिकाइ ॥ ३७ ॥
(दादू) राम कसै सेवग खरा, कदे न मोड़ै अंग।
दादू जब लग राम है, तब लग सेवग संग ॥ ३८ ॥
दादू कसि कसि लीजिये, यहु ताते परिमान[3]।
खोटा गाँठि न बाँधिये, साहिब के दीवान[4] ॥ ३९ ॥
खरी कसौटी पीव की, कोइ बिरला पहुँचनहार।
जे पहुँचे ते ऊबरे, ताइ[5] किये ततसार ॥ ४० ॥
दुर्बल देही निर्मल बाणी। दादू पंथी ऐसा जाणी ॥ ४१ ॥
(दादू) साहिब कसै सेवग खरा, सेवग कौं सुख होइ।
साहिब करै सो सब भला, बुरा न कहिये कोइ ॥ ४२ ॥
दादू ठग आँबे रमैं, साधौं सौं कहियो।
हम सरणाई राम की, तुम नीके रहियो ॥ ४३ ॥

॥ इति पारिख को अंग समाप्त ॥ २७ ॥

---

(१) चाहै। (२) बढ़ती। (३) ताते परिमान = गरम यानी कड़ी कसौटी-पं० चं० प्र०। (४) कचहरी। (५) आग में तपा कर।

२८—उपजरिंग को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्वं साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥

(दादू) माया का गुण बल करै, आपा उपजै आइ। (२०-४४)
राजस तामस सातगी, मन चंचल ह्वै जाइ ॥ २ ॥

आपा नाहीं बल मिटै, त्रिबिधि तिमर नहिं होइ। (२०-४३)
दादू यहु गुण ब्रह्म का, सुन्नि समाना सोइ ॥ ३ ॥

(दादू) अनभै उपजी गुणमई, गुण हीं पैं लै जाइ।
गुण हीं सौं गहि बंधिया, छूटै कौन उपाइ ॥ ४ ॥

द्वै पष उपजी परिहरै, निर्पष अनभै सार।
एक राम दूजा नहीं, दादू लेहु बिचार ॥ ५ ॥

(दादू) काया ब्यावर गुण मई, मनमुख उपजै ज्ञान।
चौरासी लख जीव कौं, इस माया का ध्यान ॥ ६ ॥

आतम बोध बंझ का बेटा, गुरमुख उपजै आइ। (१-२१)
दादू पंगुल पंच बिन, जहाँ राम तहँ जाइ ॥ ७ ॥

आतम माहैं ऊपजै, दादू पंगुल ज्ञान। (१-२०)
किरतिम जाइ उलंघि करि, जहाँ निरंजन थान ॥ ८ ॥

आतम उपजि अकास की, सुणि धरती की बाट।
दादू मारग गैब का, कोई लखै न घाट ॥ ९ ॥

आतम बोधी अनभई, साधू निर्पष होइ।
दादू राता राम सौं, रस पीवेगा सोइ ॥ १० ॥

प्रेम भगति जब ऊपजै, निहचल सहज समाध।
दादू पीवै राम रस, सतगुर के परसाद ॥ ११ ॥

प्रेम भगति जब ऊपजै, पंगुल ज्ञान बिचार।
दादू हरि रस पाइये, छूटै सकल बिकार ॥ १२ ॥
(दादू) भगति निरंजन राम की, अबिचल अबिनासी। (४-२४४)
सदा सजीवन आतमा, सहजैं परकासी ॥ १३ ॥
(दादू) बंझ बियाई आतमा, उपजा आनँद भाव।
सहज सील संतोष सत, प्रेम मगन मन राव ॥ १४ ॥
जब हम ऊजड़ चालते, तब कहते मारग माहिं।
दादू पहुँचे पंथ चलि, कहैं यहु मारग नाहिं ॥ १५ ॥
पहिली हम सब कुछ किया, भरम करम संसार।
दादू अनभै ऊपजी, राते सिरजनहार ॥ १६ ॥
सोइ अनभै सोइ ऊपजी, सोई सबद ततसार। (१३-५४)
सुणताँ ही साहिब मिलै, मन के जाहिं बिकार ॥ १७ ॥
पारब्रह्म कह्या प्राण सौं, प्राण कह्या घट सोइ।
दादू घट सब सौं कह्या, बिष अमृत गुण दोइ ॥ १८ ॥
(दादू) मालिक कह्या अरवाह सौं, अरवाह कह्या औजूद।
औजूद आलम सौं कह्या, हुकम खबर मौजूद ॥ १९ ॥
दादू जैसा ब्रह्म है, तैसी अनभै उपजी होइ।
जैसा है तैसा कहै, दादू बिरला कोइ ॥ २० ॥

॥ इति उपजणि को अंग समाप्त ॥ २८ ॥

२९—दया निर्बैरता को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
आपा मेटै हरि भजै, तन मन तजै बिकार।
निरबैरी सब जीव सौं, दादू यहु मत सार ॥ २ ॥

(दादू) निरबैरी निज आतमा, साधन का मत सार।
दादू दूजा राम बिन, बैरी मंझि बिकार ॥ ३ ॥
निरबैरी सब जीव सौं, संत जन सोई।
दादू एकै आतमा, बैरी नहिं कोई ॥ ४ ॥
सब हम देख्या सोधि करि, दूजा नाहीं आन।
सब घर एकै आतमा, क्या हिंदू मूसलमान ॥ ५ ॥
(दादू) नारि पुरिष का नाँव धरि, इहि संसै भरम भुलान।
सब घट एकै आतमा, क्या हिंदू मूसलमान ॥ ६ ॥
(दादू) दोनौं भाई हाथ पग, दोनौं भाई कान।
दोनौं भाई नैन हैं, हिंदू मूसलमान ॥ ७ ॥
दादू के दूजा नहीं, एकै आतम राम। (१-१४१)
सतगुर सिर पर साध सब, प्रेम भगति बिसराम ॥ ८ ॥
दादू संसा आरसी, देखत दूजा होइ।
भरम गया दुबिध्या मिटी, तब दूसर नाहीं कोइ ॥ ९ ॥
किस सौं बैरी है रह्या, दूजा कोई नाहिं।
जिस के अंग थैं ऊपज्या, सोई है सब माहिं ॥ १० ॥
सब घटि एकै आतमा, जाणै सो नीका।
आपा पर में चीन्हि ले, दरसन है पी[१] का ॥ ११ ॥
काहे कौं दुख दीजिये, घटि घटि आतम राम।
दादू सब संतोषिये, यहु साधू का काम ॥ १२ ॥
काहे कौं दुख दीजिये, साँई है सब माहिं।
दादू एकै आतमा, दूजा कोई नाहिं ॥ १३ ॥
साहिब जी की आतमा, दीजै सुख संतोष।
दादू दूजा को नहीं, चौदह तीनौं लोक ॥ १४ ॥

(१) पति।

(दादू) जब प्राण पिछाणे आप कौं, आतम सब भाई ।
सिरजनहारा सबन का, ता सौं ल्यौ लाई ॥ १५ ॥
आतम राम बिचारि करि, घटि घटि देव दयाल ।
दादू सब संतोषिये, सब जीऊँ प्रतिपाल ॥ १६ ॥
(दादू) पूरण ब्रह्म बिचारि ले, दुती भाव करि दूर ।
सब घटि साहिब देखिये, राम रह्या भरपूर ॥ १७ ॥
दादू मंदिर काच का, मर्कट[1] सुनहा[2] जाइ ।
दादू एक अनेक है, आप आप कौं खाइ ॥ १८ ॥
आतम भाई जीव सब, एक पेट परिवार ।
दादू मूल बिचारिये, तौ दूजा कौन गँवार ॥ १९ ॥
तन मन आतम एक है, दूजा सब उनहार । (२७-१४)
दादू मूल पाया नहीं, दुबिधा भरम बिकार ॥ २० ॥
काया के बसि जीव सब, ह्वै गये अनँत अपार । (२७-१६)
दादू काया बसि करै, निरंजन निराकार ॥ २१ ॥
(दादू) सूका सहजैं कीजिये, नीला भानै नाहिं ।
काहे कौं दुख दीजिये, साहिब है सब माहिं ॥ २२[3] ॥
घट घट के उणहार सब, प्राण पुरिष[4] ह्वै जाइ ।
दादू एक अनेक ह्वै, बरतै नाना भाइ ॥ २३ ॥
आये एकंकार सब, साईं दिये पठाइ ।
दादू न्यारे नाँव धरि, भिन्न भिन्न ह्वै जाइ ॥ २४ ॥
आये एकंकार सब, साईं दिये पठाइ ।
आदि अंत सब एक है, दादू सहज समाइ ॥ २५ ॥

---

(१) बंदर । (२) कुत्ता । (३) सब बनस्पतियों में भी परमेश्वर है इस लिये हरे [नीला] पेड़ को न तोड़ै [भानै] सूखे [सूका] को काम में भले लावै— पं० चं० प्र० । (४) पं० चंद्रिका प्रसाद की पुस्तक में और एक लिपि में "परस" है ।

आतम देव अराधिये, बिरोधिये नहिं कोइ।
आराधें सुख पाइये, बिरोधें दुख होइ ॥ २६ ॥
ज्यौं आपै देखै, आप कों, यौं जे दूसर होइ।
तौ दादू दूसर नहीं, दुक्ख न पावै कोइ ॥ २७ ॥
दादू सम करि देखिये, कुंजर कीट समान।
दादू दुबिधा दूरि करि, तजि आपा अभिमान ॥ २८ ॥
पूरण ब्रह्म बिचारिये, तब सकल आतमा एक। (२७-१७)
काया के गुण देखिये, तौ नाना बरण अनेक ॥ २९ ॥
दादू अरस खुदाय का, अजरावर का थान।
दादू सो क्यौं ढाहिये, साहिब का नीसाण ॥ ३० ॥
(दादू) आप चिणावै देहुरा[1], तिस का करहि जतन।
परतषि परमेसुर किया, सो भानै जीव रतन ॥ ३१ ॥
मसीत सँवारी माणसौं[2], तिस कौं करै सलाम।
ऐन आप पैदा किया, सो ढाहै मूसलमान ॥ ३२ ॥
(दादू) जंगल माहैं जीव जे, जग थैं रहै उदास।
भयभीत भयानक रात दिन, निहचल नाहीं बास ॥ ३३ ॥
बाचा बंधी जीव सब, भोजन पाणी घास।
आतम ज्ञान न ऊपजै, दादू करहि बिनास ॥ ३४ ॥
काला मुँह करि करद[3] का, दिल थैं दूरि निवार।
सब सूरति सुबहान की, मुल्लाँ मुग्ध न मारि[4] ॥ ३५ ॥
गला गुसे का काटिये, मियाँ मनो कौं मारि।
पंचौं बिसमिल[5] कीजिये, ये सब जीव उबारि ॥ ३६ ॥
बैर बिरोधैं आतमा, दया नहीं दिल माहिं।
दादू मूरति राम की, ता कौं मारन जाहिं ॥ ३७ ॥

---

(१) मंदिर बनावै। (२) मसजिद आदमी की बनाई हुई। (३) छुरी। (४) मुल्लाजी दीन जीवों को मत मारो क्योंकि वह मालिक ही की अंश हैं। (५) जिबह।

कुल आलम यके दीदम, अरवाहे इख़लास।
बद अमल बदकार दूई, पाक याराँ पास ॥ ३८[1] ॥
(दादू) भावहीण जे पिरथमी, दया बिहूणा देस। (१६-६८)
भगति नहीं भगवंत की, तहँ कैसा परवेस ॥ ३६ ॥
काल झाल थैं काढ़ि करि, आतम अंगि लगाइ।
जीव दया यहु पालिये, दादू अमृत खाइ ॥ ४० ॥
(दादू) बुरा न बांछै जीव का, सदा सजीवन सोइ।
परलै बिषै बिकार सब, भाव भगति रत होइ ॥ ४१ ॥
ना को बैरी ना को मीत। दादू राम मिलण की चीत ॥४२॥

॥ इति दया निर्बैरता को अंग समाप्त ॥ २६ ॥

३०—सुन्दरी को अंग।

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
आरतिवंती सुन्दरी, पल पल चाहै पीव।
दादू कारण कंत के, तालाबेली जीव ॥ २ ॥
रतिवंती आरति करै, राम सनेही आव। (३-२)
दादू औसर अब मिलै, यहु बिरहनि का भाव ॥ ३ ॥
काहे न आवहु कंत घरि, क्यौं तुम रहे रिसाइ।
दादू सुंदरि सेज पर, जन्म अमोलिक जाइ ॥ ४ ॥
आतम अंतरि आव तूँ, याहै तेरी ठौर।
दादू सुन्दरि पीव तूँ, दूजा नाहीं और ॥ ५ ॥

---

(१) समस्त संसार को एक देखता हूँ, सब सूरतें एक ही की अंश हैं; कुकर्मी और खोटे जीवों के लिये दुभाँता है और भक्तजन मालिक की रक्षा में हैं। "पास" फ़ारसी शब्द का अर्थ "रक्षा" है न कि "समीप" जो पं० चं० प्र० ने लिखा है।

(दादू) पीव न देख्या नैन भरि, कंठि न लागी धाइ ।
सूती नहिं गल बाँहि दे , बिच हीं गई बिलाइ ॥ ६ ॥
सुरति पुकारै सुन्दरी , अगम अगोचर जाइ ।
दादू बिरहनि आतमा , उठि उठि आतुर धाइ ॥ ७ ॥
साइं कारण सेज सँवारी , सब थैं सुन्दर ठौर ।
दादू नारी नाह[1] बिन , आणि बिठाये और ॥ ८ ॥
कोई अवगुण मन बस्या , चित थैं धरी उतार ।
दादू पति बिन सुन्दरी , हाँढै[2] घर घर बार ॥ ९ ॥
प्रेम प्रीति इसनेह बिन , सब झूठे सिंगार ।
दादू आतम रत नहीं , क्यों मानै भरतार ॥ १० ॥
प्रेम लहरि की पालकी , आतम बैसै आइ । (४-२७८)
दादू खेलै पीव सौं , यहु सुख कह्या न जाइ ॥ ११ ॥
(दादू) हूँ सुख सूती नींद भरि , जागै मेरा पीव ।
क्यों करि मेला होइगा , जागै नाहीं जीव ॥ १२ ॥
सखी न खेलै सुन्दरी , अपणे पिव सौं जागि ।
स्वाद न पाया प्रेम का , रही नहीं उर लागि ॥ १३ ॥
पंच दिहाड़े[3] पीव सौं , मिलि काहे न खेलै ।
दादू गहिली सुन्दरी , क्यों रहै अकेलै ॥ १४ ॥
सखी सुहागनि सब कहैं , हूँ र[4] दुहागनि आहि ।
पिव का महल न पाइये , कहाँ पुकारौं जाइ ॥ १५ ॥
सखी सुहागनि सब कहैं , कंत न बूझै बात ।
मनसा बाचा करमणा , मुरछि मुरछि[5] जिव जात ॥ १६ ॥
सखी सुहागनि सब कहैं , पिव सौं परस न होइ ।
निसि बासर दुख पाइये , यहु बिथा न जाणै कोइ ॥ १७ ॥

---

(१) पति । (२) भटकै । (३) दिन । (४) हूँ र=मैं रे । (५) मुरझा मुरझा कर ।

सखी सुहागनि सब कहैं, प्रगट न खेलै पीव।
सेज सुहाग न पाइये, दुखिया मेरा जीव ॥ १८ ॥

पर पुरिषा सब परिहरै, सुन्दरि देखै जागि। (८-४०, ३०-३८)
अपणा पीव पिछाणि करि, दादू रहिये लागि ॥ १९ ॥

पुरिष पुरातन छाड़ि करि, चली आन के साथ।
सो भी सँग थैं बीछट्या, खड़ी मरोड़ै हाथ ॥ २० ॥

सुन्दरि कबहूँ कंत का, मुख सौं नाँव न लेइ।
अपणे पिव के कारणै, दादू तन मन देइ ॥ २१[१] ॥

नैन बैन करि वारणौं, तन मन प्यंड पराण।
दादू सुन्दरि बलि गई, तुम परि कंत सुजाण ॥ २२ ॥

तन भी तेरा मन भी तेरा, तेरा प्यंड पराण।
सब कुछ तेरा, तूँ है मेरा, यहु दादू का ज्ञान ॥ २३ ॥

पंच अभूषण पीव करि, सोलह सब ही ठाँव। (८-३२)
सुंदरि यहु सिंगार करि, लै लै पिव का नाँव ॥ २४ ॥

यहु ब्रत सुंदरि लै रहै, तौ सदा सुहागनि होइ। (८-३३)
दादू भावै पीव कौं, ता सम और न कोइ ॥ २५ ॥

सुन्दरि मोहै पीव कौं, बहुत भाँति भर्तार।
त्यौं दादू रिझवै राम कौं, अनंत कला कर्तार ॥ २६ ॥

(दादू) नीच ऊँच कुल सुन्दरी, सेवा सारी होइ। (८-३८)
सोई सोहागनि कीजिये, रूप न पीजै धोइ ॥ २७ ॥

नदिया नीर उलंघि करि, दरिया पैली[२] पार।
दादू सुन्दरि सो भली, जाइ मिलै भर्तार ॥ २८ ॥

---

(१) पतिव्रता स्त्री चाहे कितना ही दुख अपने पति के कारण सहना पड़े परन्तु उस का नाम जबान पर नहीं लाती यानी उस का गिला नहीं करती। यहाँ उस रिवाज से मतलब नहीं है जिस के अनुसार स्त्री अपने पति का नाम नहीं लेती। (२) पल्ली पार।

प्रेम लहरि गहि ले गई, आपणे प्रीतम पास।
आतम सुन्दरि पीव कौं, बिलसै दादूदास ॥ २६ ॥
सुंदरि कौं साईं मिल्या, पाया सेज सुहाग।
पिव सौं खेलै प्रेम रस, दादू मोटे भाग ॥ ३० ॥
दादू सुंदरि देह में, साईं कौं सेवै।
राती आपणे पीव सैं, प्रेम रस्स लेवै ॥ ३१ ॥
दादू निर्मल सुन्दरी, निर्मल मेरा नाह।
दून्यौं निर्मल मिलि रहे, निर्मल प्रेम प्रवाह ॥ ३२ ॥
तेज पुंज की सुन्दरी, तेज पुंज का कंत। (४-१०६)
तेज पुंज की सेज परि, दादू बन्या बसंत ॥ ३३ ॥
साईं सुन्दरि सेज परि, सदा एक रस होइ।
दादू खेलै पीव सौं, ता साँमे और न कोइ ॥ ३४ ॥

॥ इति सुन्दरि को अंग समाप्त ॥ ३० ॥

३१—कस्तूरिया मृग को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं. नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
(दादू) घटि कस्तूरी मिरग के, भरमत फिरै उदास।
अंतरगति जाणै नहीं, ता थैं सूँघै घास ॥ २ ॥
(दादू) सब घटि में गोबिन्द है, संगि रहै हरि पास।
कस्तूरी मृग में बसै, सूँघत डोलै घास ॥ ३ ॥
(दादू) जीव न जाणै राम कौं, राम जीव से पास।
गुर के सब्दौं बाहिरा, ता थैं फिरै उदास ॥ ४ ॥
(दादू) जा कारणि जग ढूँढिया, सो तौ घट ही माहिं।
मैं तैं पड़दा भरम का, ता थैं जाणत नाहिं ॥ ५ ॥

(दादू) दूरि कहैं ते दूरि हैं, राम रह्या भरपूरि।
नैनहुँ बिन सूझै नहीं, ता थैं रबि कत[1] दूरि ॥ ६ ॥
(दादू) ओढाँ होआ पाण खे, न लधाऊँ मंझ।
न जाताऊँ पाण खे, ताईं क्याउँ पंध ॥ ७[2] ॥
(दादू) कोई दौड़ै द्वारिका, केई कासी जाहि।
केई मथुरा कौं चलै, साहिब घट ही माहिं ॥ ८ ॥
(दादू) सब घटि माहैं रमि रह्या, बिरला बूझै कोइ।
सोई बूझै राम कौं, जे राम सनेही होइ ॥ ९ ॥
सदा समीप रहे सँग सनमुख, दादू लखै न गूझ। (१३-७९)
सुपिनैं ही समझै नहीं, क्यों करि लहै अबूझ ॥ १० ॥
(दादू) जड़ मति जिव जाणै नहीं, परम स्वाद सुख जाइ।
चेतनि समझै स्वाद सुख, पीवै प्रेम अघाइ ॥ ११ ॥
जागत जे आनँद करै, सो पावै सुख स्वाद।
सूतैं सुख ना पाइये, प्रेम[3] गँवाया बाद ॥ १२ ॥
(दादू) जिस का साहिब जागणाँ, सेवग सदा सचेत।
सावधान सनमुख रहै, गिरि गिरि पड़ै अचेत ॥ १३ ॥
दादू साईं सावधान, हम हीं भये अचेत।
प्राणी राखि न जाणहीं, ता थैं निर्फल खेत ॥ १४ ॥
(दादू) गोबिंद के गुण बहुत हैं, कोई न जाणै जीव।
अपनी बूझै आप गति, जे कुछ कीया पीव ॥ १५ ॥

॥ इति कस्तूरिया मृग को अंग समाप्त ॥ ३१ ॥

---

(१) कितनी। (२) इस सिंधी भाषा की साखी का अर्थ यह जान पड़ता है—वे आप [पाण] तहाँ [ओढाँ] रहे [होआ] अंतर में [मंझ] नहीं लगे [लधाऊँ = पाया] जिन्होंने अपने को [पाण खे] नहीं जाना [न जताऊँ] तिन्हों ने [ताईं] आप को (प्रीतम से) फ़ासले पर [पंध] किया [क्याऊँ]। (३) एक लिपि में "जन्म" है।

३२—निंद्या को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं , नमस्कार गुर देवतः ।
बंदनं सर्व साधवा , प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
साधू निर्मल मल नहीं , राम रमै सम भाइ ।
दादू अवगुण काढ़ि करि , जीव रसातल जाइ ॥ २ ॥
(दादू) जब ही साध सताइये, तब ही ऊँध पलट[1] ।
आकास धसै धरती खिसै , तीनों लोक गरक[2] ॥ ३ ॥
(दादू) जिहिं घर निंद्या साध की, सो घर गये समूल[3] ।
तिन की नीव न पाइये , नाँव न ठाँव न धूल ॥ ४ ॥
(दादू) निंद्या नाँव न लीजिये , सुपिनै हीं जिनि होइ ।
ना हम कहैं न तुम सुणो , हम जिनि भाखै कोइ ॥ ५ ॥
(दादू) निंद्या कीये नरक है, कीट पड़ैं मुख माहिं ।
राम बिमुख जामैं मर , भग मुख आवैं जाहिं ॥ ६ ॥
(दादू) निंदक बपुरा जिनि मरै, पर-उपगारी सोइ ।
हम कूँ करता ऊजला , आपण मैला होइ ॥ ७ ॥
(दादू) जिहिं बिधि आतम ऊधरै, परसै प्रीतम प्राण ।
साध सबद कूँ निन्दणा[4] , समझैं चतुर सुजाण ॥ ८ ॥
अणदेख्या अनरथ कहैं , कलि प्रथमी का पाप ।
धरती अंबर जब लगैं , तब लग करैं कलाप[5] ॥ ९ ॥
अणदेख्या अनरथ कहैं , अपराधी संसार ।
जदि तदि लेखा लेइगा , समरथ सिरजनहार ॥ १० ॥
दादू डरिये लोक थैं , कैसी धरैं उठाइ ।
अणदेखी अजगैब की , ऐसी कहैं बनाइ ॥ ११ ॥

---

(१) औंधा पलटा खाया । (२) डूबा । (३) जड़ से । (४) निन्दा का फल । (५) कष्ट ।

(दादू) अमृत कूँ बिष बिष कूँ अमृत, फेरि धरैं सब नाँव।
निर्मल मैला मैला निर्मल, जाहिंगे किस ठाँव॥ १२॥
(दादू) साचे कूँ झूठा कहैं, झूठे कूँ साचा।
राम दुहाई काढ़िये, कंठ थैं बाचा॥ १३॥
(दादू) झूठ न कहिये साच कूँ, साच न कहिये झूठ।
दादू साहिब मानै नहीं, लागैं पाप अखूट[1]॥ १४॥
(दादू) झूठ दिखावैं साच कूँ, भयानक भैभीत।
साचा राता साच सौं, झूठ न आनै चीत॥ १५॥
साचे कूँ झूठा कहै, झूठा साच समान।
दादू अचिरज देखिया, यहु लोगौं का ज्ञान॥ १६॥
(दादू) ज्यौं ज्यौं निंदै लोग बिचारा, त्यौं त्यौं छीजे रोग हमारा।
साधन सब घटि रहै समाई, झूठा जगत झूठ ह्वै जाई॥ १७[2]॥

॥ इति निंद्या को अंग समाप्त॥ ३२॥

३३—निगुणा[3] को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः॥ १॥
दादू चंदन बावना, बसै बटाऊ[4] आइ।
सुखदाई सीतल किये, तीन्यूँ ताप नसाइ॥ २॥
काल कुहाड़ा हाथि ले, काटन लागा ढाइ।
ऐसा यहु संसार है, डाल मूल ले जाइ॥ ३॥
सतगुर चंदन बावना, लागे रहैं भुवंग।
दादू बिष छाडैं नहीं, कहा करै सतसङ्ग॥ ४॥

---

(१) अटूट, अनगिनत। (२) यह कड़ी केवल एक लिपि में है, पं चंद्रिका प्रसाद की पुस्तक और दूसरी पुस्तकों में नहीं है। (३) गुण-रहित, निगुरा। (४) मुसाफिर।

दादू कीड़ा नरक का, राख्या चंदन माहिं।
उलटि अपूठा नरक में, चंदन भावै नाहिं॥ ५॥
सतगुर साध सुजान है, सिष का गुण नहिं जाइ।
दादू अमृत छाडि करि, बिषै हलाहल खाइ॥ ६॥
कोटि बरस लौं राखिये, बंसा[१] चंदन पास।
दादू गुण लीये रहै, कदे न लागै बास॥ ७॥
कोटि बरस लौं राखिये, पत्थर पानी माहिं।
दादू आड़ा अंग है, भीतर भेदै नाहिं॥ ८॥
कोटि बरस लौं राखिये, लोहा पारस सङ्ग।
दादू रोम का अंतरा, पलटै नाहीं अंग॥ ९॥
कोटि बरस लौं राखिये, जीव ब्रह्म सँगि दोइ।
दादू माहैं बासना, कदे न मेला होइ॥ १०॥
मूसा जलता देखि करि, दादू हंस दयाल।
मानसरोवर ले चल्या, पंखा काटै काल॥ ११[२]॥
दीसै माणस प्रत्यष काल। (२५-६५)
ज्यौं करि त्यौं करि दादू टाल॥ १२॥
सब जीव भुवंगम कूप में, साधू काढ़ै आइ।
दादू बिषहर बिष भरै, फिर ताही कौं खाइ॥ १३॥
दादू दूध पिलाइये, बिषहर बिष करि लेइ।
गुण का अवगुण करि लिया, ताही कौं दुख देइ॥ १४॥
बिन ही पावक जलि मुवा, जवासा जल माहिं।
दादू सूकै सींचताँ, तौ जल कौं दूषन नाहिं॥ १५॥

(१) बाँस। (२) कथा है कि एक चूहे का आग में जलता देख कर एक हंस ने दया करके रक्षा के लिए उसे अपने परों पर बैठा लिया और समुद्र पार ले उड़ा परन्तु चूहे ने अपने सुभाव बस परों को काट डाला जिस से दोनों समुद्र में गिर कर डूब गये।

सुफल बिरष परमारथी, सुख देवै फल फूल।
दादू ऊपरि बैसि करि, निगुणा काटै मूल ॥ १६ ॥
दादू सगुणा गुण करे, निगुणा मानै नाहिं।
निगुणा मरि निर्फल गया, सगुणा साहिब माहिं ॥ १७ ॥
निगुणा गुण मानै नहीं, कोटि करै जे कोइ।
दादू सब कुछ सौंपिये, सो फिर बैरी होइ ॥ १८ ॥
दादू सगुणा लीजिये, निगुणा दीजे डारि।
सगुणा सन्मुख राखिये, निगुणा नेह निवारि ॥ १९ ॥
सगुणा गुण केते करै, निगुणा न मानै एक।
दादू साधू सब कहैं, निगुणा नरक अनेक ॥ २० ॥
सगुणा गुण केते करै, निगुणा नाखै[1] ढाहि।
दादू साधू सब कहैं, निगुणा निरफल जाहि ॥ २१ ॥
सगुणा गुण केते करै, निगुणा न मानै कोइ।
दादू साधू सब कहैं, भला कहाँ थैं होइ ॥ २२ ॥
सगुणा गुण केते करै, निगुणा न मानै नीच।
दादू साधू सब कहैं, निगुणा के सिर मीच ॥ २३ ॥
साहिब जी सब गुण करै, सतगुर के घटि[2] होइ।
दादू काढ़ै काल मुखि, निगुणा न मानै कोइ ॥ २४ ॥
साहिब जी सब गुण करै, सतगुर माहैं आइ।
दादू राखै जीव दे, निगुणा मेटै जाइ ॥ २५ ॥
साहिब जी सब गुण करै, सतगुर का दे संग।
दादू परलै राखि ले, निगुणा न पलटै अंग ॥ २६ ॥
साहिब जो सब गुण करै, सतगुर आड़ा देइ।
दादू तारै देखताँ, निगुणा गुण नहिं लेइ ॥ २७ ॥

(१) डालै। (२) देह रूपी सतगुर द्वारा।

सतगुर दीया राम धन, रहै सुबुद्धि बताइ।
मनसा बाचा करमणा, बिलसै बितड़ै[1] खाइ ॥ २८ ॥
कीया कृत मेटै नहीं, गुण ही माहिं समाय।
दादू बधै[2] अनन्त धन, कबहूँ कदे न जाइ ॥ २९ ॥

॥ इति निगुणा को अंग समाप्त ॥ ३३ ॥

३४--बिनती को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
दादू बहुत बुरा किया, तुम्हैं न करणा रोस।
साहिब समाई का धनी, बंदे कौं सब दोस ॥ २ ॥
(दादू) बुरा बुरा सब हम किया, सो मुख कह्या न जाइ।
निर्मल मेरा साइयाँ, ता कौं दोस न लाइ ॥ ३ ॥
साईं सेवा चोर मैं, अपराधी बंदा।
दादू दूजा को नहीं, मुझ सरिखा गंदा ॥ ४ ॥
तिल तिल का अपराधी तेरा, रती रती का चोर।
पल पल का मैं गुनही[3] तेरा, बकसौ औगुण मोर ॥ ५ ॥
महा अपराधी एक मैं, सारे यहि संसार।
अवगुण मेरे अति घणे, अंत न आवै पार ॥ ६ ॥
बेमरजादा मिति नहीं, ऐसे किये अपार।
मैं अपराधी बापजी, मेरे तुम ही एक अधार ॥ ७ ॥
दोष अनेक कलंक सब, बहुत बुरा मुझ माहिं।
मैं कीये अपराध सब, तुम थैं छाना[4] नाहिं ॥ ८ ॥
गुनहगार अपराधी तेरा, भाजि कहाँ हम जाहिं।
दादू देख्या सोधि सब, तुम बिन कहिं न समाहिं ॥ ९ ॥

(१) बाँटै। (२) बढ़े। (३) गुनहगार। (४) छिपा।

आदि अंत लौं आइ करि, सुकिरत कछू न कीन्ह।
माया मोह मद मंछरा[1], स्वाद सबै चित दीन्ह ॥ १० ॥
काम क्रोध संसै सदा, कबहूँ नाँव न लीन।
पाखँड परपँच पाप में, दादू ऐसैं खीन[2] ॥ ११ ॥
(दादू) बहु बंधन सौं बन्धिया, एक बिचारा जीव।
अपणे बल छूटै नहीं, छोड़नहारा पीव ॥ १२ ॥
दादू बन्दीवान[3] है, तू बन्दीछोड़ दिवान।
अब जिनि राखौ बन्दि में, मीराँ[4] मेहरबान ॥ १३ ॥
दादू अंतरि कालिमाँ[5], हिरदै बहुत बिकार।
परगट पूरा दूरि करि, दादू करै पुकार ॥ १४ ॥
सब कुछ ब्यापै राम जी, कुछ छूटा नाहीं।
तुम थैं कहा छिपाइये, सब देखौ माहीं ॥ १५ ॥
सबल साल मन में रहै, राम बिसरि क्यौं जाइ।
यहु दुख दादू क्यौं सहै, साईं करौ सहाइ ॥ १६ ॥
राखणहारा राख तूँ, यहु मन मेरा राखि।
तुम बिन दूजा को नहीं, साधू बोलैं साखि ॥ १७ ॥
माया बिषय बिकार थैं, मेरा मन भागै।
सोई कीजे साइयाँ, तूँ मीठा लागै ॥ १८ ॥
साईं दीजे सो रती, तूँ मीठा लागै।
दूजा खारा होइ सब, सूता जिव जागै ॥ १९ ॥
जे साहिब कौं भावै नहीं, सो हम थैं जिनि होइ। (९-२)
सतगुर लाजै आपणा, साध न मानै कोइ ॥ २० ॥
ज्यौं आपै देखै आप कौं, सो नैना दे मुझ।
मीराँ मेरा मेहर करि, दादू देखै तुझ ॥ २१ ॥

(१) मत्सर = अहंकार। (२) क्षीण। (३) क़ैदी। (४) हे मालिक।
(५) कालिख।

दादू पछितावा रह्या, सके न ठाहर लाइ।
अरथि न आया राम के, यहु तन यौंही जाइ ॥ २२ ॥
कहताँ सुणताँ दिन गये, ह्वै कछू न आवा। (१३-१०७)
दादू हरि की भगति बिन, प्राणी पछितावा ॥ २३ ॥
सो कुछ हम थैं ना भया, जा परि रीझै राम। (१०-२६)
दादू इस संसार में, हम आये बेकाम ॥ २४ ॥
(दादू कहै) दिन दिन नौतम भगति दे, दिन दिन नौतम नाँव।
दिन दिन नौतम नेह दे, मैं बलिहारी जाँव ॥ २५ ॥
साईं सत संतोष दे, भाव भगति बेसास। (१६-५८)
सिदक सबूरी साच दे, माँगै दादूदास ॥ २६ ॥
साईं संसय दूरि करि, करि संक्या का नास।
भानि भरम दुबिध्या दुख दारुण, समता सहज प्रकास ॥२७॥
नाहीं परगट ह्वै रह्या, है सो रह्या लुकाइ।
सइयाँ पड़दा दूरि करि, तूँ ह्वै परगट आइ ॥ २८ ॥
(दादू) माया परगट ह्वै रही, यौं जे होता राम।
अरस परस मिलि खेलते, सब जिव सबही ठाम ॥ २६ ॥
दया करै तब अंगि लगावै, भगति अखंडित देवै।
दादू दरसन आप अकेला, दूजा हरि सब लेवै ॥ ३० ॥
(दादू) साध सिखावैं आतमा, सेवा दिढ़ करि लेहु।
पारब्रह्म सौं बीनती, दया करि दर्सन देहु ॥ ३१ ॥
साहिब साध दयाल हैं, हम हीं अपराधी।
दादू जीव अभागिया, अविध्या साधी ॥ ३२ ॥
सब जिव तोरैं राम सौं, पै राम न तोरै।
दादू काचे ताग ज्यौं, टूटै त्यौं जोरै ॥ ३३ ॥

फूटा फेरि सँवारि करि, ले पहुँचावै ओर[1]।
ऐसा कोई ना मिलै, दादू गई बहोर[2] ॥ ३४ ॥
ऐसा कोई ना मिलै, तन फेरि सँवारै।
बूढ़े थैं बाला करै, षै[3] काल निवारै ॥ ३५ ॥
गलै बिलै करि बीनती, एकमेक अरदास[4]।
अरस परस करुणा करै, तब दरवै दादूदास ॥ ३६ ॥
साईं तेरे डर डरूँ, सदा रहूँ भैभीत।
अजा सिंह ज्यौं भय घणा, दादू लीया जीत ॥ ३७ ॥
(दादू) पलक माहिं प्रगटै सही, जे जन करै पुकार।
दीन दुखी तब देखि करि, अति आतुर तिहिं बार ॥३८॥
आगै पीछै सँगि रहै, आप उठाये भार।
साध दुखी तब हरि दुखी, ऐसा सिरजनहार ॥ ३९ ॥
सेवग की रष्या करै, सेवग की प्रतिपाल।
सेवग की बाहर[5] चढ़ै, दादू दीन दयाल ॥ ४० ॥
(दादू) काय नाव समंद में, औघट बूड़ै आइ।
इहि औसर एक अगाध बिन, दादू कौन सहाइ ॥ ४१ ॥
यहु तन भेरा[6] भौजला, क्योंकरि लंघै तीर।
खेवट बिन कैसैं तिरै, दादू गहिर गँभीर ॥ ४२ ॥
प्यंड परोहन[6] सिंध जल, भौसागर संसार।
राम बिना सूझै नहीं, दादू खेवणहार ॥ ४३ ॥
यहु घट बोहिथ[6] धार में, दरिया वार न पार।
भैभीत भयानक देखि करि, दादू करी पुकार ॥ ४४ ॥

---

(१) किनारे। (२) समय। (३) क्षय। (४) प्रार्थना—"अरदास" फ़ारसी शब्द "अर्ज़दाश्त" का अपभ्रंश है। (५) सहायता, मदद। (६) बेड़ा, नाव।

कलिजुग घोर अँधार है, तिस का वार न पार।
दादू तुम बिन क्यौं तिरे, समथ सिरजनहार ॥ ४५ ॥
काया के वसि जीव है, कसि कसि बंध्या माहिं।
दादू आतम राम बिन, क्योंही छूटै नाहिं ॥ ४६ ॥
(दादू) प्राणी बंध्या पंच सूँ, क्योंही छूटै नाहिं।
नीधणि[1] आया मारिये, यहु जिव काया माहिं ॥ ४७ ॥
(दादू कहै) तुम बिन धणी न धोरी[2] जिव का, यौंही आवे जाइ।
जे तूँ साइं सत्ति है, तौ बेगा प्रगटेहु आइ ॥ ४८ ॥
नीधणि आया मारिये, धणी न धोरी कोइ।
दादू सो क्यों मारिये, साहिब सिर परि होइ ॥ ४९ ॥
राम बिमुख जुगि जुगि दुखी, लख चौरासी जीव।
जामै मरे जगि आवटै, राखणहारा पीव ॥ ५० ॥
समरथ सिरजनहार है, जे कुछ करै सो होइ।
दादू सेवग राखि ले, काल न लागै कोइ ॥ ५१ ॥
साइं साचा नाँव दे, काल झाल मिटि जाइ।
दादू निरभै ह्वै रहै, कबहूँ काल न खाइ ॥ ५२ ॥
कोई नहिं करतार बिन, प्राण उधारणहार।
जियरा दुखिया राम बिन, दादू इहि संसार ॥ ५३ ॥
जिन की रष्या तूँ करै, ते उबरे करतार।
जे तैं छाडे हाथ थैं, ते डूबे संसार[3] ॥ ५४ ॥
राखणहारा एक तूँ, मारणहार अनेक।
दादू के दूजा नहीं, तूँ आपै ही देख ॥ ५५ ॥
(दादू) जग ज्वाला जम रूप है, साहिब राखणहार।
तुम बिच अंतर जिनि पड़ै, ता थैं करूँ पुकार ॥ ५६ ॥

---

(१) बिना स्वामी के। (२) मुरब्बी, रत्तक। (३) एक लिपि में "संसार" की जगह "कालीधार" है।

जहँ तहँ बिषै बिकार थैं, तुम ही राखणहार।
तन मन तुम कौं सौंपिया, साचा सिरजनहार ॥ ५७ ॥
(दादू कहै) गरक[१] रसातल जात है, तुम बिन सब संसार।
कर गहि करता काढ़ि ले, दे अवलंब अधार ॥ ५८ ॥
(दादू) दौं लागी जग परजलै, घटि घटि सब संसार।
हम थैं कछू न होत है, तुम बरसि बुझावणहार ॥ ५९ ॥
(दादू) आतम जीव अनाथ सब, करतार उबारै।
राम निहोरा कीजिये, जिनि काहू मारै ॥ ६० ॥
अरस जिमीं औजूद में, तहाँ तपै अफताब।
सब जग जलता देखि करि, दादु पुकारै साध ॥ ६१ ॥
सकल भुवन सब आतमा, निरबिष करि हरि लेइ।
पड़दा है सो दूरि करि, कुसमल रहणि न देइ ॥ ६२ ॥
तन मन निर्मल आतमा, सब काहू की होइ।
दादू बिषै बिकार की, बात न बूझै कोइ ॥ ६३ ॥
समरथ धोरी[२] कंध धरि, रथ ले ओर निबाहि।
मारग माहिं न मेलिये, पीछैं बिड़द[३] लजाहि ॥ ६४ ॥
(दादू) गगन गिरै तब को धरै, धरती धर छंडै।
जे तुम छाडहु राम रथ, कंधा को मंडै ॥ ६५ ॥
(दादू) ज्यौं वै बरत गगन थैं टूटै, कहाँ धरणि कहँ ठाम। (७-३१)
लागी सुरत अंग थैं छूटै, सो कत जीवै राम ॥ ६६ ॥
अंतरजामी एक तूँ, आतम के आधार।
जे तुम छाडहु हाथ थैं, तौ कौण सँबाहणहार ॥ ६७ ॥
तेरा सेवग तुम लगैं, तुम्ह हीं माथैं भार।
दादू डूबत रामजी, बेगि उतारो पार ॥ ६८ ॥

---

(१) डूबा। (२) रक्षक। (३) प्रतिज्ञा।

सत छूटा सूरातन गया, बल पौरिष भागा जाइ।
कोई धीरज ना धरै, काल पहूँता आइ॥ ६९॥
संगी थाके संग के, मेरा कुछ न बसाइ।
भाव भगति धन लूटिये, दादू दुखी खुदाइ॥ ७०॥
दादू जियरे जक[1] नहीं, बिसराम न पावै।
आतम पाणी लूण ज्यों, ऐसैं होइ न आवै॥ ७१॥
(दादू) तेरी खूबी खूब है, सब नीका लागै।
सुन्दर सोभा काढ़ि ले, सब कोई भागै॥ ७२॥
तुम्ह हौ तैसी कीजिये, तौ छूटैंगे जीव।
हम हैं ऐसी जिनि करौ, मैं सदिकै जाऊँ पीव॥ ७३॥
अनाथौं का आसिरा, निरधाराँ आधार।
निर्धन का धन राम है, दादू सिरजनहार॥ ७४॥
साहिब दर दादू खड़ा, निसि दिन करै पुकार।
मीराँ मेरा मिहर करि, साहिब दे दीदार॥ ७५॥
दादू प्यासा प्रेम का, साहिब राम पिलाइ।
परगट प्याला देहु भरि, मिरतक लेहु जिवाइ॥ ७६॥
अल्ला आली नूर का, भरि भरि प्याला देहु।
हम कूँ प्रेम पिलाइ करि, मतवाला करि लेहु॥ ७७॥
तुम कूँ हम से बहुत हैं, हम कूँ तुस से नाहिं।
दादू कूँ जिनि परिहरौ, तूँ रहु नैनहुँ माहिं॥ ७८॥
तुम थैं तब हीं होइ सब, दरस परस दरहाल।
हम थैं कबहुँ न होइगा, जे बीतहिं जुग काल॥ ७९॥
तुम हीं थैं तुम्ह कूँ मिलै, एक पलक में आइ।
हम थैं कबहुँ न होइगा, कोटि कलप जे जाहिं॥ ८०॥

---

(१) सुख, शांति।

साहिब सूँ मिलि खेलते, होता प्रेम सनेह।
दादू प्रेम सनेह बिन, खरी दुहेली[1] देह ॥ ८१ ॥
साहिब सूँ मिलि खेलते, होता प्रेम सनेह।
परगट दरसन देखते, दादू सुखिया देह ॥ ८२ ॥
तुम कूँ भावै और कुछ, हम कुछ कीया और।
मिहर करो तौ छूटिये, नहीं त नाहीं ठौर ॥ ८३ ॥
मुझ भावै सो मैं किया, तुझ भावै सो नाहिं।
दादू गुनहगार है, मैं देख्या मन माहिं ॥ ८४ ॥
खुसी तुम्हारी त्यूँ करौ, हम तौ मानी हारि।
भावै बंदा बकसिये, भावै गहि करि मारि ॥ ८५ ॥
(दादू) जे साहिब लेखा लिया, तौ सीस काटि सूली दिया।
मिहरि मया करि फिलि[2] किया, तौ जीये जीये करि जिया ॥ ८६ ॥

॥ इति बिनती को अंग समाप्त ॥ ३४ ॥

३५—साखीभूत को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
वंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
सब देखणहारा जगत का, अंतरि पूरै साखि।
दादू स्याबति सो सही, दूजा और न राखि ॥ २ ॥
नाहीं थैं मुझ कौं कहै, अंतरजामी आप।
दादू दूजा धन्ध है, साचा मेरा जाप ॥ ३ ॥
करता है सो करैगा, दादू साखीभूत।
कौतिगहारा है रह्या, अणकरता अवधूत ॥ ४ ॥

(१) बोझैल। (२) फिल = बख्शिश—पं० चं० प्र०

आप अकेला सब करै, घट में लहरि उठाइ। (२१-२५)
दादू सिर दे जीव के, यूँ न्यारा ह्वै जाइ ॥ ५ ॥
आप अकेला सब करै, औरूँ के सिर देइ। (२१-२४)
दादू सोभा दास कूँ, अपणा नाँव न लेइ ॥ ६ ॥
(दादू) राजस करि उतपति करै, सातग करि प्रतिपाल।
तामस करि परलै करै, निर्गुण कौतिगहार ॥ ७ ॥
(दादू) ब्रह्म जीव हरि आतमा, खेलैं गोपी कान्ह[1]।
सकल निरंतरि भरि रह्या, साखीभूत सुजाण ॥ ८ ॥
(दादू) जामन मरणा सानि करि, यहु प्यंड उपाया।
साईं दीया जीव कूँ, ले जग में आया ॥ ९ ॥
बिष अमृत सब पावक पाणी, सतगुर समझाया।
मनसा बाचा कर्मणा, सोई फल पाया ॥ १० ॥
(दादू) जाणै बूझै जीव सब, गुण औगुण कीजै।
जानि बूझि पावकि पड़ै, दई दोस न दीजै ॥ ११ ॥
मन हीं माहैं ह्वै मरै, जीवै मन हीं माहिं। (२५-६२)
साहिब साखीभूत है, दादू दूसर नाहिं ॥ १२ ॥
बुरा भला सिर जीव के, होवै इसही माहिं।
दादू कर्ता करि रह्या, सो सिर दीजै नाहिं ॥ १३ ॥
कर्ता ह्वै करि कुछ करै, उस माहिं बँधावै।
दादू उस कौं पूछिये, उत्तर नहिं आवै ॥ १४ ॥
सेवा सुकिरति सब गया, मैं मेरा मन माहिं। (१५-५७)
दादू आपा जब लगैं, साहिब मानै नाहिं ॥ १५ ॥
(दादू) केई उतारैं आरती, केई सेवा करि जाहिं।
केई आइ पूजा करैं, केई खुलावैं खाहिं ॥ १६ ॥

---

(१) कन्हैया, कृष्ण।

केई सेवग ह्वै रहे, केइ साधू संगति माहिं।
केई आइ दरसन करैं, हम थैं होता नाहिं ॥ १७ ॥
ना हम करैं करावैं आरती, ना हम पियैं पिलावैं नीर।
करै करावै साइयाँ, दादू सकल सरीर ॥ १८ ॥
करै करावै साइयाँ, जिन दीया औजूद।
दादू बन्दा बीचि है, सोभा कूँ मौजूद ॥ १९ ॥
देवै लेवै सब करै, जिन सिरजे सब लोइ।
दादू बन्दा महल में, सोभा करै सब कोइ ॥ २० ॥
(दादू) जूवा खेलै जाणराइ, ता कौं लखै न कोइ।
सब जग बैठा जीति करि, काहू लिप्त न होइ ॥ २१ ॥

॥ इति साखीभूत को अंग समाप्त ॥ ३५ ॥

३६—बेली को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
(दादू) अमृत रूपी नाँव ले, आतम तत पोषै।
सहजैं सहज समाधि में, धरणी जल सोखै ॥ २ ॥
पसरै तीन्यूँ लोक में, लिपति नहीं धोखै।
सो फल लागै सहज में, सुंदर सब लोकै ॥ ३ ॥
दादू बेली आतमा, सहज फूल फल होइ।
सहज सहज सतगुर कहै, बूझै बिरला कोइ ॥ ४ ॥
जे साहिब सींचै नहीं, तौ बेली कुमिलाय।
दादू सींचै साइयाँ, तौ बेली बधती[1] जाइ ॥ ५ ॥
हरि तरवर तत आतमा, बेली करि बिस्तार।
दादू लागै अमर फल, कोइ साधू सींचणहार ॥ ६ ॥

---

(१) बढ़ती।

दादू सूका रूखड़ा, काहे न हरिया होइ।
आपै सींचै अमी रस, सूफल फलिया सोइ॥ ७॥
कदे न सूखै रूखड़ा, जे अमृत सींच्या आप।
दादू हरिया सो फलै, कछू न व्यापै ताप॥ ८॥
जे घट रोपै राम जी, सींचै अमी अघाइ।
दादू लागै अमर फल, कबहूँ सूकि न जाइ॥ ९॥
हरि जल बरिखै बाहिरा, सूकै काया खेत। (१५-१०७)
दादू हरिया होइगा, सींचणहार सुचेत॥ १०॥
(दादू) अमर बेलि है आतमा, खार समंदा माहिं।
सूकै खारे नीर सौं, अमर फल लागै नाहिं॥ ११॥
(दादू) बहु गुणवंती बेलि है, ऊगी कालर माहिं।
सींचै खारे नीर सौं, ता थैं निपजै नाहिं॥ १२॥
बहु गुणवंती बेलि है, मीठी धरती बाहि[१]।
मीठा पाणी सींचिये, दादू अमर फल खाइ॥ १३॥
अमृत बेली बाहिये[१], अमृत का फल होइ।
अमृत का फल खाइ करि, मुवा न सुणिये कोइ॥ १४॥
(दादू) बिष की बेली बाहिये, बिष ही का फल होइ।
बिष ही का फल खाइ करि, अमर नहीं कलि कोइ॥ १५॥
सतगुर संगति नीपजै, साहिब सींचणहार।
प्राण बिरष[२] पीवै सदा, दादू फलै अपार॥ १६॥
दया धर्म का रूखड़ा, सत सौं बधता जाइ।
संतोष सौं फूलै फलै, दादू अमर फल खाइ॥ १७॥

॥ इति बेली को अंग समाप्त ॥ ३६ ॥

---

(१) डालना। (२) वृक्ष।

३७—अबिहड़[1] को अंग

(दादू) नमो नमो निरंजनं, नमस्कार गुर देवतः।
बंदनं सर्व साधवा, प्रणामं पारंगतः ॥ १ ॥
(दादू) संगी सोई कीजिये, जे कलि अजरावर होइ।
ना वहु मरै न बीछुटै, ना दुख ब्यापै कोइ ॥ २ ॥
(दादू) संगी सोई कीजिये, जे इस्थिर इहि संसार।
ना वहु खिरै न हम खपैं, ऐसा लेहु बिचार ॥ ३ ॥
(दादू) संगी सोई कीजिये, सुख दुख का साथी।
दादू जीवण मरण का, सो सदा सँगाती ॥ ४ ॥
(दादू) संगी सोई कीजिये, जे कबहूँ पलटि न जाइ।
आदि अंत बिहड़ै नहीं, ता सन यहु मन लाइ ॥ ५ ॥
(दादू) माया बिहड़ै देखताँ, काया संग न जाइ। (१२-१५)
कृत्तम बिहड़ै बावरे, अजरावर ल्यौ लाइ ॥ ६ ॥
दादू अबिहड़ आप है, अमर उपावणहार।
अबिनासी आपै रहै, बिनसै सब संसार ॥ ७ ॥
दादू अबिहड़ आप है, साचा सिरजनहार।
आदि अंत बिहड़ै नहीं, बिनसै सब आकार ॥ ८ ॥
दादू अबिहड़ आप है, अबिचल रह्या समाइ।
निहचल रमिता राम है, जे दीसै सो जाइ ॥ ९ ॥
दादू अबिहड़ आप है, कबहूँ बिहड़ै नाहिं।
घटै बधै नहिं एक रस, सब उपजि खपै उस माहिं ॥१०॥
अबिहड़ अँग बिहड़ै नहीं, अपलट पलटि न जाइ।
दादू अघट एक रस, सब में रह्या समाइ ॥ ११ ॥

---

(१) जिस से बिछोहा न हो; अमर।

कबहुँ न बिहड़ै सो भला, साधू दिढ़-मति होइ। (१५-८६)
दादू हीरा एक रस, बाँधि गाँठड़ो सोइ॥ १२॥
जेते गुण ब्यापैं जीव कौं, तेते तैं तजै रे मन।
साहिब अपणे कारणे, भलो निबाह्यो पण[1]॥ १३॥

॥ इति अबिहड़ को अंग समाप्त॥ ३७॥

॥ इति दादू दयाल की साखी संपूर्ण समाप्त॥

(१) केवल एक लिपि और एक पुस्तक में साखी नं० १३ की दूसरी कड़ी पूरी दी है औरों में "भलो निबाह्यो पण" नहीं है।

आवश्यक सूचना

संतबानी पुस्तकमाला के उन महात्माओं की लिस्ट जिनकी जीवनी तथा बानियाँ छप चुकी हैं

कबीर साहिब का अनुराग सागर	गरीबदास जी की बानी
कबीर साहिब का बीजक	रैदास जी की बानी
कबीर साहिब का साखी-संग्रह	दरिया साहिब (बिहार) का दरिया सागर
कबीर साहिब की शब्दावली—चार भागों में	दरिया साहिब के चुने हुए पद और साखी
कबीर साहिब की ज्ञान-गुदड़ी, रेख़ते, झूलने	दरिया साहिब (मारवाड़ वाले) की बानी
कबीर साहिब की अखरावती	भीखा साहिब की शब्दावली
धनी धरमदास की शब्दावली	गुलाल साहिब की बानी
तुलसी साहिब (हाथरस वाले) भाग १ 'शब्द'	बाबा मलूकदास जी की बानी
तुलसी शब्दावली और पद्मसागर भाग २	गुसाईं तुलसीदास जी की बारहमासी
तुलसी साहिब का रत्नसागर	यारी साहिब की रत्नावली
तुलसी साहिब का घट रामायण—२ भागों में	बुल्ला साहिब का शब्दसार
दादू दयाल भाग १ 'साखी', -भाग २ "पद"	केशव दासजी की अमीघूँट
सुन्दरदास का सुन्दर बिलास	धरनीदास जी की बानी
पलटू साहिब भाग १ कुंडलियाँ । भाग २ रेख़ते, झूलने, सवैया, अरिल, कवित्त। भाग ३ भजन और साखियाँ।	मीराबाई की शब्दावली
	सहजोबाई का सहज-प्रकाश
	दयाबाई की बानी
जगजीवन साहब—२ भागों में	संतबानी संग्रह, भाग१ 'साखी', और भाग२ 'शब्द'
दूलनदास जी की बानी	
चरनदास जी की बानी, दो भागों में	अहिल्या बाई (अंग्रेजी पद में)

अन्य महात्मा जिनकी जीवनी तथा बानियाँ नहीं मिल सकीं

१ पीपा जी । २ नामदेव जी । ३ सदना जी । ४ सूरदास जी । ५ स्वामी हरिदास जी । ६ नरसी मेहता । ७ नाभा जी । ८ काष्ठजिह्वा स्वामी ।

प्रेमी और रसिक जनों से प्रार्थना है कि यदि ऊपर लिखे महात्माओं की असली जीवनी तथा उत्तम और मनोहर साखियाँ या पद जो संतबानी पुस्तकमाला के किसी ग्रन्थ में नहीं छपे हैं मिल सकें तो कृपा पूर्वक नीचे लिखे पते से पत्र-व्यवहार करें । इस कष्ट के लिए उनको हार्दिक धन्यवाद दिया जायगा । यदि पाठक महोदय ऊपर लिखे महात्माओं का असली चित्र भी प्राप्त कर सकें, तो उनसे प्रार्थना है कि नीचे लिखे पते से पत्र-व्यवहार करें । असली चित्र प्राप्ति के लिए उचित मूल्य या ख़र्च दिया जायगा ।

मैनेजर—संतबानी पुस्तकमाला, बेलविडियर प्रेस, प्रयाग ।